रूदाद
जमाअत इस्लामी

भाग-5

अनुवादक
एस. ख़ालिद निज़ामी

विषय-सूची

दीन क़ायम करने की राह	4
जमाअत इस्लामी के इजतिमाओं की कार्रवाई	5
✡ हल्क़ा पश्चिमी व मध्य भारत	5
रूदाद जमाअत इस्लामी	10
✡ जमाअत इस्लामी की दावत और मक़सद	10
दूसरा इजलास	69
हल्क़ा दक्षिणी भारत : ब-मक़ाम मद्रास	90
✡ मद्रास के इजतिमा के बाद नाख़ुशगवार वाक़िआत	99
इजतिमा हल्क़ा पूर्वी भारत (पटना)	147
इख़तितामी तक़रीर	170
पटना के इजतिमा में गाँधीजी के शरीक होने से पैदा होनेवाली ग़लतफ़हमियाँ	183

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

(अल्लाह के नाम से जो बड़ा कृपाशील, अत्यन्त दयावान् है।)

दीन क़ायम करने की राह

हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) एक नबी का हाल बयान कर रहे थे, वह मेरी निगाहों के सामने है। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया कि (दीन की) दावत देने के जुर्म में उस नबी को क़ौम के लोगों ने इतना मारा कि लहूलुहान कर दिया, और नबी का हाल यह था कि वे अपने चेहरे से ख़ून पोंछते जाते और कहते जाते—

> "ऐ अल्लाह! मेरी क़ौम के इस जुर्म को माफ़ कर दे (और अभी उनपर अज़ाब न भेज) इसलिए कि ये लोग अनजान हैं, असल हक़ीक़त को नहीं जानते।"

(हदीसः बुख़ारी, मुस्लिम)

जमाअत इस्लामी के इजतिमाओं की कार्रवाई

1366 हि० / 1947 ई०

(क़य्यिम, जमाअत इस्लामी की ओर से)

जनवरी 1947 ई० में एलान किया गया था कि इस साल जमाअत इस्लामी का आम इजतिमा पटना (बिहार) में आयोजित होगा। दक्षिणी और मध्य भारत के हलक़ावार इजतिमा आम इजतिमा के बाद फ़ौरन आयोजित किए जाएँगे और सिर्फ़ उत्तर-दक्षिणी भारत का हलक़ावार (क्षेत्रीय) इजतिमा अक्तूबर तक स्थगित रहेगा। पटना के आम इजतिमा के लिए 4, 5, 6 अप्रैल 1947 ई० की तारीख़ें भी मुक़र्रर कर दी गई थीं। मगर इसके बाद पंजाब, सूबा सरहत और बनारस में दंगे-फ़साद का सिलसिला शुरू हो गया जिसकी वजह से उत्तरी भारत के अधिकतर क्षेत्रों में बदअमनी फैल गई, यातायात के साधन ज़्यादातर बाक़ी नहीं रहे और जो बचे वे ख़तरे में पड़ गए और ग़ैर-महफ़ूज़ हो गए, जहाँ फ़साद न हुए वहाँ के हालात भी पुरसुकून और पुरअमन न रहे। इसलिए अमीर जमाअत ने मक़ामी अरकाने शूरा (स्थानीय सदस्य सलाहकार समिति) और दूसरे मक़ामी अरकाने जमाअत के मशविरे से फ़ैसला किया कि पटना (बिहार) का आम इजतिमा स्थगित कर दिया जाए और उसके बजाय हिन्दुस्तान के चारों हलक़ों के अलग-अलग सालाना हलक़ेवार इजतिमा अप्रैल और मई 1947 ई० में कर लिए जाएँ। इस तरह इस एलान के मुताबिक़ हर हलक़े के अलग-अलग इजतिमा आयोजित किए गए जिनकी विस्तृत कार्रवाई यह है—

हलक़ा पश्चिमी व मध्य भारत, मक़ाम : टोंक

17-18 अप्रैल 1947 ई०

हलक़ा पश्चिमी व मध्य भारत (राजपूताना, सी०पी०, बरार, बम्बई (मुम्बई) और मध्य भारत के राज्य) का इजतिमा टोंक में 17-18 अप्रैल

1947 ई० को आयोजित हुआ। इस इजतिमा में मर्कज़ से अमीर जमाअत और क़य्यिम जमाअत तशरीफ़ लाए। शहर बम्बई, कल्यान, जलगाँव, दोराजी, जूनागढ़, गोधरा, जामनेर, आकोला, बीना, झाँसी, इन्दौर, भोपाल, अलवर, ग्वालियर, बैतूल, जबलपुर, टोंक, सरोंज, नीमाहड़ा, जगपुर, सवाई माधोपुर और अजमेर से अरकान (Members) और हमदर्द हज़रात सवा सौ (125) से अधिक की संख्या में आए। इजतिमा की कार्रवाई का ब्योरा नीचे लिखा जा रहा है —

17 अप्रैल, दिन जुमेरात (वृहस्पतिवार)

इस दिन तीन इज्लास हुए। पहला इज्लास सुबह 8 बजे से 11 बजे दोपहर तक, दूसरा इज्लास ज़ुह्र की नमाज़ के बाद से अस्र की नमाज़ तक और तीसरा इज्लास अस्र से मग़रिब तक। ये तीनों इज्लास ख़ास (मुख्य) इज्लास थे इसलिए इजतिमागाह के बजाय क़यामगाह के हॉल में आयोजित किए गए। इन तीनों इज्लासों में अमीरे जमाअत ने हर मक़ाम के अरकान और हमदर्दों से मक़ामवार मुलाक़ात की और उनसे मक़ामी हालात तफ़्सील में मालूम किए। हर मक़ाम के हाल के मुताबिक़ आगे काम के लिए हिदायतें दीं। अमीरे जमाअत की इन हिदायतों का ख़ुलासा (सारांश) इस प्रकार है —

1. हल्क़ा राजपूताना, सी०पी०, मध्य भारत की रियासतों और बरार को बरार (प्रान्त) से अलग करके हैदराबाद की रियासत के क़य्यिम के हल्क़े (क्षेत्र) में शामिल कर दिया जाए और बाक़ी हल्क़ों के निम्नलिखित पाँच डिवीज़न (Division) बना दिए जाएँ —

- I. टोंक डिवीज़न जिसमें टोंक, सवाई माधोपुर, जयपुर, अलवर और अजमेर शामिल होंगे।
- II. झाँसी डिवीज़न जिसमें झाँसी, भोपाल, बीना, सरोंज, इटारसी और हरदा शामिल होंगे।
- III. इन्दौर डिवीज़न जिसमें इन्दौर, महू, रतलाम और उज्जैन वग़ैरह शामिल होंगे।
- IV. जूनागढ़ डिवीज़न जिसमें जूनागढ़,चोरदाड़, दोराजी वग़ैरह शामिल होंगे।
- V. जामनेर डिवीज़न जिसमें जामनेर, भोसावल, जलगाँव और मालेगाँव शामिल होंगे।

2. इन डिवीज़नों के अरकान और हमदर्द लोग आपस में गहरे रब्त और ताल्लुक़ पैदा करने की कोशिश करें। समय-समय पर आपस में मिलते और ख़त व किताबत करते रहें और कम से कम हर तीन महीने में एक बार किसी मुनासिब जगह पर सह-माही (त्रैमासिक) इजतिमा आयोजित करके अपने पिछले कामों का जाइज़ा लें और आइन्दा मुनज़्ज़म (सुनियोजित) कामों के लिए प्रोग्राम बना लिया करें। फ़िर ऐसी सूरतें सोंचे और तदबीरें अपनाएँ जिनसे आपसी सहयोग में आसानी हो और आपस में ज़्यादा से ज़्यादा एकता पैदा हो।

3. इस पूरे हल्के (बरार को छोड़कर) के इंचार्ज और क़य्यिम जनाब मुहम्मद यूसुफ़ सिद्दीक़ी (निकट मसजिद ग़ौल, मुहल्ला क़ाफ़िला, टोंक, राजस्थान) बदस्तूर रहेंगे और उपरोक्त डिवीज़नों में डिवीज़नल इजतिमाआत के इंचार्ज (Incharge) क्रमानुसार जनाब मुहम्मद यूसुफ़ सिद्दीक़ी साहब, जनाब अफ़ज़ल हुसैन साहब (गवर्नमेंट नॉरमल स्कूल, झाँसी), मौलाना मुहम्मद रफ़ी साहब (मुहल्ला मल्हार पलटन, मकान नं० 3, इन्दौर सिटी), हकीम अब्दुल वाहिद साहब (मुहल्ला मुल्लावाड़ा, जूनागढ़) और जनाब ख़ुरशीद अहमद ज़ुबैरी साहब (जामनेर ज़िला, पूर्वी ख़ानदेश) होंगे।

तमाम मक़ामी जमाअतें, हमदर्दों के हल्क़े, मुंफ़रिद अरकान और हमदर्द अपनी माहवार (मासिक) रिपोर्टें और डिवीज़नों के इंचार्ज सह-माही (त्रैमासिक) इजतिमाआत की रिपोर्टें मर्कज़ में और अपने हल्क़े (क्षेत्र) के क़य्यिम जनाब मुहम्मद यूसुफ़ साहब को भेजा करें।

4. हर डिवीज़न के अरकान और हमदर्द[1] जल्द से जल्द अपना पहला इजतिमा आयोजित करके दो-दो, तीन-तीन आदमियों के वफ़्द (प्रतिनिधि मंडल) बना लें और वे प्रतिनिधि-मंडल अपनें आस-पास की बस्तियों में जाना शुरू कर दें। मुमकिन हद तक आस-पास की बस्तियों के हर पढ़े-लिखे इनसान (मुस्लिम व ग़ैर-मुस्लिम) तक अपना लिट्रेचर पहुँचा दिया जाए और कोशिश की जाए कि हर बस्ती में कम-से-कम एक-एक आदमी ऐसा मिल जाए जो इस भलाई के काम में हमारा साथ अमलन देने के लिए खड़ा हो जाए। इस काम के लिए रब्त और ताल्लुक़ पैदा करने का इन्फ़िरादी (व्यक्तिगत) तरीक़ा ही अपनाया जाए। इससे पैदा होनेवाले ताल्लुक़ मज़बूत और मुस्तक़िल होते हैं।

1. यहाँ और दूसरी जगहों पर हमदर्द का शब्द उन लोगों के लिए प्रयोग किया गया है जो हमारे कामों में अमलन हिस्सा लेते हैं और हमारे मसलक (नियम) को इस हद तक क़बूल कर चुके हैं कि ज़बान से भी और अमल से भी जमाअत की सही नुमाइंदगी कर सकेंगे।

इन वफ़ूद (प्रतिनिधि-मंडलों) के सिलसिले में हर रुक्न और हमदर्द से लाज़मन वक़्त लिया जाए। लेकिन यह वक़्त इतना और ऐसा होना चाहिए जो वह आसानी से दे सकें। जो आदमी महीने में एक ही दिन दे सकता हो उसके एक ही दिन को फ़िलहाल काफ़ी समझा जाए, लेकिन यह वक़्त हर महीने बाक़ायदा लिया जाना चाहिए।

5. जहाँ-जहाँ अरकान और हमदर्द मौजूद हैं उनको चाहिए कि अपने यहाँ लाइब्रेरी या गश्ती लाइब्रेरी और मक्तबे का इन्तिज़ाम करें ताकि लिट्रेचर फैलाने में ज़्यादा से ज़्यादा आसानी हो और जो लोग किताबें ख़रीदना चाहें, वे आसानी से ख़रीद सकें।

6. दूसरी मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम जमाअतों से इख़्तिलाफ़ के मामले में बहुत एहतियात बरती जाए। उनके कारकुनों में से जो जितना भी हमारे साथ चल सकता हो और चलने के लिए तैयार हो, उसे ज़रूर साथ लिया जाए, मगर उसे इस सिलसिले में भी किसी ग़लतफ़हमी में न रखा जाए कि हमारे और उसकी जमाअत की नीति और काम के तरीक़े में उसूलन क्या फ़र्क़ है।

7. आर्थिक समस्याओं को हमारे अरकान के रास्ते में रुकावट नहीं बनना चाहिए क्योंकि हम अपने अरकान को फ़िलहाल कोई ऐसा प्रोग्राम नहीं दे रहे हैं जिसके लिए उन्हें कोई ज़्यादा अलग वक़्त देना पड़े। इस वक़्त अपने अरकान से हमारी माँग सिर्फ़ यह है कि वे, जिस हाल और जिस काम में भी हों, सिर से पैर तक इस्लाम के नुमाइन्दे और उसकी शिक्षाओं के पाबन्द हों। घर में हों या बाज़ार में, मस्जिद में हों या कारोबार में, हर जगह उनमें यह एहसास मौजूद रहे कि वे मुसलमान हैं और उन्हें अपने हर अमल और हरकत का अल्लाह के सामने हिसाब देना है।

18 अप्रैल, दिन जुमा

यह खुला इज्लास था जो 8 बजे सुबह से 11 बजे दोपहर तक जारी रहा। शरीक लोगों की तादाद 300 (तीन सौ) से ज़्यादा थी। इसकी शुरुआत अमीरे जमाअत की इस इफ़तिताही तक़रीर (Inaugral Speech) से हुई —

अल्लाह की तारीफ़ और प्रशंसा के बाद फ़रमाया —

हज़रात! हमारी इस जमाअत का जो कुछ मक़सद है उसको बयान करने के लिए दूसरी जगहों के लिए तो मुमकिन है कि लम्बी-चौड़ी तक़रीर की ज़रूरत

हो, लेकिन टोंक के लोगों के सामने इसे बयान करने के लिए किसी लम्बी तक़रीर की ज़रूरत नहीं। यहाँ तो यह कह देना काफ़ी है कि हमारा मक़सद वही है जिसके लिए हज़रत सैयद अहमद शहीद खड़े हुए थे। यह जगह वही है जहाँ हज़रत ममदूह ने अपने काम की तैयारी की, और फिर यही वह जगह है जहाँ उनके लुटे हुए क़ाफ़िले ने आकर पनाह ली थी। हालाँकि इस वाक़िआ को सौ साल गुज़र चुके हैं लेकिन उन बुज़ुर्गों के आसार अभी तक यहाँ मौजूद हैं और उनके कारनामों की दास्तानें भी बहुत-से ज़ेहनों में अब तक मौजूद और बाक़ी होंगी। हालाँकि हमारी शख़्सियतों का उनकी शख़्सियतों से कोई मुक़ाबला नहीं। वे पाक हस्तियाँ इतिहास के पन्नों में अपनी सीरत (चरित्र) और काम की वह छाप छोड़ गई हैं कि दुनिया में एक बार फिर सहाबा किराम (रज़ि०) की याद ताज़ा हो गई। हमारा उनसे क्या मुक़ाबला? लेकिन हमारी कोशिश और ख़ाहिश यही है कि इसी काम को जो उन्होंने किया और जिसके लिए उन्होंने अपना सब कुछ लुटा दिया, और जिसे करना हर मुसलमान का फ़र्ज़ है, अपनी हैसियत और ताक़त के मुताबिक़ करने की कोशिश करें। इसी मक़सद के लिए हमारी यह जमाअत क़ायम हुई है और इसी काम में अपने साथियों का जाइज़ा लेने और नए साथियों की तलाश में हम यहाँ आपके शहर में आए हैं।

हमारे इजतिमाआत का मक़सद यह नहीं होता कि अपने काम का इश्तिहार दिया जाए, बल्कि यह कि अपने कारकुनों को समय-समय पर जमा करके उनके काम का जाइज़ा लें, कमियों को मालूम करके उनको दूर करने की कोशिश करें और आगे काम का नक़्शा बना लें। इसके साथ ही यह मक़सद भी होता है कि मक़ामी लोगों को अपने काम से वाक़िफ़ कराएँ ताकि अल्लाह के जो बन्दे इस काम को करना चाहते हों वे हमारे काम को देखें और समझें और अगर उनका दिल गवाही दे और मुत्मइन हो तो हमारा साथ दें।

कल सारा दिन हम अपने जमाअती और इन्तिज़ामी कामों में मशग़ूल रहे। आज आप लोगों को तकलीफ़ दी है कि आप भी हमारे काम को मालूम करें। मैं ज़्यादा कुछ कह नहीं सकता क्योंकि मैं बीमार और बहुत तक्लीफ़ में हूँ और सिर्फ़ फ़र्ज़ के एहसास और ज़रूरत की वजह से इस हाल में यहाँ तक आ गया हूँ। जो कुछ मुझे कहना है वह इन्शा-अल्लाह शाम के इज्लास में कहूँगा। अब आप हमारी जमाअत के क़य्यिम से जमाअत के साल भर के कामों की रिपोर्ट सुनिए।

इसके बाद क़ैय्यिम जमाअत ने जमाअत की सालाना रिपोर्ट पेश की जो आगे दी जा रही है।

रूदाद जमाअत इस्लामी

(1365-66 हि० / 1946-47 ई०)

अल-हमदु-लिल्लाहि रब्बिल आलमीन। वस्सलातु वस्सलामु अला रसूलिहिल करीम। व अला आलिही व असहाबिही अज-मईन।

अमीरे जमाअत, प्यारे साथियो, बहनो और भाइयो!

मैं आपकी ख़िदमत में इस वक़्त इसलिए हाज़िर हुआ हूँ कि जमाअत इस्लामी की पिछली साल की रूदाद आपके सामने पेश कर दूँ। लेकिन हमने इस इजतिमा में अपने अरकान और क़रीबी हमदर्दों के अलावा अपने उन मुस्लिम व ग़ैर-मुस्लिम भाइयों को भी शरीक होने की दावत दी है जो अभी हमसे पूरी तरह वाक़िफ़ (परिचित) नहीं हैं, मगर हमारे काम को क़रीब से देखने और समझने की ख़ाहिश रखते हैं, और ऐसे बहुत-से दोस्त आए भी हैं, इसलिए यह ज़रूरी है कि जमाअत की रूदाद पेश करने से पहले मैं जमाअत की दावत और मक़सद को भी मुख़्तसर लफ़्ज़ों में बयान कर दूँ ताकि नए दोस्तों को भी इस इजतिमा की कार्रवाई समझने और हमारे सामने जो काम है उसको जानने का ज़्यादा से ज़्यादा मौक़ा मिले।

जमाअत इस्लामी की दावत और मक़सद

विज्ञान और सभ्यता के आधुनिक साधनों और यातायात के मौजूदा ज़रियों ने दुनिया के विभिन्न देशों को एक-दूसरे से इतना क़रीब कर दिया है और आपस में इस तरह मिला दिया है कि वे सारी भौगोलिक और प्राकृतिक (क़ुदरती) हदबन्दियाँ ख़त्म हो गई हैं जो अब तक अलग-अलग देशों और उनमें बसनेवाली क़ौमों को एक-दूसरे से अलग किए हुए थीं। इस वक़्त ऐसा मालूम होता है मानो पूरी ज़मीन एक देश बन गई है और वे टुकड़े जिन्हें हम अलग-अलग देश समझते थे इस नए मुल्क के सूबे या ज़िले हैं। अधिक सभ्य (Civilized) देश तो एक-दूसरे के इतने क़रीब हो गए हैं कि वैसा क़रीब होना और आपस का मेल-जोल पिछले ज़माने के सभ्य से सभ्य देशों के विभिन्न ज़िले

क्या, उन ज़िलों की विभिन्न तहसीलों में भी नहीं पाया जाता था और इसके मुक़ाबले में असभ्य (Un-civilized) देशों के ज़्यादातर हिस्सों में अब भी नहीं पाया जाता। विभिन्न देशों और क़ौमों के लोग ज़रूरत के वक़्त एक जगह इस तरह जमा हो जाते हैं जिस तरह एक मुहल्ले में बसनेवाले लोग अपने-अपने घरों से निकलकर बाहर गली में जमा हो जाते हैं।

इस तहज़ीबी और इल्मी तरक़्क़ी और आपस के मेल-मिलाप का क़ुदरती नतीजा तो यह होना चाहिए था कि देशों और देशों में, क़ौमों और क़ौमों में मुहब्बत, भाईचारे का बरताव, भलाई, मदद और सहयोग के जज़्बात ज़्यादा से ज़्यादा पैदा होते और अख़लाक़ व इनसानियत दूसरे सारे हैवानी जज़्बात पर ग़ालिब आ जाते, लेकिन हम देखते यह हैं कि इसके बिल्कुल विपरीत विभिन्न देश और कौमें एक-दूसरे को फाड़ खाने और मलियामेट करने पर इस तरह तुले हुए हैं मानो कि वे भूखे भेड़िये हैं जिनको भौगोलिक हदबन्दियों की लोहे की सलाख़ों ने इस दुनिया के चिड़ियाघर के अलग-अलग भागों में बन्द कर रखा था और अब उन सलाख़ों के टूटते ही वे एक-दूसरे पर टूट पड़े हैं।

इस स्थिति को देखकर सारे होशमन्द और इनसानों के सच्चे ख़ैरख़ाह लोगों को लाज़िमी तौर पर सोचना चाहिए और जगह-जगह वे सोच भी रहे हैं कि आख़िर ऐसा क्यों है? और इसकी क्या वजह है कि क़ौम हो या एक आदमी, जो जितना ज़्यादा सभ्य (Civilized), तरक़्क़ीयाफ़्ता (Developed) और देखने में देवता-सा नज़र आता है वह उतना ही ज़्यादा इनसानी ख़ूबियों से ख़ाली और अपनी सह-जातियों के लिए कुत्तों से ज़्यादा ख़तरनाक और वहशी-दरिन्दा साबित हो रहा है?

उनके व्यक्तिगत कारनामों, इजतिमाई प्रोग्रामों और अन्दरूनी और बाहरी पॉलीसियों को देखकर गुमान होने लगता है कि शायद सभी जंगली चीते और ख़ूँख़ार दरिन्दे हैं जो अच्छे-अच्छे कपड़े पहनकर तहज़ीबी वसायल (सांस्कृतिक साधनों) और हुकूमत की गद्दियों पर क़ब्ज़ा किए हुए हैं।

इस विश्वव्यापी ख़राबी और इनसानी रोग की जड़ तलाश करने के लिए आप थोड़ा-सा ग़ौर करेंगे तो आपको यह साफ़ तौर पर मालूम हो जाएगा कि यह सारा बिगाड़ उन ग़लत फ़िक्रों और नज़रियों और उस बेख़ुदा ज़िन्दगी के फ़लसफ़ों का लाया हुआ है जो इस वक़्त पूरी दुनिया में एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक एक वबा (महामारी) की तरह फैल गए हैं और जिन्हें हर क़ौम और

देश के लीडर और उनके तालीम व तरबियत (शिक्षा एवं प्रशिक्षण) के ज़िम्मेदारों ने जाने-अनजाने अपनी-अपनी क़ौमों और देशों में प्लेग के जरासीमों की तरह फैला दिया है। नतीजा यह है कि पूरब और पश्चिम के सारे देश एक अख़लाक़ी प्लेग में घिर गए हैं। कहीं उसकी गिलटियाँ ''क़ौम-परस्ती'' की शक्ल में निकल आई हैं, कहीं उन्होंने 'वतन-परस्ती' का रूप अपना लिया है, कहीं 'नस्ली भेद-भाव' बनकर आई है और कहीं 'वर्गीय संघर्ष' के जुनून का बुख़ार बनकर। जरासीम (Bacteria) अपना असर फिर भी बहरहाल हर जगह कर चुके हैं। कुछ क़ौमों और मुल्कों की मौत हो चुकी है और उनकी सड़ी हुई लाशें बचे हुए लोगों की अख़लाक़ी सेहत को और भी ख़तरे में डाल रही हैं, कुछ मौत के फ़रिश्ते (यमदूत) के इन्तिज़ार में मौत के बिस्तर पर पड़ी कराह रही हैं, अपने हकीमों, डाक्टरों और उन बूझ-बुझक्कड़ों को बार-बार बुलाती हैं, उनसे मशविरे पर मशविरे लेती हैं लेकिन रोग ऐसा लगा हुआ है कि जिस्म व जान को खाए जा रहा है और इलाज करनेवाले ऐसे मिले हैं कि उनकी हर तदबीर और हर इलाज उल्टा पड़ रहा है।

इस वक़्त राइज (प्रचलित) फ़िक्र व नज़रिये और ज़िन्दगी के फ़लसफ़े (Philosophy of life) ने क़ौमों को क़ौम-परस्ती का, मुल्कों को वतन-परस्ती का और विभिन्न नस्लों को नस्ल-परस्ती का पाठ पढ़ाया था और उनके यहाँ इन सामाजिक बुनियादों के अलावा किसी दूसरी बुनियाद का तसव्वुर मौजूद भी नहीं था। इसलिए जो क़ौमें एक नस्ल से ताल्लुक़ रखती थीं उन्होंने अपनी नस्ली पहचानों की बनियाद पर, जो एक नस्ल की नहीं थीं, उन्होंने क़ौमियत की बिना पर और मुल्कों ने वतनियत की बुनियाद पर अपनी जत्थेबन्दियाँ शुरू कर दीं और दुनिया के अलग-अलग मुल्कों और क़ौमों में बिल्कुल विरोधी और अलग-अलग जमाअतें उठ खड़ी हुईं।

ज़ाहिर है कि जब वक़्त और फ़ासले पर फ़तह पा लेने के बाद दुनिया के अलग-अलग देश, ज़िलों की तरह आपस में मिल गए हों और फिर उनमें बसनेवाली अलग-अलग क़ौमें अपनी 'नस्ली पहचानों या सिर्फ़ वतनियत और क़ौमियत की बिना पर अपने अलग-अलग जत्थे इस तरह बनाए हुए हों कि उनके सामने कोई संयुक्त काम करने का तरीक़ा और ज़िन्दगी का मक़सद सिरे से हो ही नहीं और उनको आपस में मिलाकर रखनेवाली कोई चीज़ अलावा क़ौमी या मुल्की फ़ायदे या डर के बाक़ी ही न रही हो तो उनका एक-दूसरे से

हमेशा-हमेशा के लिए लड़ते और झगड़ते रहना ज़रूरी है। क्योंकि 'क़ौम-परस्ती' और 'वतन-परस्ती' का तो फ़ितरी तक़ाज़ा ही यही है कि अपनी क़ौम और अपना वतन चाहे हक़ पर हो या बातिल पर, हर हाल में उसका साथ दिया जाए, क़ौम का एक-एक आदमी और पूरी क़ौम सामूहिक तौर पर अपनी क़ौम और देश के फ़ायदे के हर काम को करने और उनके नुक़्सान के हर काम को रोकने के लिए अपनी सारी ताक़तें लगा दे बिना यह सोचे-समझे की दूसरी क़ौमों या देशों को उससे कितना ही बड़ा नुक़्सान पहुँचता हो, उनके नज़दीक किसी चीज़ या काम के जाइज़ या नाजाइज़ और सच या झूठ होने का पैमाना ही यह क़रार पा जाए कि यह उनकी क़ौम और देश के लिए फ़ायदेमन्द है या नुक़्सान पहुँचानेवाला और उनका यह पहलू सिरे से ग़ौर करने के क़ाबिल ही न रहे कि उसका दूसरों पर क्या असर पड़ता है।

इस बारे में तो अब लगभग कहीं भी दो राय नहीं पाई जातीं कि यह मौजूदा आलमी फ़साद जिसने पूरब से लेकर पश्चिम तक पूरी दुनिया को अपनी लपेट में ले लिया है, इस वक़्त मौजूद फ़िक्र व नज़रियात (दृष्टिकोणों) के तहत 'क़ौमियत', 'वतनियत', 'नस्ली ख़ुसूसियतों' और बेख़ुदा ज़िन्दगी के फ़लसफ़े का पैदा किया हुआ है, यहाँ तक कि जिन लोगों और क़ौमों ने इन फ़िक्रों व नज़रिये के बुरे पेड़ों को बोया और अपने ख़ून और पसीने से उसकी सिंचाई कर-करके उसे इतना परवान चढ़ाया था कि उसकी जड़ें सारी दुनिया में फैल गईं, वे ख़ुद अब इनके हाथों इतना मजबूर हो गए हैं कि उनके मुफ़क्किर (चिंतक) और फ़लसफ़ी (दार्शनिक) 'क़ौमियत और वतनियत' के ख़िलाफ़ ही नहीं 'देश प्रेम' के जज़्बे के ख़िलाफ़ भी दुहाई दे रहे हैं कि यह जज़्बा कितना ही अच्छा सही लेकिन सिर्फ़ देश से मुहब्बत ही काफ़ी नहीं है। इनसान को उससे कहीं ज़्यादा अच्छे अख़लाक़ और अक़्ल को बढ़ाने और फैलाने की ज़रूरत है। मौजूदा तमद्दुनी तहज़ीबी ज़राये की तबाहकारियों को देखकर वे तो सिर्फ़ इल्म के भी क़ायल नहीं रहे, बल्कि यह कहने लगे हैं कि इनसान ने फ़ितरत का इल्म (प्रकृति-ज्ञान) सीख लिया, लेकिन उसे ख़ुद इनसान और इनसानियत की पूरी जानकारी नहीं हुई है जिससे वह ख़ुद अपने आप पर क़ाबू पा सकता, क्योंकि इनसान को इतने इल्म की ज़रूरत नहीं जितनी अक़्लमन्दी और नेक ख़याली की।

रूस ने क़ौमियत (राष्ट्रवाद) और वतनियत से एक क़दम आगे बढ़ाकर सारी क़ौमों के मज़दूरों को मिलाकर एक आलमगीर (विश्व-व्यापी) तहरीक

की बुनियाद रखी, लेकिन वह अपने असली रूप में चन्द साल भी न चल सकी और तुरन्त ही उसने रूसी क़ौमपरस्ती का रंग अपना लिया। अगर यह मान लें कि किसी तरह यह तहरीक (आन्दोलन) अपने उसूलों के मुताबिक़ सौ प्रतिशत कामयाब हो भी जाती तो अलावा इसके कि यह इनसानी फ़ितरत और उसके बुनियादी तक़ाज़ों के बिल्कुल ख़िलाफ़ होती, यह 'क़ौमियत' (राष्ट्रवाद) और 'वतनियत' (देश-भक्ति) के फ़ितनों से कहीं बड़ा फ़ितना खड़ा कर देती, क्योंकि यह भी दुनिया के बहरहाल एक ख़ास तबक़े के लोगों ही की बेहतरी और उपकार को अपना ख़ास मक़सद बनाकर उठी थी। इसलिए इस आन्दोलन का संक्षिप्त इतिहास जो हमारे सामने है, वह 'क़ौमियत' और 'वतनियत' के इतिहासों से भी कहीं ज़्यादा ख़ूँख़ार और वहशतनाक है।

अब सवाल यह पैदा होता है कि अगर क़ौमियत (राष्ट्रवाद), वतनियत (देश-भक्ति) और इशतराकियत (साम्यवाद) जो इस वक़्त दुनिया के सबसे ज़्यादा सभ्य और प्रगतिशील क़ौमों के धर्म और दीन की हैसियत रखते हैं और जिनको उन्होंने हज़ारों सालों के तजुर्बे और अब से पहले के सारे इजतिमाई और सयासी निज़ामों (सामूहिक और राजनीतिक व्यवस्थाओं) को रद्द करके अपनाया था, इनसानी ज़िन्दगी के मसलों को हल नहीं करते और हालात, वाक़िआत और हमारे अमली तजुर्बे भी यह गवाही दे रहे हैं कि जीवन की व्यवस्था पहले के निज़ामों (व्यवस्थाओं) (जैसे, क़बाइली सिस्टम, फ़्यूडल सिस्टम, राजतन्त्र और एरिस्टोक्रेसी आदि) से किसी तरह भी कम उपद्रवी नहीं तो अमल का सही रास्ता क्या है?

यही मसला इस वक़्त दुनिया का सबसे बड़ा मसला है और इसी ने दुनिया के सारे बड़े-बड़े दिमाग़ों को परेशान कर रखा है। कहीं विभिन्न देशों और क़ौमों को मिलाकर एक कर देने की शक्लें सोची जा रही हैं, कहीं राष्ट्रमण्डल (Common Wealth) के रूप तैयार किए जा रहे हैं, कहीं कई क़ौमों को इकट्ठा करके क़ौमों की जमाअत संगठित करने की कोशिश की जा रही है और कोई एशिएटिक कांफ्रेंस का ढोंग रचाकर बनावटी शान्ति के लिए हाथ-पैर मार रहा है, लेकिन विश्व-शान्ति की गुत्थी है कि सुलझाव की हर कोशिश के साथ और उलझती चली जा रही है।

ज़ाहिर है कि मुल्कों की तरह पूरी दुनिया में शान्ति क़ायम करने का भी एक और सिर्फ़ एक ही उपाय है, और वह यह है कि—

1. इसमें चलनेवाली अलग-अलग राजनीतिक व्यवस्थाओं, और इजतिमाई तहरीकों (सामूहिक आन्दोलनों) को ख़त्म करके एक सिरे से दूसरे सिरे तक एक ही निज़ाम (व्यवस्था) क़ायम हो और,

2. इसमें बसनेवाले सारे इनसानों और क़ौमों के ज़ेहनों से उनकी एक-दूसरे से अलग स्थाई पहचान (Entities) के तसव्वुर को निकालकर यह अक़ीदा उनके दिमाग़ों में बैठा दिया जाए कि वे सब असल में एक ही कुटुम्ब के लोग हैं जो सदियों एक-दूसरे से दूर रहते-रहते अजनबी बन गए हैं।

अब यह बात भी किसी सुबूत की मुहताज नहीं कि जिस तरह इजतिमाई अम्न और सियासी निज़ाम (राजनीतिक-व्यवस्था) का क़याम आपस में ज़रूरी और आवश्यक है, उसी तरह राजनीतिक-व्यवस्था और हलक़ा मुतअल्लिक़ा (सम्बन्धित क्षेत्र) के रहनेवाले सब लोगों का नहीं तो उनकी बड़ी अकसरियत का किसी एक इक़तिदार (सत्ता) के सामने फ़रमाँबरदारी में झुक जाना आवश्यक और ज़रूरी है। यानी जब तक किसी देश या क्षेत्र के सब लोग या कम से कम उनकी वह बड़ी अकसरियत किसी एक सत्ता या हुकूमत के आगे अपना सिर फ़रमाँबरदारी में झुका न दे, किसी राजनीतिक-व्यवस्था का तसव्वुर (कल्पना) ही नहीं किया जा सकता। जब तक यह हालात क़ायम रहते हैं, अनुशासन और शान्ति बरक़रार रहती है और जब यह हालत ख़त्म या इसमें कोई कमज़ोरी पैदा हो जाती है तो उसी अनुपात में बदअमनी (अशान्ति) की हालत पैदा होना शुरू हो जाती है।

इस तरह मालूम हुआ कि अगर पूरी दुनिया में शान्ति क़ायम करने की तमन्ना है (और अब विभिन्न देशों के आपस में मिल जाने से किसी एक देश में अलग शान्ति क़ायम करने की संभावना भी न रही) तो ज़रूरी है कि किसी ऐसे इक़तिदारवाले (सत्तावान) हाकिम की तलाश और पहचान की जाए–

(1) जिसकी सत्ता स्थाई और न ख़त्म होने के साथ-साथ न सिर्फ़ पूरी दुनिया पर छा सके, बल्कि उसे दुनिया की तमाम क़ौमों पर हुकूमत करने का वास्तव में हक़ हासिल हो।

(2) जिसके सामने किसी शख़्स, क़ौम, मुल्क या तबक़े के लोगों को झुकने में शर्म न महसूस हो।

(3) जो ख़ुद सारी बुराइयों से पाक और सारी कमज़ोरियों से दूर हो।

(4) जिसका सुलूक सारे इनसानों के साथ एक सरपरस्त जैसा हो और सारे इनसानों का ताल्लुक़ उससे एक समान बन्दों के जैसा हो।

(5) जो ख़ुद अपने आप में ऐसी कुव्वत और क़ुदरत रखता हो कि किसी बड़े से बड़े देश, गिरोह या क़ौम के लोगों को और पूरी दुनिया के लोगों को मिलकर भी उसके सामने दम मारने का साहस न हो, बल्कि वह पूरी-पूरी क़ौमों और पूरी दुनिया से एक ही वक़्त में पूछ-ताछ करने, हक़दारों को उनके पूरे-पूरे हक़ दिलवाने और मुजरिमों को उनके जुर्मों की पूरी-पूरी सज़ा देने की ताक़त रखता हो, कोई इनसान किसी हाल में उसकी पकड़ से बच न सकता हो।

(6) जो इनसानों की फ़ितरत (Nature), उनकी नफ़सियात (Psychology), उनके जज़्बात, उनकी ज़रूरतों, उनकी छिपी और खुली ताक़तों और कमज़ोरियों ही का नहीं, बल्कि इस दुनिया में मौजूद सारी ताक़तों का भी ठीक-ठीक इल्म रखता हो और जिसकी नज़र पूरी इनसानी दुनिया और उनके माज़ी (भूत), हाल (वर्त्तमान) और मुस्तक़बिल (भविष्य) सब पर हावी हो ताकि वह इनसानी ज़िन्दगी के ऐसे उसूल और नियम बना सके जो सारे देशों, क़ौमों और तबक़ों के फैलाव और कमज़ोरियों और फ़लाह व बहबूद (कल्याण) का समान लिहाज़ करते हों।

(7) जो ऐसा सुनने, देखने और जानने व ख़बर रखनेवाला हो कि उसके इल्म (ज्ञान) से कोई चीज़ बाहर और उसकी नज़र से कोई चीज़ छुपी हुई न रह सकती हो, और आख़िरी बात यह कि—

(8) जिसकी शान इस क़द्र बुलन्द हो कि उसके मुक़ाबले और बराबरी में न कोई दूसरा हो और न हो सकता हो।

अपने मतलूब (अभीष्ट) आलमगीर हाकिम की इन ख़ूबियों को ज़ेहन में रखकर जब हम इस ज़मीन पर शासन के विभिन्न दावेदारों का जाइज़ा लेते हैं तो पहली ही नज़र में यह चीज़ बिल्कुल यक़ीनी हो जाती है कि इनमें से कोई भी इन ख़ूबियों का लेशमात्र भी अपने अन्दर नहीं रखता और उधर हक़ीक़त भी अपनी जगह अटल और क़ायम है कि ऊपर बयान की गई ख़ूबियों के शासक के अलावा किसी दूसरे शासक या हाकिम की फ़रमाँबरदारी के लिए दुनिया की सारी क़ौमें क्या, उनमें से कुछ भी अपनी मरज़ी और ख़ाहिश से तैयार नहीं हो सकतीं

क्योंकि आख़िर क्या वजह है कि—

एक आदमी अपने ही जैसे हाड़-मांस के दूसरे इनसान के सामने, एक क़ौम (जाति) अपनी ही जैसी एक दूसरी क़ौम के सामने, एक देश अपने ही जैसे एक दूसरे देश के सामने और एक तबक़ा अपने ही जैसे एक दूसरे तबक़े के सामने सिर झुकाए।

—हाँ, यह हो सकता है और हो रहा है कि एक जमाअत या एक क़ौम कुछ मुद्दत के लिए दूसरी जमाअत या क़ौम पर अपना दबदबा या रोब जमा ले, लेकिन न यह दबदबा हमेशा के लिए रह सकता है और न यह रोब ज़्यादा दिनों तक चल सकता है।

अब जब हम इस मतलूबा आलमगीर (अपेक्षित विश्व-व्यापी) शासक या अरबी भाषा में 'इलाहुल आलमीन' की तलाश में अपने चारों ओर और ज़मीन व आसमान में फैली हुई ख़ुदा की बेहद व बेहिसाब मख़लूक़ पर नज़र डालते हैं तो फ़ौरन ही दो हक़ीक़तें हमारे सामने नुमायाँ होकर आ जाती हैं—

(1) इस कायनात (जगत्) के पैदा करनेवाले ने जो ज़रूरत और जिस चीज़ की ख़ाहिश भी इनसान के अन्दर रखी है उसे पूरा करने का कमाल दर्जे का इन्तिज़ाम इस जगत् में कर दिया है। अगर इनसान के अन्दर भूख और प्यास रखी है तो पूरी ज़मीन पर खाने-पीने की अनगिनत और तरह-तरह की चीज़ों का लम्बा-चौड़ा दस्तरख़ान बिछा दिया है। अगर उसे ज़िन्दा रहने के लिए हवा की ज़रूरत है तो ज़मीन के कोने-कोने में, पहाड़ों की ग़ारों से लेकर उसकी बुलन्द से बुलन्द ऊँचाइयों से भी ऊपर तक फ़िज़ा (वातावरण) को भी उससे भर दिया है, अगर उसे बोलने की ताक़त दी है तो उसके सामने अनगिनत बयान व गुफ़्तगू के विषय रख दिए हैं, अगर उसे अक़्ल और दिमाग़ दिया है तो उसे इतने बड़े-बड़े और बेशुमार ज़िन्दगी के मसलों से दो-चार कर दिया है कि क़ियामत तक उसे हल करता चला जाए और वह ख़त्म न हों। कहने का मतलब यह है कि जिस तरफ़ और जिस हद तक भी आप नज़र दौड़ाएँ, कहीं कोई कमी या भूल दिखाई नहीं देती।

(2) दूसरी चीज़ जो इससे भी ज़्यादा नुमायाँ और खुली हुई है, वह यह कि यह पूरी कायनात (जगत्) और उसका एक-एक कण किसी ज़बरदस्त और ताक़त और क़ुदरत रखनेवाले शासक के क़ानूनों और नियमों में कसा हुआ है और उनमें से किसी चीज़ को भी उसके हुक्म के ख़िलाफ़ कोई भी हरकत करने

या नाफ़रमानी की हिम्मत नहीं है। सूरज, चाँद, ज़मीन और दूसरे सारे आकाशीय नक्षत्रों, आग, पानी, हवा, खनिज पदार्थ, पेड़-पौधे, जानवर, पैदाइश, सेहत, बीमारी और मौत, इज़्ज़त, रोज़ी और दूसरे साधनों की कमी-बेशी, देखने-सुनने, बोलने की और दूसरी जो ताक़तें इनसान और कायनात (जगत्) में काम कर रही हैं यह आज़ाद और ख़ुदमुख़तार (Sovereign) नहीं, बल्कि पूरे तौर पर किसी के हुक्म के अधीन और किसी के क़ानून की पाबन्द नज़र आती हैं, बल्कि उनमें से हर एक के लिए एक तफ़सीली अमल का तरीक़ा (विस्तृत कार्य-पद्धति), एक तयशुदा मक़सद और प्रोग्राम और एक अटल क़ानूनों का मजमूआ (संग्रह) मौजूद है। इस जगत् में यही वह क़ानून और नियम काम कर रहे हैं जिनके लिए वैज्ञानिकों ने ख़ुदा के इनकार या उससे विमुखता के बाद 'कुदरत का क़ानून' (Laws of Nature) का नाम प्रस्तावित किया है और जिन्हें दीने-इस्लाम ने अपनी भाषा में 'आयाते-इलाही' या 'अल्लाह की निशानियाँ' कहा है, क्योंकि इनसान अगर चाहे तो उनकी मदद से अपनी और जगत् की हक़ीक़त की तरफ़ रहनुमाई हासिल कर सकता है, शर्त यह है कि हज़रत इबराहीम (अलै०) की तरह उसे हक़ीक़त में हक़ तलाश करने की लगन हो।

ऊपर बयान की गई दो हक़ीक़तों को सामने रखकर जब हम इनसानी ज़िन्दगी पर ग़ौर करते हैं तो मालूम होता है कि जहाँ इस पूरी कायनात और ख़ुद इनसान की भौतिक ज़िन्दगी के लिए आलमगीर हाकिम मौजूद है, उसके आलमगीर ज़ाबते पूरे ज़ोर और ग़लबे के साथ हर जगह लागू हैं और इनसान की हर ज़रूरत और हर ख़ाहिश का बहुतायत से सामान किया गया है वहाँ इनसान की ज़िन्दगी के इख़्तियारी हिस्से यानी उसकी सामाजिक, अख़लाक़ी और सयासी (राजनीतिक) ज़िन्दगी के लिए न ज़ाहिर में कोई आलमगीर हाकिम है, न आलमगीर ज़ाबते और न उसकी भौतिक ज़रूरतों से भी ज़्यादा अहम ज़रूरतों का कोई सामान किया गया है। लोगों से लेकर जाति और देशों तक हर एक जो रास्ते और जो ज़िन्दगी के नियम चाहें घड़ और इख़्तियार कर लेने के लिए आज़ाद हैं और उन्होंने ऐसा ही कर भी रखा है। लेकिन इस दुनिया के मिज़ाज और उसके बनानेवाले की मजमूई स्कीम को देखते हुए यह स्थिति प्रकृति से बिल्कुल ख़िलाफ़ और दुनिया की व्यवस्था से बिल्कुल बे-जोड़ मालूम होती है कि इनसान की हर छोटी से छोटी ज़रूरत का लिहाज़ रखनेवाले ने उसकी इस सबसे ज़्यादा अहम ज़रूरत ही का ख़याल न रखा हो और ज़र्रे से लेकर सूरज तक

और एक जरासीम (Bacteria) से लेकर हाथी तक, हर एक के लिए मुकम्मल निज़ामे ज़िन्दगी (सम्पूर्ण जीवन-व्यवस्था) मुक़र्रर करनेवाले ने इनसानी ज़िन्दगी के इस सबसे ज़रूरी हिस्से ही के लिए कोई क़ानून और नियम न बनाया हो। अक़्ल, ज़मीर (अन्तरात्मा), चेतना, कायनात का मुशाहिदा (अवलोकन) और भौतिक (Physical) इल्म के पूरे ज़ख़ीरे यानी सारे साइंटिफ़िक इल्म का वोट उस तसव्वुर के भी ख़िलाफ़ है और वे सब एक ज़बान होकर कहते हैं कि ऐसा नहीं हो सकता। इनसान की इजतिमाई (सामाजिक) और सियासी ज़िन्दगी के लिए भी वैसा ही एक आलमगीर हाकिम और एक आलमगीर क़ानून होना चाहिए जैसा कि इस जगत् और इनसान की भौतिक ज़िन्दगी के लिए मौजूद है।

यह है वह मक़ाम जहाँ तक खुले दिल और खुली आँखों और अपक्षपातपूर्ण मस्तिष्क का इनसान अपने होश व हवास से काम लेकर पहुँच जाता है। अब इस मक़ाम पर खड़े होकर जब हम शुरू से लेकर अब तक की इनसानी तारीख़ (इतिहास) और दुनिया के वाक़िआत पर नज़र डालते हैं तो दो-चार नहीं, दो-चार सौ नहीं, दो चार-हज़ार नहीं, लाखों की तादाद में इनसानों का एक ऐसा गिरोह हमारे सामने आता है जो सब का सब बेहतरीन किरदार और अख़लाक़वाला, ज़ेहनी व अख़लाक़ी एतिबार से अपने-अपने ज़माने की सोसायटी (Society) में सबसे नुमायाँ, दोस्त व दुश्मन के लिए समान रूप से भरोसेमन्द है जिसमें के एक-एक आदमी के बुरे से बुरे दुश्मनों ने हमेशा उनकी ग़लतियों को तलाश करना चाहा, लेकिन कहीं एक जगह भी उँगली न रख सके, और फिर ये किसी एक क़ौम के नहीं, एक देश के नहीं, एक तबक़े के नहीं, एक ज़माने के नहीं, बल्कि सब के सब अलग-अलग क़ौमों के, अलग-अलग देशों के और अलग-अलग ज़मानों के लोग हैं। मगर सब के सब एक ज़बान होकर अपनी क़ौमों, देशों, तबक़ों और ज़माने के लोगों से यह एक ही बात कहते हैं कि जिस चीज़ का तुम्हारी अक़्ल, ज़मीर (अन्तरात्मा), चेतना और तुम्हारे उलूमे तबई (Phsysical Science) तक़ाज़ा करते हैं, वास्तव में भी वैसा ही है। इस जगत् और ख़ुद तुम्हारी ज़िन्दगी के भौतिक (माद्दी) हिस्से में जिस तरह एक विश्व-व्यापी हाकिम है उसी तरह तुम्हारे इजतिमाई (सामाजिक), अख़लाक़ी (व्यावहारिक) और सयासी (राजनैतिक) ज़िन्दगी के लिए भी एक ही शासक या हाकिम है, और वह वही है जिसने इस जगत् और इसकी हर चीज़ को पैदा किया है, जिसका क़ानून और हुक्म इस पूरे जगत् के

क़ारख़ाने में पूरी ताक़त से काम कर रहा है, जिसके तुम अपनी एक-एक ज़रूरत के लिए मुहताज हो, जिसके हाथ में तुम्हारी ज़िन्दगी, तुम्हारी मौत, तुम्हारी सेहत व तन्दुरुस्ती, तुम्हारी तरक़्क़ी, तुम्हारी गिरावट, तुम्हारी रोज़ी और तुम्हारी ज़िन्दगी के सारे सामान हैं। वही तुम्हारा और इस पूरे जगत् का वास्तविक हाकिम और असल शासक है, तुम्हारे लिए ज़रूरी है कि अपनी ज़िन्दगी के इख़्तियारी हिस्से में भी उसकी इताअत और फ़रमाँबरदारी उसी तरह करो जिस तरह भौतिक दुनिया में चाहे-अनचाहे कर रहे हो।

अब इस पैदा करनेवाले और जगत् का इन्तिज़ाम करनेवाले को विश्व-व्यापी शासक की उन ख़ूबियों की रौशनी में देखिए जो आपने ऊपर तय की हैं।

वह हस्ती अपने आप क़ायम है, उसकी सत्ता स्थाई (permanent), न ख़त्म होनेवाली (eternal) और सर्व-व्यापी (all surrounding) है। उसे जिस तरह इस ज़मीन और आसमान की दूसरी चीज़ों पर हुकूमत और हाकमियत का हक़ हासिल है उसी तरह उसे सारे इनसानों पर हाकमियत का भी पूरा-पूरा हक़ हासिल है, क्योंकि उसी ने हमें पैदा किया है, उसी की ज़मीन पर हम रहते हैं, उसी की दी रोज़ी खाते हैं, उसी का पीते हैं, उसी की हवा में साँस लेते हैं, अपनी एक-एक ज़रूरत और हाजत के लिए उसी के मुहताज हैं; ये आँख, कान, नाक, ज़बान, दिल, दिमाग़ और हमारे जिस्म और इस जगत् का एक-एक कण उसी की मिलकियत और उसी के हुक्म के अधीन है। जब तक वह चाहता है हम उनसे काम लेते और फ़ायदा उठाते हैं और जब वह चाहता है उनसे हमें महरूम (वंचित) कर देता है।

फिर वह सारे ऐबों से पाक, सारी कमज़ोरियों से मुक्त है, सारे इनसानों का यकसाँ सरपरस्त है, किसी के लिए उसके आगे सिर झुकाना शर्म की बात नहीं, उसकी ताक़त और क़ुदरत का यह आलम कि इस जगत् का इन्तिज़ाम किसी की मदद और सहयोग का मुहताज नहीं। पूरी-पूरी क़ौमों और मुल्कों को एक ही वक़्त, बल्कि पूरी दुनिया को जब चाहे पल-भर में उलट-पलट दे। कहने का मक़सद यह है कि विश्व-व्यापी शासक की जो मुमकिन ख़ुसूसियात (विशेषताएँ) हमारे दिमाग़ में आती हैं, वे सब पूरे-पूरे तौर पर उसमें मौजूद हैं।

एक विश्व-व्यापी शासक यानी 'वह्दते इलाह' का मसला इस तरह हल कर लेने के बाद जब हम स्थाई विश्व-व्यापी शान्ति की दूसरी अहम ज़रूरत यानी 'वह्दते इनसान' (एक इंसान) पर ग़ौर करते हैं तो हमें मालूम होता है कि

इनसानों की मुख़्तलिफ़ क़ौमों, नस्लों और गिरोहों में यह फ़र्क़ और खींचा-तानी, एक दूसरे पर बड़ाई जताना सरासर बे-बुनियाद और बनावटी है और इसके लिए कोई असल मौजूद नहीं। मिज़ाज व तबीअत के इख़तिलाफ़ और रंग व आदतों की जिस भिन्नता की बिना पर लोगों ने अपने आपको अलग-अलग क़ौमों, नस्लों और गिरोहों में बाँटकर आपस में ये उधम मचा रखा है वैसा इख़तिलाफ़ (भिन्नता) तो कई बार एक ही क़ौम के लोगों में बल्कि एक ही माँ के दो बेटों में पाया जाता है। इनसान और इनसान के बीच समानता और भिन्नता के लिए अगर कोई सही और फ़ितरी (Natural) बुनियाद हो सकती है तो वह सिर्फ़ ख़यालात, अक़ीदे और अख़लाक़ की समानता है या भिन्नता है, और यह चीज़ ऐसी है कि इस बुनियाद पर एक माँ के दो बेटे अलग-अलग और पूरब और पश्चिम की दूरी रखनेवाले दो आदमी एक समान हो सकते हैं। रहा नस्ल या रंग या देश या भाषा की भिन्नता को दोस्ती-दुश्मनी की बुनियाद बनाना तो यह एक बेमानी और निरर्थक बात है। आख़िर यह कहना किस उचित तर्क और दर्शन या अक़्ली दलील की रू से सही हो सकता है कि फ़लाँ दरिया, पहाड़ या लकीर के इस तरफ़ जो बच्चा पैदा होता है या फ़लाँ भाषा बोलता है और फ़लाँ रंग रखता है वह तो अपना है और उसे हमपर सारे हक़ हासिल हैं लेकिन जो बच्चा उसके उस पार पैदा होता है या फ़लाँ भाषा बोलता है और फ़लाँ रंग रखता है वह ग़ैर है और उसे हम से और हमें उससे कोई सम्बन्ध नहीं। वाक़िआ यह है कि हम तो जब इस ज़माने के प्रचलित उन नज़रियों और फ़िक्रों पर ग़ौर करते हैं तो हैरान रह जाते हैं कि किस तरह ये नज़रिये इनसानों के दिल व दिमाग़ में पैदा हुए और किस तरह उनकी अक़्ल और ज़मीर (अन्तरात्मा) ने उन्हें क़बूल किया और फैलाने की इजाज़त दी। मोटी से मोटी अक़्ल का आदमी भी यह देख सकता है कि गोरे और काले, अंग्रेज़ और जर्मन और हिन्दुस्तानी और ग़ैर-हिन्दुस्तानी में वैसी भिन्नता तो नहीं पाई जाती जैसी बैल और घोड़े में है या ऊँट और बकरी में है कि उन्हें अलग-अलग जिन्सें क़रार दिया जाए। ये गोरे और काले, अंग्रेज़ और जर्मन, हिन्दुस्तानी और ग़ैर-हिन्दुस्तानी सब एक ही हाड़-मांस के बने हैं, जिस्म, दिमाग़ और अंगों की सारी कुव्वतें एक-सी रखते हैं, इन सबकी नफ़सियात, जज़्बात, एहसासात और दूसरी सारी सलाहियतें और कमज़ोरियाँ एक-सी हैं, कहीं कोई एक चीज़ भी ऐसी मौजूद नहीं है जिससे उन्हें अलग-अलग जिन्स क़रार दिया जा सके। उनसे सम्बन्धित सारी चीज़ें उसी तरफ़ रहनुमाई करती हैं और इनसानी अक़्ल

इसी का तक़ाज़ा करती है कि वे सब इनसान हैं और एक ही जैसे इनसान हैं। यहाँ फिर जब हम अक़्ल व सुबूतों के इस तक़ाज़े को लेकर खड़े होते हैं तो बुज़ुर्ग इनसानों का वही गिरोह जिसने हमें 'वह्दते इलाह' यानी विश्व-व्यापी शासक और हाकिम का मसला बताया था फिर नुमायाँ होकर सामने आ जाता है और एक ज़बान होकर कहता है कि अक़्ल और सुबूतों का यह तक़ाज़ा भी बिल्कुल हक़ है, सब इनसान गोरे हों या काले, अरबी हों या अजमी, सब एक ही आदम की औलाद हैं और उनके क़बीले और क़ौमों में तक़सीम (विभाजन) की अहमियत इससे ज़्यादा कुछ नहीं है कि यह उनके पहचाने जाने का ज़रिया है।

इस जगत् की यही दो बुनियादी हक़ीक़तें यानी 'वह्दते इलाह' (एक ईश्वर) और 'वह्दते इनसान' (एक इनसान) हैं जिनकी दावत इस बुज़ुर्ग गिरोह के एक-एक आदमी ने अपने-अपने वक़्त में अपने मुख़ातब लोगों को दी और हमारी और ख़ुद इस्लाम की दावत भी इन्हीं दो बुनियादी सच्चाइयों की तरफ़ है। इस्लाम कोई नया दीन नहीं, क़ुरआन कोई नई किताब नहीं और न मुहम्मद (सल्ल०) ने कोई अनोखी दावत पेश की है जो उनसे पहले आए हुए ख़ुदा के नेक बन्दों की दावत से अलग हो। जो दीन और जो हक़ की दावत इनसानियत की शुरूआत से सारे देशों और क़ौमों के पैग़म्बर पेश करते रहे हैं, उसी दीन और हक़ की दावत का मौजूदा नाम 'इस्लाम' है। उसी दीन और हक़ की दावत का आख़िरी प्रमाणित एडीशन क़ुरआन है और उसी दीन और हक़ की दावत के आख़िरी अलमबरदार मुहम्मद (सल्ल०) थे। हिन्दुस्तान, चीन, यूरोप, अमेरिका, ईरान,अरब, हर जगह अल्लाह की तरफ़ से आनेवाले अख़लाक़ी और सामाजिक ज़िन्दगी के रहनुमाओं ने यही निज़ामे हयात (जीवन-व्यवस्था) पेश की थी जिसे अब अल्लाह तआला ने क़ुरआन और मुहम्मद (सल्ल०) की सीरत में हमेशा के लिए महफ़ूज़ कर दिया है। यह सब इनसानों की संयुक्त विरासत है, किसी एक क़ौम, देश या गिरोह की मिलकियत नहीं। इस्लाम और क़ुरआन ने सारे इनसानों को मुख़ातिब (सम्बोधित) करके अपनी बुनियादी दावत को इस तरह पेश किया है—

> "लोगो! बन्दगी इख़तियार करो अपने उस रब की जो तुम्हारा और तुमसे पहले जो लोग हो गुज़रे हैं उन सबका पैदा करनेवाला है, तुम्हारे (दुनिया में ग़लत देखने और ग़लत करने से और मरने के बाद ख़ुदा के अज़ाब से) बचने की उम्मीद इसी सूरत से हो सकती है। (तुम देखते नहीं) वही तो है जिसने तुम्हारे लिए ज़मीन का फ़र्श

बिछाया, आसमान की (सितारों भरी) छत बनाई, ऊपर से पानी बरसाया और उसके ज़रिये से तरह-तरह की पैदावार निकालकर तुम्हारे लिए रोज़ी का सामान किया। तो जब तुम यह सब कुछ देखते हो और जानते हो तो दूसरों को अल्लाह का मद्दे-मुक़ाबिल (यानी उसके साथ अपनी बन्दगी व इताअत का हक़दार) न ठहराओ। क्योंकि अल्लाह यानी वह ज़िन्दा और जावेद ख़ुदा जो सारी दुनिया को सँभाले हुए है और उसे चला रहा है, उसके सिवा हक़ीक़त में तुम्हारा कोई माबूद और हाकिम नहीं। न उसे ऊँघ लगती है, न नींद आती है। ज़मीन और आसमानों में जो कुछ है उसी का है, कौन है जो उसके दरबार में उसकी इजाज़त के बिना सिफ़ारिश कर सके। जो कुछ बन्दों के सामने है उसे भी वह जानता है और जो कुछ उनसे ओझल है उससे भी वह वाक़िफ़ (परिचित) है। उसकी हुकूमत आसमानों और ज़मीन पर छाई हुई है और उनकी निगरानी उसके लिए कोई थका देनेवाला काम नहीं, अलबत्ता दीन (यानी अख़लाक़ी और सामाजिक ज़िन्दगी में ख़ुदा की इताअत कराने) के मामले में कोई ज़बरदस्ती नहीं की गई, बल्कि तुम्हें अक़्ल और समझ देकर सही और ग़लत दोनों रास्ते साफ़-साफ़ तुम्हार सामने रख दिए गए हैं। हाँ, यह जान लो कि जिसने बाक़ी सबको छोड़कर अल्लाह की इताअत और बन्दगी इख़्तियार कर ली उसने एक ऐसा मज़बूत सहारा थाम लिया जो कभी टूटनेवाला नहीं, और जिसका सहारा उसने लिया है वह सब कुछ सुनने और जाननेवाला है।"

"लोगो! अपने रब से डरो जिसने तुमको एक जान से पैदा किया है और उसी जान से उसका जोड़ा बनाया और उन दोनों से बहुत-से मर्द और औरत दुनिया में फैलाए। उस ख़ुदा से डरो जिसका वास्ता देकर तुम एक-दूसरे से अपने हक़ माँगते हो, और आपस के ताल्लुक़ात बिगाड़ने से परहेज़ करो, यक़ीन जानो कि अल्लाह तुमपर निगरानी कर रहा है।"

"ऐ लोगो! हमने तुम्हें एक मर्द और एक औरत से पैदा किया और तुम्हें कुटुम्बों और क़बीलों में इसलिए बाँट दिया कि एक-दूसरे को पहचान सको, वरना तुममें से बुज़ुर्ग और एहतिराम के क़ाबिल तो

वही है जो अल्लाह से ज़्यादा डरनेवाला और उसके क़ानून का सबसे ज़्यादा पाबन्द है।''

कुरआन हमें बताता है कि ख़ुदा की तरफ़ से जो, जब और जहाँ भी कोई किताब आई और जो, जब और जहाँ भी कोई पैग़म्बर आया उसकी बुनियादी तालीम यही थी, और उसके माननेवाले सारे इनसानों का फ़र्ज़ है कि उन्हीं बुनियादों पर अपनी इनफ़िरादी (व्यक्तिगत) और इजतिमाई (सामाजिक) ज़िन्दगी की तामीर और गठन करें और अपनी और समाज की ज़िन्दगी से हर उस चीज़ को निकाल दें जो इन दो बुनियादी हक़ीक़तों से टकराती हो।

ख़ुदा के इन नेक और बुज़ुर्ग बन्दों (पैग़म्बरों) की इसी दावत और मिशन की अलमबरदारी के लिए जमाअत इस्लामी वुजूद में आई और वह अपनी इस दावत और इस मक़सद को सारे इनसानों के सामने इसी तरह बिना मुल्क व मिल्लत के भेद-भाव के पेश करती है जिस तरह इस दावत के असल अलमबरदारों यानी पैग़म्बरों (अलै०) ने इसे पेश किया था। हम अपने इन्हीं रहनुमाओं के तरीक़े के मुताबिक़ सभी क़ौमी, मुल्की और नस्ली भेद-भाव को तोड़कर सर से पैर तक उसी दावत और उसके उसूलों से ताल्लुक़ पैदा करने का संकल्प और पक्का इरादा कर चुके हैं। हम सारे इनसानों और ख़ासकर उन लोगों से जो मौजूदा (वर्तमान) सूरते हाल से उकताए हुए और ग़ैर-मुत्मइन हैं, जिनके दिल व ज़मीर रोज़ पेश आनेवाले वाक़िआत पर दिन-रात कुढ़ते हैं, जो सारी दुनिया में अम्न और शान्ति के ख़ाहिशमन्द, वर्तमान जीवन-व्यवस्था से परेशान और उनके बजाय हक़ और इनसाफ़ और अमानत व ईमानदारी का दौर-दौरा चाहते हैं, यह गुज़ारिश करते हैं कि वह सारी क़ौमी, नस्ली और दूसरे भेद-भाव से ऊपर उठ कर हमारी इस दावत को सुनें, उसको समझने की कोशिश करें और उसकी अच्छाई और बुराई को उसी तरह खुले दिल से जाँचें और परखें जिस तरह दुनिया की दूसरी दावतों और तहरीकों को खुले दिल से जाँचते और परखते हैं। इस वक़्त दुनिया को बहरहाल एक ऐसे निज़ामे इजतिमाई (सामाजिक व्यवस्था) की ज़रूरत है जो पूरी इनसानी दुनिया के जिस्म पर फिट आ जाए और सारे मुल्कों और क़ौमों को मिलाकर एक यूनिट (Unit) बना दे। देश-देश और क़ौम-क़ौम के अलग-अलग संगठन व रहन-सहन और अलग-अलग राजनैतिक व्यवस्था का दौर गुज़र चुका है। अब आनेवाली दुनिया में वही तहरीक (आन्दोलन) और दावत (आह्वान), नज़रिया (दृष्टिकोण) और

मस्लक फैल सकेगा और ज़िन्दा रहेगा जो तमाम इनसानी दुनिया को एक करके निज़ामे इजतिमाई (सामाजिक व्यवस्था) क़ायम कर सकता हो और यह जैसा कि मैं बयान कर चुका हूँ पैग़म्बरों की उपरोक्त दावत के सिवा और कहीं मौजूद नहीं। इसलिए अगर दुनिया सही मानो में संजीदगी से अपने मसलों के सही हल तलाश करने में है तो उसके लिए इस दावत को क़बूल किए बिना चारा नहीं। यह अलग बात है कि अपने तास्सुब (भेद-भाव), ज़िद और हठधर्मी की वजह से वह कुछ और नुक़सान उठाने के बाद इस तरफ़ तवज्जोह करे।

हमारी असल और बुनियादी दावत तो यही है कि दुनिया अगर सही मानों में मुश्किलों का आलमगीर और मुस्तक़िल हल चाहती है तो ख़ुदा के पैग़म्बरों को अपनी अख़लाक़ी, इजतिमाई और सयासी (राजनैतिक) ज़िन्दगी में अपना लीडर बनाए।और यही दावत हम तमाम इनसानों के सामने देश और मिल्लत के भेद-भाव के बिना पेश करते हैं, लेकिन ख़ास तौर पर मुसलमानों के सामने जो अपने आपको पैग़म्बरों (अलै०) के जानशीन (उत्तराधिकारी), उनकी दावत के अलमबरदार और उनकी तालीमात (शिक्षाओं) के अनुयायी कहते हैं। हम कुछ चीज़ें और भी पेश करते हैं और वे ये कि अगर वे वास्तव में ये दावे रखते हैं कि वे पैग़म्बरों के जानशीन, उनकी दावत के अलमबरदार और उनकी तालीमात के अनुयायी हैं, और ज़ाहिर है कि अपने आप को मुसलमान ज़ाहिर करने के यही मानी हैं—तो वे अपनी व्यक्तिगत, सामूहिक और राजनैतिक ज़िन्दगी, अपने अख़लाक़ व सीरत (चरित्र), अपनी सभ्यता व समाज, अपने लेन-देन, अपने आर्थिक और तिजारती (कारोबारी) और अपने सारे व्यक्तिगत, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का जाइज़ा लेकर देखें कि वे किस हद तक इस्लाम के मुताबिक़ हैं? अगर वे इस्लाम को अपना दीन मानते हैं तो इस दीन को वाक़ई अपना दीन बनाएँ, इसको व्यक्तिगत तौर पर अपनी ज़िन्दगी में और इजतिमाई (सामूहिक) तौर पर अपने घरों में, अपने ख़ानदान में, अपनी सोसायटी में, अपने मदरसों और स्कूलों में, अपने साहित्य और पत्रकारिता में, अपने कारोबार और आर्थिक मामलों में, अपनी अनजुमनों और क़ौमी इदारों में और मजमूई तौर पर अपनी क़ौमी पॉलिसियों में अमलन क़ायम करें और अपने क़ौल और अमल (कथनी और करनी) हर चीज़ से इस बात की सच्ची गवाही दें कि वे सही मानों में इस्लाम ही की बताई हुई राह को सही और निजात का रास्ता (मुक्ति-मार्ग) यक़ीन करते हैं।

हम उनसे कहते हैं कि मुसलमान होने की हैसियत से दीन को ठीक-ठीक क़ायम करना और हक़ की सच्ची गवाही देना तुम्हारी ज़िन्दगी का असल और सिर्फ़ एक ही मक़सद है, इसलिए तुम्हारी सारी कोशिशों और अमल का मर्कज़ और केन्द्र-बिन्दु इसी चीज़ को होना चाहिए। हर उस बात और काम से अलग हो जाओ जो इस्लाम के ख़िलाफ़ हो और जिससे इस्लाम की ग़लत नुमाइंदगी होती हो। इस्लाम को सामने रखकर अपनी सारी कथनी और करनी पर नज़र डालो और अपनी तमाम कोशिशें इस राह में लगा दो कि दीन पूरा का पूरा अमलन क़ायम हो जाए, उसकी शहादत ठीक-ठीक अदा हो और उसकी तरफ़ दुनिया को ऐसी दावत दी जाए कि दुनियावालों पर अल्लाह के दीन की हुज्जत (युक्ति) पूरी हो जाए। और अगर तुम ऐसा करना नहीं चाहते तो मेहरबानी करके अपने कामों में और अपने नारों में इस्लाम का नाम लेकर उसे बदनाम न करो और अपने लड़ाई-झगड़ों में ख़ाह-मख़ाह इस्लाम को एक पक्ष बनाकर उससे दूसरों को बदगुमान न करो। हम अपने मुसलमान भाइयों से साफ़-साफ़ कहते हैं कि मुसलमान होकर ना-मुसलमान बने रहना और ख़ुदा के दीन की ग़लत रहनुमाई करके दूसरों को भी ख़ुदा के दीन से बदगुमान करना और दूसरों के लिए भी हिदायत का दरवाज़ा बन्द कर देना वह जुर्म है जो आपको दुनिया में भी पनपने न देगा और आख़िरत में भी रुस्वा करके छोड़ेगा। इस जुर्म की जो सज़ा क़ुरआन ने बताई है वह आपको मालूम है। यहूदी क़ौम ने यही रवैया ख़ुदा के दीन के साथ अपनाया था, उनकी मिसाल आपकी आँखों के सामने है। अगर कोई दूसरी क़ौम ख़ुदा के दीन के साथ वैसी ही बाज़ी खेलेगी तो वह भी इस अंजाम से बच नहीं सकती।

अब जमाअत के काम की तफ़सीलात बयान करने से पहले मैं आपके सामने वे हालात भी मुख़्तसर लफ़्ज़ों में रख देना चाहता हूँ जिनमें से हमें और देश के दूसरे लोगों को पिछले साल गुज़रना पड़ा है, क्योंकि काम की रफ़्तार का सही अन्दाज़ा करने के लिए इन हालात को सामने रखना भी ज़रूरी है —

देश के आम हालात

यह बात किसी सुबूत की मुहताज नहीं कि यह साल हिन्दुस्तान के इतिहास का सबसे बुरा साल था। इससे पहले भी अलग-अलग क़ौमों और गिरोहों में

झगड़ा होता था, फ़साद भी हो जाता था और दूसरी भी कई तरह की ख़राबियाँ सामने आती रहती थीं, लेकिन इस साल जो कुछ आँखों ने देखा और इस से भी ज़्यादा जो कुछ कानों ने सुना उसकी कोई मिसाल दूर-दूर तक इनसानी इतिहास में नहीं मिलती। न सिर्फ़ यह कि बड़े पैमाने के फ़साद सें देश का कोई कोना महफ़ूज़ न रह सका, बल्कि कुछ इलाक़ों में तो एक पूरी क़ौम ने बहैसियत क़ौम संगठित और हथियारबन्द होकर दूसरी पड़ोसी क़ौम को मजमूई हैसियत से मलियामेट कर देने का बाक़ायदा प्रोग्राम बनाकर जंग की, सरकारी कर्मचारियों और शान्ति के रखवालों तक ने इसमें हिस्सा लिया और इससे भी ज़्यादा अफ़सोस और शर्म की बात यह कि वाक़िआत और सूरतेहाल ने यक़ीनी तौर पर बता दिया कि कई जगह मक़ामी हुकूमतों के मंत्रियों तक का इशारा या कम से कम उनकी ख़ामोशी उसमें शामिल थी।

ये फ़साद जंगल की आग की तरह पूरे देश के अमन व अमान को जलाते रहे, क़ौम-परस्त लीडरों, उपद्रवी रहनुमाओं और ख़ुदग़र्ज़ पत्रकारों ने नफ़रत, ग़ुस्सा और उत्तेजना फैलाने में कोई कसर उठा न रखी, ज़हर से भरी हुई तक़रीरों, बयानों और लेखों ने कई क़ौमों के लोगों को पागलपन की हद तक ग़ुस्सा और कड़वाहट से भर दिया। यहाँ तक कि क़ौमी नफ़रत और दुश्मनी की आग घर-घर, मोहल्ला-मोहल्ला, बाज़ार-बाज़ार और गाँव-गाँव में फैल गई। इस तरह जब देश में फ़साद की महामारी फूट पड़ी तो मध्य और शिक्षित वर्ग भी जो हर सोसायटी में निर्णायक तत्व होता है, गृह-युद्ध (Civil War) की धारा में धीरे-धीरे बहने लगा और उस वक़्त हाल यह हो गया है कि हिन्दुस्तान की पूरी आबादी में शायद गिने-चुने लोग ही होंगे जो वाक़िआत और हालात को ख़ालिस इनसानी और हक़ व इनसाफ़ की नज़र से देखनेवाले हों, नहीं तो आज एक आम हिन्दू, सिख और मुसलमान क़ौमी तास्सुब से पूरी तरह भरा हुआ है और उसके दिल में अपनी दुश्मन क़ौम के ख़िलाफ़ दुश्मनी की भट्टी सुलग रही है। इनमें से हर एक तास्सुब से इतना अंधा हो रहा है कि दूसरों की बुराइयाँ और ज़्यादतियाँ तो उसे दिखाई देतीं हैं, मगर ख़ुद अपनी क़ौम के करतूत उसको नज़र नहीं आते। दूसरों की आलोचना करने के लिए तो उसकी ज़बान बहुत तेज़ है मगर ख़ुद अपनी क़ौम के लीडरों और राजनैतिक पार्टियों के रवैये को वह आलोचना से मुक्त समझ रहा है, दूसरों को उसने सिर से पैर तक ऐब और ख़ुद अपनी क़ौम को मासूम फ़रिश्ता समझ रखा है, और हद यह कि अब इन लोगों

को यह एहसास भी नहीं रहा कि जिन मज़हबों का ये नाम लेते हैं उनकी शिक्षाएँ क्या हैं, और उनको ये बुरी तरह पामाल कर रहे हैं।

ज़ाहिर है कि जब देशभर में यह फ़ितना व फ़साद फैला हो, क़त्ल व ख़ुन-ख़राबा और बेरहमी व ग़ारतगरी के वाक़िआत दिन-रात चारों तरफ़ हो रहे हों, रातों की नींद और दिन का चैन देश के एक सिरे से दूसरे सिरे तक ग़ायब हो चुका हो, हर शख़्स की जान-माल और आबरू अपने ही दोस्त, अहबाब और पड़ोसियों के हाथों ख़तरे में पड़ गई हो, हर लीडर और एडीटर अपने जत्थे के लोगों को क़ौमपरस्ती की शराब पिला-पिलाकर बदमस्त और पागल बना रहा हो, दीन व मज़हब के अलमबरदार तक ख़ुदातर्सी, अख़लाक़ और हक़ व इनसाफ़ की तरफ़ लोगों को बुलाने के बजाय ख़ुद ही क़ौमियत और वतनियत के पुजारी बनकर खड़े हो गए हों और फिर इसी ज़माने में देश की सत्ता भी एक नाख़ुदा-तरस अजनबी क़ौम के हाथों से निकलकर विरासत के तौर पर नहीं, बल्कि ज़माने के इनक़िलाब की वजह से मुख़ालिफ़ और जंग में मुबतिला क़ौमों के हाथों में हस्तान्तरित (Transfer) हो रही हो तो ऐसी हालत में लोगों की बेचैनी, ज़ेहनी परेशानी और फ़िक्र का क्या हाल होगा?

जमाअत से मुतास्सिर हलक़ा

इन हालात में ज़ाहिर में तो यह उम्मीद नहीं की जा सकती थी कि लोग इस वक़्त राइज नज़रियों और अक़ीदों के ख़िलाफ़ कुछ सुनने के लिए भी तैयार होंगे, इसलिए कुछ हलक़ों में हमने इसे साफ़ तौर पर महसूस भी किया, लेकिन आम तौर पर हमने यही पाया कि आम इनसानों की फ़ितरत अभी तक नहीं बिगड़ी है। वे ख़ुद शरारत नहीं करना चाहते, न किसी ख़राबी को पसन्द करते हैं, न किसी को जान से मारना चाहते हैं और न कोई दूसरा नुक़्सान पहुँचाने के लिए तैयार होते हैं, जब तक कि उनके लीडर और अख़बार उनके जज़्बात भड़काकर और उनमें क़ौमी ख़ुदग़र्ज़ी और पड़ोसी क़ौमों के ख़िलाफ़ नफ़रत पैदा करके पहले उन्हें पागल न बना दें। फिर यह भी हमारे देखने में आया है कि वक़्ती जोश ठंडा पड़ जाने के बाद फ़साद के सरग़ने सोचें या न सोचें आम मर्द और औरतें बेशक सोचने लगते हैं और अगर उनके सामने हक़ व इनसाफ़ और ख़ुदातर्सी की बात पेश की जाए तो मुसलमान, हिन्दू और सिख सब एक जैसा उसे सुनते भी हैं, ग़ौर भी करते हैं और उसका साथ देने का वादा भी करते हैं।

यही वजह है कि इन सारे हँगामों के बाद भी जमाअत इस्लामी की दावत हर हलक़े (क्षेत्र) में फैलती रही है और उसने लोगों को अपनी तरफ़ मुतवज्जोह (आकर्षित) किया है।

देश के अन्दर

इस वक़्त देश का कोई राज्य और इलाक़ा, उड़ीसा को छोड़कर, ऐसा नहीं रहा जहाँ हमारी आवाज़ न पहुँच गई हो और जहाँ के कुछ न कुछ लोग हमसे किसी न किसी हैसियत से वाबस्ता न हों। उड़ीसा, राजस्थान और बलूचिस्तान के सिवा हर राज्य में कई-कई जमाअतें (यूनिट) और मुन्फ़रिद अरकान मौजूद हैं। बलूचिस्तान में हालाँकि अब तक न बाक़ायदा कोई जमाअत (यूनिट) बनी है और न किसी को अब तक बाक़ायदा रुक्न (सदस्य) बनाया गया है, लेकिन वहाँ कई जगहों पर ऐसें मुन्फ़रिद अरकान व अशख़ास और हलक़े वुजूद में आ गए हैं जो जमाअती काम और प्रोग्राम की पाबन्दी में किसी बाक़ायदा रुक्न और जमाअत (यूनिट) से पीछे नही हैं। उम्मीद है इनशा-अल्लाह बहुत जल्द वहाँ जमाअत की तशकील भी हो जाएगी और मुन्फ़रिद हमदर्द और मुन्फ़रिद अरकान बन जाएँगे। आसाम से भी इस साल के दौरान में रुक्नियत की एक दरख़्वास्त आई, लेकिन हमारी पॉलिसी यह है कि किसी इलाक़े से पहले आनेवाले लोगों को पूरे तौर पर पुख़्ता कर लेने के बाद जमाअत में लेते हैं, इसलिए उन्हें हमदर्द और रुक्नियत (सदस्यता) के उम्मीदवार की हैसियत से काम करने की हिदायत कर दी गई है।

चतराल और सरहद पार राज्य के आज़ाद क़बीलों के कुछ लोग भी जमाअत से परिचित हो गए हैं और उन दोनों ही इलाक़ों से रुक्नियत के लिए एक-एक दरख़्वास्त भी आई, लेकिन उन्हें भी बतौर हमदर्द काम करने की हिदायत की गई।

जमाअत से मुतास्सिर हलक़ा बहुत ज़्यादा फैल जाता लेकिन देश में बदअमनी की वजह से ज़ेहनी बेचैनी के अलावा रेल, डाक और दूसरे आने-जाने के साधन पर जो असर पड़ा उसके नतीजे के तौर पर जमाअत का लिट्रेचर एक जगह से दूसरी जगह भेजने में भी न सिर्फ़ परेशानियाँ पेश आईं, बल्कि महीनों यह रुका पड़ा रहा। अब तक कई बड़े शहरों की बुकिंग बन्द है और डाक के ज़रिये से लोग थोड़ी-थोड़ी किताबें मँगवाकर काम चला रहे हैं। इसके बावजूद

हमारा अन्दाज़ा है कि इस देश के एक करोड़ से भी ज़्यादा लोग किसी न किसी हैसियत से इस तहरीक (आन्दोलन) से परिचित हो चुके हैं।

हिन्दुस्तान से बाहर

अरब में इस वक़्त तीन जगह हमारे तीन बाक़ायदा हमदर्द मौजूद हैं। इनमें से दो दारुल इस्लाम भी आ चुके हैं। इसके अलावा पिछले साल हमारे कई मेम्बर और हमदर्द हज के लिए गए और वहाँ कई जगह कई लोगों के पास लिट्रेचर की बहुत-सी किताबें छोड़ आए, लेकिन जब तक हमारा अरबी लिट्रेचर तैयार न हो जाए, वहाँ का काम आगे बढ़ना मुमकिन नहीं। अलबत्ता मक्का मुअज़्ज़मा में हिन्दुस्तानी मुसलमानों की बहुत बड़ी तादाद मौजूद है, अगर वहाँ किसी हिन्दुस्तानी मुसलमान को हम मुतास्सिर (प्रभावित) करने में कामयाब हो गए तो उन लोगों में उर्दू लिट्रेचर के ज़रिये से भी काम की शुरुआत की जा सकेगी।

ईरान, फ़िलस्तीन और ईराक़ में भी इस साल लगातार लिट्रेचर जाता रहा लेकिन उसे मँगानेवाले हिन्दुस्तान के लोग ही थे। फ़िलस्तीन और इराक़ में जिन लोगों ने लिट्रेचर मँगवाया वे बहुत सरगर्म हमदर्द हैं और जिस जज़्बे और ईसार (त्याग-भावना) से उन्होंने काम किया है वह सही मानों में जमाअत के अरकान तक के लिए रश्क और पैरवी के क़ाबिल है।

मौलाना मसऊद आलम साहब रईस, दारुल उरूबा की कोशिश और ख़त व किताबत से मिस्र (Syria), शाम (Egypt), मराकश, दमिश्क के कई इल्मी और दीनी इदारे जमाअत की तहरीक से वाक़िफ़ हो चुके हैं और उनमें से कुछ के साथ राब्ते भी क़ायम हो चुके हैं। उम्मीद है कि अरबी लिट्रेचर का प्रकाशन शुरू हो जाने के बाद ताल्लुक़ात का यह सिलसिला सारे अरब देश, मलाया, जावा और सुमात्रा तक फैल जाएगा।

अफ़्रीक़ा में मुम्बासा और नैरोबी (कीनिया कालोनी), मज़बूका (उत्तरी रोडेशिया), रकमाण्ड (नटाली), स्टेंडरटन और जोहनसबर्ग (ट्रांसोल) और बेलनियर (नयासालैण्ड) सात जगहों पर हमारे बाक़ायदा हमदर्द और रिसाले (पत्रिकाओं) व लिट्रेचर के ख़रीदार मौजूद हैं और मुम्बासा में एक साहब ने, जो मस्जिद के ख़तीब (वक्ता) हैं, कुछ मुनज़्ज़म (संगठित) काम की बुनियाद डाल दी है।

पोर्ट लुइस जो जज़ीरा (द्वीप) मॉरिशस की राजधानी है, वहाँ भी दो हज़रात हमारे हमदर्द और लिट्रेचर के ख़रीदार हो गए हैं।

इंग्लैण्ड में इस वक़्त मानचेस्टर, लन्देन, लेडिज़ और बलीचले बक्स (Bletchley Bucks) में हमारे रिसाले और लिट्रेचर के ख़रीदार मौजूद हैं। मानचेस्टर में एक रुक्न और तीन हमदर्द हैं जो एक हल्क़े की शक्ल में मुनज़्ज़म (संगठित) हैं, लन्दन में दो हमदर्द हैं, लेडिज़ और बलीचले बक्स में एक हमदर्द हैं। ये सब हिन्दुस्तानी छात्र हैं जो अपनी पढ़ाई के सिलसिले में वहाँ गए हुए हैं और अपनी हद तक इस दावत को फैलाने का काम कर रहे हैं।

अमेरिका में भी इस साल हमारे एक हमदर्द अपनी पढ़ाई के सिलसिले में पहुँचे हैं। वे कैलिफ़ोर्निया में रह रहे हैं और वहीं लिट्रेचर मँगवा रहे हैं। इन देशों में काम को आगे बढ़ाने का दारोमदार पूरी तरह अंग्रेज़ी लिट्रेचर पर है, जिसकी हमारे पास अब तक बहुत कमी है। अगर आनेवाले साल में हम अपना अंग्रेज़ी प्रकाशन विभाग क़ायम करने में कामयाब हो गए तो उम्मीद है कि यह रफ़्तार अच्छी-ख़ासी तेज़ हो जाएगी।

इधर पूरब की तरफ़ रंगून में बहुत-से लोग हमारा लिट्रेचर मँगवा रहे हैं और मालूम होता है वहाँ अब पढ़े-लिखे लोगों की तवज्जोह इस दावत की तरफ़ हो रही है, क्योंकि किताब के मक़ामी ताजिरों ने भी लिट्रेचर मँगवाना शुरू कर दिया है। बटाविया (बोरनिया) और मलाका (मलाया) में भी हमारी आवाज़ पहुँच गई है। लेकिन अब तक ये तमाम इशाअत (प्रचार) उन हिन्दुस्तानियों में हो रही है जो विदेशों में रह रहे हैं। दूसरी क़ौमों तक उसके पहुँचने का दारोमदार अरबी और अंग्रेज़ी लिट्रेचर के प्रकाशन पर है।

ग़ैर-मुस्लिम भाई

ग़ैर-मुस्लिमों में इस साल कोई ख़ास काम न हो सका जिसका ज़िक्र किया जाए। इसकी वजह हिन्दुओं, सिखों और मुसलमानों की क़ौमी खींचा-तानी है जो इस वक़्त इतना ज़्यादा बढ़ गई है कि न सिर्फ़ एक क़ौम दूसरी क़ौम से नफ़रत करने लगी है, बल्कि उसकी तहज़ीब (संस्कृति), तमद्दुन (सभ्यता) उसके फ़िक्र व नज़रियात और अक़ीदों तक से नफ़रत करने लगी है। इस कश-मकश की वजह से हमारे हिन्दू व सिख भाइयों में इस्लाम और उसकी शिक्षाओं से इतनी ज़्यादा दूरी हो गई है कि कुछ जगहों से हमें ये ख़बरें भी मिलीं कि वहाँ

उन्होंने सिर्फ़ मुस्लिम लीग और उसके क़ौमी मुतालबे ही के ख़िलाफ़ नारे लगाने पर बस न किया, बल्कि ख़ुद इस्लाम और उसके कलिमे के ख़िलाफ़ भी नामुनासिब बातें कह गए। उनकी इस नफ़रत का अन्दाज़ा इस बात से आसानी से लगाया जा सकता है कि गाँधी जी जैसे उनके पसन्दीदा लीडर और रहनुमा ने दिल्ली में बाल्मिकि मन्दिर में क़ुरआन पढ़ने की इजाज़त चाही तो मौजूद लोगों ने उनसे मन्दिर से बाहर निकल जाने का तक़ाज़ा किया और इस ज़ोर से अपने ग़ुस्से का मुज़ाहिरा किया कि पुलिस को दख़ल देने पर मजबूर होना पड़ा।

लेकिन इन सारी चीज़ों के बावजूद जैसा कि हम बार-बार इसका इज़हार कर चुके हैं, हमारा फ़ैसला अब भी यही है कि ग़ैर-मुस्लिमों की सारी दुश्मनी और मुख़ालफ़त असल में इस्लाम और उसके उसूलों से नहीं है, बल्कि मुसलमानों और उनके क़ौमी मुतालिबों से है। इस्लाम और उसके उसूलों से तो उनको कभी वास्ता ही पेश नहीं आया, फिर किस तरह मुमकिन है कि वे उसके हक़ में या ख़िलाफ़ कोई राय क़ायम कर सके हों। इस्लाम के नाम से उन्हें जो कुछ भी तास्सुब है वह सिर्फ़ इस लिए है कि वे उसे एक ऐसी क़ौम का धर्म समझते हैं जो सयासी (राजनैतिक) मैदान में उनकी हरीफ़ (प्रतिद्वंद्वी) है। लेकिन अगर इस्लाम और क़ुरआन अपनी असल शक्ल में उनके सामने आएँ तो हमें उम्मीद नहीं कि आम ग़ैर-मुस्लिम उनके ख़िलाफ़ कोई तास्सुब बरतेंगे। बल्कि इन गए-गुज़रे हालात में भी जब कभी हमें ग़ैर-मुस्लिमों तक अल्लाह का पैग़ाम उसके रसूल के बताए हुए तरीक़े पर पहुँचाने का मौक़ा मिला तो हमने देखा कि उनकी आँखें हैरत और ताज्जुब से फटी की फटी और मुँह खुले के खुले रह गए और मुसलमान क़ौम के सख़्त से सख़्त दुश्मन ग़ैर-मुस्लिमों ने बेक़रार होकर कहा कि साहब अगर हमें यक़ीन हो जाए कि सच में इस्लाम यही है और आप लोग वाक़ई इसके पाबन्द रहेंगे तो हम दिल और जान से आपके साथ हैं और आपके पीछे चलने में ख़ुशक़िस्मती समझेंगे। लेकिन बुरा हो क़ौम-परस्ती का और ग़ैर-इस्लामी तहरीकों (आन्दोलनों) के मुसलमान अलमबरदारों का कि उन्होंने ख़ुदा के बन्दों के लिए ख़ुदा के दीन का दरवाज़ा बन्द कर दिया।

आप यह सुनकर ख़ुश होंगे कि देश के इन फ़सादों में जहाँ हिन्दुओं, सिखों और मुसलमानों को जानी और माली दोनों क़िस्म का बड़ा नुक़सान पहुँचा, वहाँ हमारे अरकान में से अब तक अल्लाह के फ़ज़्ल से किसी का कोई ख़ास नुक़्सान नहीं हुआ जबकि वे इस बीच घरों में छिपे हुए नहीं, बल्कि मैदान में अख़लाक़ी इस्लाह और लोगों को हक़ और इनसाफ़ की तरफ़ बुलाने का काम

बराबर करते रहे। कई जगहों पर वे फ़साद को रोकने में कामयाब भी हुए, यहाँ तक कि एक जगह के ग़ैर-मुस्लिमों ने पब्लिक जलसा करके जमाअत का शुक्रिया अदा किया और लोगों को बताया कि जहाँ जमाअत इस्लामी मौजूद होगी और लोग उसके असर में होंगे वहाँ फ़साद का इमकान भी नहीं हो सकता। एक दूसरे शहर में जहाँ मुसलमानों को ग़ैर-मुस्लिमों ने बहुत नुक़्सान पहुँचाया वहीं जमाअत के मक़ामी मक्तबा पर ग़ैर-मुस्लिम बलवाइयों के हमले को रोकनेवाला एक ग़ैर-मुस्लिम था जिसे जमाअत के लिट्रेचर और उसकी दावत से वाक़फ़ियत थी। इससे आपको यह अन्दाज़ा हो जाएगा कि इस मौजूदा सयासी (राजनैतिक) हालात की वजह से ग़ैर-मुस्लिमों में हमारा काम एक बड़ी हद तक धीमा तो पड़ गया है लेकिन रुका नहीं है, और जितना हो रहा है बहुत सही लाइनों पर हो रहा है, और दूसरी बात यह कि अगर मुसलमान इस्लाम की सही नुमाइन्दगी करने लगें तो अब भी हालात पलटा खा सकते हैं। ख़ुदा करे कि वे उस रास्ते पर आ जाएँ जो ख़ुदा और रसूल (सल्ल०) ने उन्हें बताया था।

उम्मीद है कि अगले साल, अल्लाह ने चाहा तो, अपने ग़ैर-मुस्लिम भाइयों को हम पहले से ज़्यादा सहूलत और कामयाबी के साथ अपने मस्लक (पंथ) और दावत (पैग़ाम) से परिचित करा सकेंगे। हम अपने लिट्रेचर का हिन्दी ज़बान में अनुवाद करवा रहे हैं, कई किताबों का अनुवाद हो चुका है लेकिन दंगों की वजह से उनकी छपाई रुकी हुई है। ख़ुदा के फ़ज़्ल से उम्मीद है कि हम जल्द ही अपने हिन्दी लिट्रेचर का बाक़ायदा प्रकाशन शुरू कर देंगे।

औरतों का हलक़ा (क्षेत्र)

औरतों के हलक़े में इस साल हमारा काम काफ़ी फैल गया है। पिछले साल से पहले एक-दो बहनों के अलावा हमें ख़्वातीन (महिला) अरकान पर इतना भरोसा नहीं था कि अगर उनके घर के मर्द अल्लाह न करे जमाअत से अलग हो जाएँ या उनके रास्ते में रुकावट हो तो वे अपने ईमान और इस्लाम के तक़ाज़ों को मुक़द्दम रखेंगी। लेकिन इस वक़्त कम से कम आठ दस बहनें जमाअत में ऐसी मौजूद हो गई हैं जिनके बारे में हम यक़ीन से कह सकते हैं कि अल्लाह न करे, उनके ख़ानदान के सब लोग मिलकर भी उनको इस राहे हक़ से मोड़ना चाहें तो वे अल्लाह और उसके रसूल (सल्ल०) की ख़ातिर दूसरे सब रिश्तों को काट फेकेंगी। एक बहन जो अभी पिछले दिनों जमाअत में शरीक हुई हैं, उन्होंने बताया कि वे बहुत दिनों से जमाअत में शामिल होने के लिए अपने आपको

तैयार कर रही थीं कि इतनी मज़बूती पैदा हो जाए कि फिर ज़माने की कोई भी मुश्किल और हादसे रुकावट न बन सकें। अतः उन्होंने अब अपने आपको तौल लिया है और इस नतीजे पर पहुँची हैं कि अगर ख़ुदा न करे, शौहर और बच्चे भी रास्ते में रुकावट होंगे तो अल्लाह और रसूल (सल्ल०) के लिए उनको भी छोड़ देंगी। अल्लाह तआला से दुआ है कि वह हमारी इन बहनों को और हम सबको भी यही इरादा और ऐसी ही ईमान की ताक़त दे।

इस बार फिर मैं अपनी बहनों और साथियों की जानकारी और उनके ईमानी जज़्बे को ताक़त पहुँचाने के लिए अपनी एक बहन की माहवार रिपोर्ट का ख़ुलासा पेश करता हूँ, ताकि उन्हें मालूम हो जाए कि एक कमज़ोर और बीमार औरत भी अगर चाहे तो दीने हक़ की इक़ामत और इशाअत (प्रचार व प्रसार) में क्या और किस तरह हिस्सा ले सकती है। वह लिखती हैं कि—

''पिछले डेढ़ महीने से सख़्त हालात से दोचार हूँ। माहौल की यह सख़्ती ही शायद जिस्मानी सेहत पर भी असर-अन्दाज़ हुई है और सारा महीना मामूल से ज़्यादा बीमार रही हूँ और कोई काम न कर सकी, फिर भी इत्तिफ़ाक़ी तौर पर जो कुछ हो गया वह लिखती हूँ—

(1) पड़ोसन (लेडी एस०टी०ई०) की बहनें क़ुरआन शरीफ़ और मेरी अपनी भाभी मुझसे फ़ारसी पढ़ती रहीं और साथ ही साथ उर्दू में कुछ इस्लामी किताबें भी। इनके अलावा हमारे एक पड़ोसी का लड़का मुझसे अंग्रेज़ी पढ़ता है। वह इस मज़मून (विषय) में कमज़ोर था और उसकी माँ ने ख़ाहिश की थी कि कुछ मदद करूँ। मैंने पड़ोसी का हक़ अदा करने के लिए इसको ग़नीमत जाना। अब इससे मुतास्सिर (प्रभावित) होकर क़रीब-क़रीब सारा घर दीने हक़ की तरफ़ बढ़ रहा है। हालाँकि उनकी हालत यह थी कि पूरे घर में नमाज़, रोज़े या किसी और तरीक़े से इस्लाम का नाम-निशान तक न था, यहाँ तक कि लड़का ग्यारह-बारह साल का है, उसे नमाज़ तक नहीं सिखाई। लड़कियाँ और बीवी जब हमसे पहली-पहली बार मिलने आईं तो मैंने उस वक़्त उन्हें मुसलमान नहीं समझा था और झिझकी-सी रही कि ख़ुदा जाने किस मज़हब और किन ख़यालात के लोग हैं। उस लड़के के चचा (जिनके पास वह यहाँ रहता है) आठ साल ईसाई रहकर फिर मुसलमान हुए और वह भी सिर्फ़ नस्ली और रिवाजी मुसलमान होने की हद तक। उनकी बीवी की ज़बानी मालूम होने पर कि पढ़ने के बहुत शौक़ीन हैं और हर वक़्त उसी में मग्न रहते हैं, मैंने पूछा कि कुछ

इस्लामी किताबें भी देखते हैं? तो कहने लगीं कि मुझे मालूम नहीं क्या-क्या देखते हैं? फिर मैंने किताब 'तंक़ीहात' वग़ैरह दिखाकर मालूम किया कि ये आपके घर में हैं या नहीं। और यह मालूम होने पर कि नहीं हैं, मैंने एक पम्फ़लेट और 'तंक़ीहात' दी कि ये ले जाएँ और अगर वे पढ़ने के बहुत शौक़ीन हैं तो इनको भी पढ़ डालें। वे ले गईं और जाकर मियाँ को दीं तो वे कहने लगे— "वाह! यह किताबें कोई हमसे भूली हुई हैं। इन्होंने ही तो..........को बरबाद कर ही दिया था कि हज़ार मन्नत-समाजत से उसे बाज़ रखा।" ख़ुदा का शुक्र है कि अब यही साहब अपने भतीजे के ज़रिये किताबें मँगवाकर पढ़ने लगे हैं और मुतास्सिर हो रहे हैं। आज यह मालूम करके बहुत ही ख़ुशी हुई कि बच्चों के अलावा घर के सभी लोगों ने रोज़ा रखा और कुछ दिनों से नमाज़ भी पढ़ रहे हैं। आज किताबों के मिलने का पता भी मालूम किया है।

लेडी एस०टी०ई० ने 'रिसाला दीनियात' और 'ख़ुतबात' ख़त्म करने के बाद और किताबें माँगीं तो उन्हें 'परदा' नामक किताब दी गई। उन्होंने कहा कि मुझे शौक़ तो बहुत है लेकिन समझ में नहीं आती, अलफ़ाज़ (शब्द) बहुत मुश्किल हैं। मैंने उन्हें पहले कुछ हिस्से के मुश्किल लफ़्ज़ों के मानी लिख दिए और उनसे कहा कि वे पढ़ती चली जाएँ। अगर बिलकुल समझ में न आएगा तो सारी किताब के मानी लिख दूँगी। अब उन्होंने पूरी किताब ख़त्म कर ली है और बहुत मुतास्सिर (प्रभावित) हुईं। उनके ज़रिये से उनकी एक सहेली ने (जो पहले उस्तानी रह चुकी हैं) भी उसे पढ़ा और बहुत ही पसन्द किया। अल्लाह की मेहरबानी से इन दो-तीन किताबों ने ही उनके घर के माहौल को बहुत हद तक बदल डाला है। पहले उनकी छोटी दसवीं पास बहन रेलवे में नौकरी का इरादा रखती थी, अब यह इरादा छोड़कर कुरआन शरीफ़ पढ़ रही है।

दो हिन्दू पड़ोसिनें भी मेरे ख़यालात से मुतास्सिर (प्रभावित) हुई हैं, लेकिन यह काम एक महीने में नहीं हुआ बल्कि चार-पाँच महीने की लगातार तवज्जोह और दिलजोई से उनमें से तास्सुब किसी हद तक दूर हुआ है। एक तो ज़रा दूर की पड़ोसन हैं और दूसरी बिलकुल क़रीब की, बल्कि हमारे ही मकान के दूसरे हिस्से में रहती हैं। यह दूसरी ज़्यादा मुतास्सिर थीं। मैं उनके बच्चों की पढ़ाई के सिलसिले में भी कभी-कभी मदद देती रही। अब उम्मीद थी कि यह इस्लामी लिट्रेचर सुनती और उनके शौहर ख़ुद पढ़ते, लेकिन अब उनका यहाँ से तबादला (Transfer) हो गया है और वे कल जा रहे हैं। पहली पड़ोसन ख़ुद काफ़ी पढ़ी-लिखी हैं

और रेलवे अस्पताल की लेडी डॉक्टर हैं। उन्होंने कहा है कि उर्दू लिट्रेचर मुझे पढ़कर सुनाया करो।

कोशिश करके मक़ामी जामा मस्जिद में ख़ुतबात और कुछ पंफ़लेट भिजवाए हैं। ख़तीब (वक्ता) इन किताबों से अनजान थे। उन्होंने कहा कि रमज़ान में लोगों को एक-एक ख़ुत्बा सुनाया करूँगा।

हमारी पुरानी पड़ोसन मेरे साथ बदस्तूर हर अख़बार, रिसाला और किताब पढ़ रही हैं, घर में भाई और भाभी भी पढ़ते रहे हैं, माँ को तफ़हीमुल क़ुरआन सुनाती रही हूँ लेकिन मैं ख़ुद 'सयासी कशमकश' हिस्सा-3 और 'सीरतुन्नबी' चौथी और पाँचवीं जिल्द को सरसरी नज़र से देखने के अलावा कुछ न पढ़ सकी। तबियत ख़राब रहने की वजह से माँ या किसी दूसरे की कोई ख़िदमत नहीं कर सकी, बल्कि ख़ुद उनसे ही ख़िदमत लेती रही हूँ। अल्लाह तआलां मेरी ग़लतियों को माफ़ करे। अकसर किसी काम की अति कर बैठती हूँ और किसी में कमी। अपनी सलाहियतें बरबाद करती हूँ, वह हक़ीक़ी मददगार एतिदाल (सन्तुलन) की राह पर डाल दे।"

दिली दुआ है कि अल्लाह तआला हमारी इस बहन को पूरे तौर पर सेहत और तन्दरुस्ती अता करे और अपने दीन की ख़िदमत और इशाअत का ज़्यादा से ज़्यादा मौक़ा और हिम्मत दे।

इसके साथ ही मैं जमाअत के अरकान और हमदर्दों की बीवियों और उनके घरों की दूसरी औरतों को ख़ास तौर पर नसीहत करना चाहता हूँ कि उनपर अल्लाह और रसूल की तरफ़ से आम औरतों से ज़्यादा ज़िम्मेदारी है, उनके पास सही दीन मालूम करने के जो ज़रिये मौजूद हैं उसी हिसाब से उनकी ज़िम्मेदारी बढ़ती जाती है। उनका फ़र्ज़ है क़ि अपने शौहरों, भाइयों और बापों का अल्लाह के दीन को क़ायम करने के सिलसिले में पूरा-पूरा हाथ बँटाए और अगर ज़्यादा कुछ नहीं कर सकतीं तो कम से कम घर के मामलों से तो उन्हें ज़्यादा से ज़्यादा आज़ाद और मुत्मइन रखें कि पूरी तवज्जोह और ज़्यादा से ज्यादा वक़्त अल्लाह की राह में दे सकें।

आम मुसलमान, उनके लीडर और उलमा

जहाँ तक आम मुसलमानों, उनके लीडरों और उलमा हज़रात के मुतास्सिर होने का ताल्लुक़ है, उसका कोई ज़बान से इक़रार करे या न करे लेकिन यह हक़ीक़त अपनी जगह पर क़ायम है और वाक़िआत इसपर गवाह हैं कि जमाअत

इस्लामी ने उनके ज़ेहनों पर इस वक़्त तक काफ़ी असर डाला है। उनके आमाल और किरदार में तो अभी उन ख़यालात का असर ज़ाहिर नहीं हुआ और शायद काफ़ी मुद्दत तक ज़ाहिर नहीं होगा जबतक कि वे अपनी सियासी (राजनैतिक) सरगर्मियों के नतीजे देख लेने के बाद संजीदगी से सोचने पर मजबूर न हो जाएँ। लेकिन यह देखकर ख़ुशी होती है कि जहाँ एक तरफ़ वे जमाअत इस्लामी को बुरा-भला कहते हैं कि वह उनके क़ौमी मक़ासिद का साथ नहीं देती और उनको ग़लत और ग़ैर-इस्लामी कहती है, वहीं दूसरी तरफ़ उनकी क़ौमी जिद्दोजुहद के रहनुमाओं तक की ज़बान से अब यह कलिमे भी निकलने लगे हैं कि "हक़ीक़त में इस्लाम में किसी शख़्स को हाकिमियत का हक़ हासिल नहीं। हाकिमियत का हक़ सिर्फ़ अल्लाह तआला को है, वही फ़रमाँरवा और वही क़ानून बनानेवाला है। इनसान सिर्फ़ उसका ख़लीफ़ा और उसके क़ानून को लागू करनेवाला हो सकता है।" जहाँ एक तरफ़ क़ौमी और वतनी तहरीकों (आन्दोलनों) को सही ठहरानेवाले उलमा मौजूद हैं, उन्हीं के अन्दर अल्लाह तआला ने कुछ ऐसे लोग भी खड़े करने शुरू कर दिए हैं जो इल्मी अन्दाज़ में ही सही 'इनिल हुकमु इल्ला लिल्लाह' (हुक्म देने का इख़्तियार अल्लाह के सिवा किसी को नहीं) और 'लहुल ख़ल्कु व लहुल अम्र' (अल्लाह ही ने पैदा किया और हुक्म देना भी उसी का इख़्तियार है) के नारे बुलन्द करने लगे हैं। हालाँकि ये वही बुज़ुर्ग हैं जो कुछ साल पहले जब कोई ख़ुदा का बन्दा अपना सब कुछ छोड़कर इक़ामते दीन की जिद्दोजुहद में जमाअत इस्लामी का साथ देने के लिए निकल खड़ा होता तो उसे वरग़लाने की इन्तिहाई कोशिश करते और अगर वह न रुकता तो ख़ुदा से दुआएँ करते कि ऐ अल्लाह! अपने इस बन्दे को इस तहरीक से फेर दे और वापस ले आ।

जहाँ तक हमने अन्दाज़ा किया है इस वक़्त जमाअत से मुतास्सिर लोगों की तादाद तक़रीबन 50 हज़ार होगी।

जमाअत इस्लामी ने एक ख़ास असर जो आम मुसलमानों और उनकी तहरीकों पर डाला है वह यह कि चाहे वह किसी रास्ते पर जा रहे हों और किसी क़िस्म की क़ौमी या वतनी तहरीकों को चला रहे हों, वे कहते यही हैं कि वे इस्लामी निज़ाम के क़ियाम के लिए जिद्दोजुहद कर रहे हैं और हमें यक़ीन है कि उनमें अक्सरियत उन सीधे-सादे लोगों की है जो इस्लाम और उसके तक़ाज़ों से जानकारी न होने की वजह से ऐसा कर और कह रहे हैं और हमारी कोशिश है

कि वे अपनी कथनी और करनी का फ़र्क़ (विरोधाभास) महसूस कर लें।

जमाअत इस्लामी में दाख़िले के लिए दरख़ास्तें

जैसा कि मैं पहले अर्ज़ कर चुका हूँ, इन सारे हँगामों और बलवों के बावजूद लोगों का ध्यान जमाअत और उसकी दावत की तरफ़ दिन ब दिन तरक़्क़ी पर है। इस साल यानी 1 अप्रैल, 1946 से लेकर 31 मार्च, 1947 ई० तक रुक्नियत की सिर्फ़ उन दरख़ास्तों की तादाद, जो मक़ामी अमीर जमाअत और हलक़ावार क़य्यिम जमाअत के पास होकर मर्कज़ पहुँची, 277 थी। ज़्यादा नहीं तो कम से कम इतनी तादाद उन दरख़ास्तों की होगी जो मक़ामी जमाअतों और हलक़ावार क़य्यिम साहबान के यहाँ रुक गईं। पिछले साल रुक्नियत की दरख़ास्तों की तादाद सिर्फ़ 224 थी। यानी इस साल जमाअत की तरफ़ रुजूअ होनेवालों की तादाद पिछले साल से ढाई गुना ज़्यादा हो गई है। जमाअत की रुक्नियत के लिए दरख़ास्त करने से जो चीज़ लोगों को ज़्यादा रोक रही है, वह जमाअत में दाख़िले की शर्तें और अख़लाक़ व किरदार (Character) के मेआर हैं जिनके बारे में बड़े-बड़े बुज़ुर्ग उलमा तक की ज़बान से यह सुनने में आया है कि शर्तें बहुत ही कड़ी और अख़लाक़ का मेआर बहुत ही ज़्यादा बलन्द है। हालाँकि हमने जो शर्तें और जो मेआर तय किए हैं, वह आप यक़ीन कीजिए, वे हैं जो किताब और सुन्नत की रू से आसान से आसान और कम से कम हैं, उनसे भी अगर कोई शख़्स गिर जाए तो उसे चाहिए कि क़ुरआन और हदीस की रू से अपना मक़ाम ख़ुद तलाश कर ले। हम अपने अरकान और रुक्नियत (Membership) के उम्मीदवारों से जिस चीज़ का मुतालबा करते हैं और जो काम उनके हवाले करते हैं, वह मुतालबा और वह काम वही है जो इस्लाम ने हर मुसलमान के सामने रखे हैं। हम न तो इस्लाम के असल मुतालबे पर ज़र्रा बराबर भी किसी चीज़ की बढ़ोत्तरी करते हैं और न उसमें से कोई चीज़ कम करते हैं। हम हर शख़्स के सामने पूरे इस्लाम को बिना किसी कमी-बेशी के पेश कर देते हैं और उससे कहते हैं कि इस दीन को जान-बूझकर पूरे शुऊर (समझ) के साथ क़बूल करो। इसके तक़ाज़ों को समझकर ठीक-ठीक अदा करो। अपने ख़यालात और क़ौल और अमल में से हर उस चीज़ को निकाल फेंको जो दीन के हुक्मों और उसकी रूह के ख़िलाफ़ हो और अपनी पूरी ज़िन्दगी से इस्लाम की गवाही दो। बस यही हमारे यहाँ दाख़िले की शर्तें हैं, इनके सिवा न कोई शर्त है और न दाख़िले की फ़ीस, न रुक्नियत (Membership) का चन्दा।

इन 277 दरख़ास्त देनेवालों में से 135 लोगों को जमाअत में ले लिया गया और बाक़ी को हर एक के हाल के मुताबिक़ मुनासिब हिदायतें देकर काम पर लगा दिया गया। जैसे-जैसे उनके बारे में इत्मीनान होता जाएगा, उनको जमाअत में लिया जाता रहेगा। दरख़ास्त देनेवालों और उनकी मंज़ूरी की तादाद सूबे (States) के मुताबिक़ इस तरह थी—

सूबा (राज्य)	*रुक्नियत के लिए दरख़ास्त*	*मंज़ूरी*
पंजाब	104	47
यू०पी०	65	36
हैदराबाद (दक्कन)	20	9
सरहद	19	14
वस्त हिन्द (मध्य भारत)	13	3
राजपूताना	11	6
बलूचिस्तान	10	0
मद्रास	8	3
बिहार	7	5
दिल्ली	7	6
सिंध	5	3
बम्बई (मुम्बई)	4	1
बंगाल	3	2
आसाम	1	0
मैसूर	0	0
कुल (योग)	277	135

जमाअत से अलाहदगी

इस साल हमने जमाअत को कमज़ोर और ना-क़ाबिले इत्मीनान अरकान से क़रीब-क़रीब पूरी तरह पाक कर दिया है। अलाहदा होने या किए जानेवाले अरकान की तादाद 85 थी और तीन साथी यानी मौलाना अब्दुल क़ादिर साहब

(सूबा सरहद), सैयद अबुल इरफ़ान अब्दुल क़ुद्दूस साहब (मसूरी) और जनाब फ़ख़रुद्दीन साहब (कानपुरी) का इन्तिक़ाल हो गया। अल्लाह तआला हमारे इन भाइयों की कोताहियों को माफ़ करे और इनकी मग़फ़िरत फ़रमाए।

अलाहदगी की कई वजहें थीं। चवालीस (44) आदमी रियासत बहावलपुर से अलग किए गए। वहाँ इससे पहले ये लोग अंजुमन इशाअतुल क़ुरआन वस-सुन्ना के रुक्न थे और यह अंजुमन हालाँकि जमाअत इस्लामी से ग़ैर-रस्मी तौर पर ही मुताल्लिक़ थी, लेकिन हम इसके अरकान (Members) को अपने अरकान ही समझते थे। इस साल अमीरे जमाअत ने फ़ैसला किया कि अंजुमन इशाअतुल क़ुरआन वस-सुन्ना वालों को लिखा जाए कि अगर वे जमाअत इस्लामी से मिलकर काम करना चाहते हैं तो उन्हें चाहिए कि जमाअत इस्लामी में पूरी तरह शामिल होकर काम करें। इस तरह अंजुमन इशाअतुल क़ुरआन के अरकान का जमाअत इस्लामी की रुक्नियत के मेआर के मुताबिक़ जाइज़ा लिया गया तो उनमें से चवालीस (44) आदमियों को छाँट देना पड़ा। अब ये सब जमाअत के हमदर्दों और रुक्नियत के उम्मीदवारों में शामिल हैं।

31 अरकान को इसलिए जमाअत से अलग कर दिया गया कि वे जमाअत के काम में दिलचस्पी नहीं ले रहे थे। 2 अरकान को इसलिए अलग कर दिया गया कि मुसलमानों की क़ौमी जिद्दोजुहद के बारे में उन्होंने जमाअत की पॉलिसी की पाबन्दी नहीं की और चुनाव में हिस्सा लिया। एक साहब का नाम अरकान की फ़ेहरिस्त (सूची) में चला आ रहा था लेकिन वे सही मानों में रुक्न नहीं थे, इसलिए उनका नाम ख़ारिज कर दिया गया। दो अरकान की ओर से कुछ अख़लाक़ी कमज़ोरियाँ सामने आईं इसलिए उन्हें मश्विरा दिया गया कि वे जमाअत से अलग होकर उन कमज़ोरियों को पूरी तरह दूर कर लें और जो दाग़ उनपर लग गया है उसे अपने अख़लाक़ और मामलात से धो लें।

इन 85 में से सिर्फ़ 5 अरकान ऐसे थे जो ख़ुद से जमाअत से अलग हुए और उनके अलग होने की वजहें ये थीं—

एक साहब के वालिद, जो माशा-अल्लाह, दीन के आलिम हैं और एक अरबी मदरसा के नाज़िम (प्रबन्धक) भी। वे जमाअत के सख़्त मुख़ालिफ़ (विरोधी) थे, इतने मुख़ालिफ़ कि उन्होंने अपने बेटे से जमाअत का लिट्रेचर छीनकर एक बार शायद जला भी दिया। वर्षों तक हमारे ये साथी उनकी सख़्ती

और मुख़ालिफ़त का मुक़ाबला करते रहे लेकिन आख़िरकार वे उनसे दब गए और हमें लिख दिया कि उनका नाम अरकान की लिस्ट से काट दिया जाए।

दूसरे साहब कुछ ऐसी कारोबारी मुश्किलों में घिर गए कि उन्होंने गुज़ारिश की कि उनका नाम अरकान की लिस्ट से निकाल दिया जाए, क्योंकि वे अपने मामलात की वजह से जमाअत की बदनामी का सबब हो रहे हैं।

दो लोग इसलिए अलग हो गए कि उनकी घरेलू मजबूरियाँ जमाअत के साथ चलने में रुकावट हो रही थीं।

और इस पूरे गिरोह में सिर्फ़ एक साहब ऐसे थे जो इसलिए जमाअत से अलग हुए कि उन्हें जमाअत के नज़रिये ही से इख़तिलाफ़ पैदा हो गया था, लेकिन न उन्होंने यह इख़तिलाफ़ साफ़-साफ़ बताया और न कोई दूसरी वजह अलग होने की बताई।

अरकान और मक़ामी जमाअतों की तादाद

पिछले साल के आख़िर में जमाअत के अरकान की कुल तादाद 486 थी। इस साल 135 अरकान की बढ़ोत्तरी हुई। 85 को जमाअत से अलग कर दिया गया और तीन का इन्तिक़ाल हो गया। इस तरह अरकान की मौजूदा तादाद 533 है। अपने अरकान से इस वक़्त हम जो और जिस तरह की उम्मीद रखते हैं उनके मुताबिक़ ये सब कमो-बेश काम कर रहे हैं। जमाअती काम में दिलचस्पी और इस बारे में मुस्तैदी में ज़रूर फ़र्क़ पाया जाता है लेकिन दस्तूर में रुक्नियत का जो कम से कम मेआर तय किया गया है, उसपर जहाँ तक हमारा अन्दाज़ा है, इस वक़्त ख़ुदा के फ़ज़्ल से सभी पूरे हैं। लेकिन अरकान को यह मालूम होना चाहिए कि मुल्क और दुनिया के बदलते हुए हालात के साथ-साथ उनकी ज़िम्मेदारियों में बहुत तेज़ी से बढ़ोत्तरी होती जा रही है और दुनिया जिस तेज़ रफ़्तार से गुमराही और तबाही के गढ़े के क़रीब होती जा रही है उसी रफ़्तार से उन्हें अपने प्रोग्रामों पर तेज़ी से अमल करना चाहिए।

अरकान और जमाअतों की मौजूदा सूबेवार तफ़सील इस तरह है—

सूबा (राज्य)	*कुल अरकान*	*जमाअतें*	*मुंफ़रिद अरकान*
पंजाब	264	36	68
यू०पी०	95	17	13

हैदराबाद, दक्कन, बरार	39	4	5
मद्रास (चेन्नई)	35	5	5
सरहद	23	6	5
दिल्ली	17	1	0
सिंध	11	2	2
बम्बई (मुम्बई)	11	2	3
बिहार	10	2	2
बंगाल	8	1	1
राजपूताना	8	1	4
मध्य भारत	7	2	1
रियासत मैसूर	4	2	0
इंगलिस्तान	1	0	1
कुल (योग)	**533**	**81**	**110**

पिछले साल जमाअतों की तादाद 75 थी। इस साल 17 नई जमाअतें इन जगहों पर बनीं—

पटना, झांसी, फ़ैज़ाबाद, प्रताप गढ़, गोण्डा, मलीहाबाद, रामपुर, सरायमीर, ग़ाज़ीपुर, कल्यान, टोंक (राज०), पेशावर छावनी, नौशरा (ज़िला पेशावर), पड़ांग (ज़िला पेशावर), रजड़ (ज़िला पेशावर), ग़ाज़ू डेरी (ज़िला पेशावर), दरिया ख़ाँ मरी (ज़िला नवाब शाह सिंध)।

नीचे दर्ज छः जमाअतें तोड़ दी गईं—

(1) फगवाड़ा — रियासत कपूर थला

(2) जाजा— ज़िला होशियारपुर

(3) इनायतपुर — ज़िला मुल्तान

और तीन जमाअतें रियासत बहावलपुर की।

ये पाँच जमाअतें अरकान के दूसरी जगहों पर चले जाने से ख़त्म हो गईं—

(1) करवर — ज़िला रावलपिंडी

(2) कैथल — ज़िला करनाल

(3) हिसार शहर

(4) भवानीपुर — रियासत कपूरथला

(5) जूनागढ़

इस तरह मजमूई हैसियत से जमाअतों की तादाद में कुल छः जमाअतों का इज़ाफ़ा हुआ।

जमाअत का निज़ाम

पिछले साल से पहले जमाअत की तंज़ीम के सिलसिले में क़रीब-क़रीब सभी अरकान और जमाअतों का सीधे तौर पर मर्कज़ ही से ताल्लुक़ था। सिर्फ़ सूबा सरहद और सूबा बिहार में बाक़ायदा हलक़ावार क़य्यिम मौजूद थे। पिछले आम इज्तिमा के बाद पूरे देश को बीस हल्क़ों (क्षेत्रों) में बाँटकर हर हल्क़े (क्षेत्र) के लिए अलग-अलग हल्क़ावार क़य्यिम मुक़र्रर कर दिए गए ताकि वे अपने-अपने हल्क़े में काम की मौक़े पर निगरानी और रहनुमाई कर सकें और अरकान और जमाअतों में पूरी तरह नज़्म व ज़ब्त (अनुशासन) क़ायम रखें और अपने हल्क़े के ठीक हालात और वहाँ काम की रफ़्तार से मर्कज़ को अपनी राय के साथ आगाह करते रहें।

हल्क़ों (क्षेत्रों) का मौजूदा बँटवारा इस तरह है—

(1) सूबा सरहद — एक हल्क़ा

(2) पंजाब के अलग-अलग सात (7) हल्क़े हैं—

(i) रावलपिंडी कमिश्नरी

(ii) लाहौर कमिश्नरी

(iii) जालंधर कमिश्नरी

(iv) मुल्तान कमिश्नरी

(v) अंबाला कमिश्नरी

(vi) रियासत बहावलपुर

(vii) रियासत जम्मू-कश्मीर

(3) दिल्ली का पूरा राज्य — एक हल्क़ा

(4) यू०पी० को तीन हल्क़ों में बाँटा गया है—

(i) उत्तरी-पश्चिमी यू०पी०

(ii) दक्षिणी-पूर्वी यू०पी०

(iii) अवध

(5) सूबा बिहार — एक हल्क़ा

(6) सूबा बंगाल — पूरा एक हल्क़ा

(7) राजपूताना और मध्य भारत बरार सहित — एक हल्क़ा

(8) सूबा सिंध — पूरा एक हल्क़ा

(9) सूबा बम्बई — एक हल्क़ा

(10) सूबा मद्रास — पूरा एक हल्क़ा

(11) रियासत हैदराबाद — एक हल्क़ा और

(12) रियासत मैसूर — एक हल्क़ा

बाक़ी सभी हल्क़े तो ठीक चल रहे हैं लेकिन यू०पी० में काम अब इतना फैल गया है कि तीन हल्क़ों से काम नहीं चल सकता। इसलिए वहाँ अब इस इजतिमा के बाद से इनशा-अल्लाह पाँच हल्क़े कर दिए जाएँगे। राजपूताना, मध्य भारत और बरार का हल्क़ा भी बहुत ज़्यादा फैला हुआ है, इसमें भी मुनासिब तब्दीली करने पर ग़ौर किया जा रहा है।

काम के लिहाज़ से हल्क़े

पिछले साल जमाअत के अरकान और क़रीबी हमदर्दों को मिलाकर उनकी मख़सूस क़ाबिलियतों और सलाहियतों के लिहाज़ से 24 हल्क़ों में तक़सीम कर दिया गया ताकि हर आदमी को उसकी ख़ास क़ाबिलियत, सलाहियत और तबीअत के रुझान को इस्लामी नस्बुल-ऐन की ख़िदमत का ज़्यादा से ज़्यादा मौक़ा मिल सके और इस तरह से जमाअत के बढ़ते हुए काम को देखते हुए हर शोब-ए-ज़िन्दगी के लिए कारकुन भी पैदा होते चले जाएँ। इनमें से चार हल्क़ों यानी (1) अवामी लिट्रेचर लिखनेवाले (2) सियासी हल्क़ा (राजनैतिक क्षेत्र) (3) अंग्रेज़ी अदब का हल्क़ा और (4) दरसी किताबों, स्कूल स्टैंडर्ड के अलावा, तक़रीबन सभी में इब्तिदाई (आरंभिक) काम शुरू हो गया है और उनके नाज़िम

साहिबान ने ख़त व किताबत और मुलाक़ात के ज़रिये अपने-अपने हल्क़ों की बुनियाद डालने की कोशिश की है। अधिकतर की बुनियाद पड़ चुकी है और दूसरों के बारे में उम्मीद है कि आनेवाले साल में वे भी काम शुरू करने के क़ाबिल हो जाएँगे। हल्क़ों का काम ख़ाहिश और उम्मीद के मुताबिक़ रफ़्तार से आगे न बढ़ने की वजह मुल्की हालात की ख़राबी और आम बदअमनी और परेशानी के अलावा यह भी रही है कि अमीरे जमाअत पूरे साल ग़ैर-मामूली तौर पर बीमार रहे, ऑपरेशन भी हुआ और वे इस बारे में कोई तवज्जोह न कर सके। कुछ हल्क़ों के काम के नक़्शे हमारे पास महीनों से रखे हैं लेकिन अब तक उनके बारे में राय नहीं दी जा सकी।

मर्कज़ में तरबियतगाह का क़ियाम

इजतिमा इलाहाबाद के मौक़े पर पिछले साल यह तय किया गया था कि जमाअत के अरकान की तरबियत (Training) के लिए मर्कज़ में एक तरबियतगाह (Training Centre) क़ायम किया जाए, जिसमें जमाअत के अरकान को 15 से 30 दिन तक रखकर उनको तरबियत दी जाए, ताकि उन्हें मालूम हो सके कि मुख़्तलिफ़ हालात में जमाअत का क्या और कैसे काम किया जा सकता है। उनके ज़ेहनों को बिलकुल साफ़ और यकसू करने की कोशिश की जाए और जमाअत का लिट्रेचर इस तरतीब से उन्हें पढ़ा दिया जाए कि ज़िन्दगी के हर पहलू का मुमकिन हद तक साफ़ नक़्शा उनके ज़ेहनों में आ जाए और न सिर्फ़ वे ख़ुद अपनी दावत की सच्चाई और हक़ीक़त के बारे में पूरी तरह मुत्मइन हों, बल्कि दूसरे लोगों को भी अपनी-अपनी क़ाबलियत और सलाहियत के मुताबिक़ मुत्मइन करने के क़ाबिल हो जाएँ।

इस फ़ैसले के मुताबिक़ जुलाई 1946 ई० से दारुल इस्लाम में तरबियतगाह शुरू कर दी गई और 15 से लेकर 20 आदमियों तक तक़रीबन हर महीने 15 दिनों के लिए बुलाए जाते रहे। जनवरी 1947 ई० में बिहार के मज़लूमों की मदद और सहयोग के लिए हमने पटना में जो कैम्प खोला है उस सिलसिले में तरबियतगाह को दारुल-इस्लाम से पटना मुंतक़िल कर दिया गया, ताकि जो लोग तरबियत (Training) के लिए बुलाए जाएँ उन्हीं से रिलीफ़ पहुँचाने का काम भी लिया जाए और इस तरह उन्हें ज़ेहनी, अख़लाक़ी और अमली तीनों क़िस्म की तरबियत का मौक़ा मिले।

अब हम कोशिश कर रहे हैं कि बिहार का काम वहीं के अरकान और हमदर्दों के हवाले करके तरबियतगाह को फिर मर्कज़ में ले आएँ, क्योंकि जिन ख़ास हालात की बिना पर उसे वहाँ भेजा गया था वैसे हालात अब हर सूबे (States) में पेश आ रहे हैं। इसलिए अब मर्कज़ की ज़िम्मेदारियाँ क़रीब-क़रीब हर जगह के लिए एक जैसी हैं, इसलिए अब रिलीफ़ के बारे में हम यही तरीक़ा अमल के क़ाबिल समझते हैं कि हर इलाक़े के लोग ख़ुद ही मिलकर इस काम को सँभाल लें। हमारे पास अभी कारकुनों की तादाद इतनी ज़्यादा नहीं है कि उन्हें हर जगह भेजा जा सके।

मर्कज़ी मक्तबा से जमाअत के लिट्रेचर का प्रकाशन

अब तक हमारे काम के फैलाव और शोब-ए-मालियात (Department of Finance) की मज़बूती का बड़ा ज़रिया जमाअत का मर्कज़ी मक्तबा ही है। यह जिन मुश्किलों से जंग के ज़माने में दो-चार हुआ उनसे अब तक निकलने में कामयाब नहीं हो सका। काग़ज़ की कमी का अब तक वही हाल है जो जंग के ज़माने में था। पूरे साल में पिछले सालों की तरह इस बार भी कोई एक दिन भी ऐसा नहीं आया कि जमाअत की सभी किताबें तो क्या अधिकतर भी स्टाक में मौजूद रही हों। हैदराबाद, दक्कन से हमें कुछ काग़ज़ मिलने की उम्मीद थी और ख़याल था कि कम से कम एक बार तो सारी किताबें छपवा डालेंगे, लेकिन हमारी वह उम्मीद भी पूरी न हुई और वह काग़ज़ न मिल सका। परमिट पर जो काग़ज़ मिलता है वह हमारी ज़रूरतों के लिए बहुत कम होने के अलावा कई बार महीनों के इन्तिज़ार के बाद मिलता है। इस साल हमें एक परमिट पर तो पूरे 8 महीने के बाद काग़ज़ मिला।

मक्तबे की सालाना रिपोर्ट और गोश्वारे (ब्यौरा आमदनी-ख़र्च) से मालूम होता है कि इस साल 38382 रुपये 15 आने 6 पाई का लिट्रेचर दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में गया जिसकी तफ़सील इस तरह है—

हिन्दुस्तान में सालाना बिकनेवाली किताबें (सूबेवार)

राज्य	रुपये	आना	पाई
पंजाब	3683	9	6
यू०पी०	7416	1	6
रियासत हैदराबाद	2889	8	6
बिहार	2586	14	0
सूबा बम्बई	2287	2	0
सूबा दिल्ली	1743	11	0
सूबा सिंध	1284	5	0
सरहद	1271	0	0
मध्य भारत की रियासत	1090	0	0
बंगाल	1013	5	0
सूबा मद्रास	894	15	6
सी०पी०	776	4	0
बलूचिस्तान	484	2	0
रियासत मैसूर	167	11	0
आसाम	36	7	0
उड़ीसा	31	12	0
कुल	37648	6	6

हिन्दुस्तान से बाहर सालाना बिकनेवाली किताबें (मुल्कवार)

देश	रुपये	आना
ईराक़	168	8
अफ़रीक़ा	157	4
इंग्लैण्ड	112	6
मोरीशस	69	11
बर्मा	57	7

चतराल	39	6
अफ़ग़ानिस्तान	27	1
फ़लस्तीन	26	2
अमेरिका	24	14
मलाया	20	7
नेपाल	4	0
लंका	3	0
मुत्फ़र्रिक़ (विविध)	24	7
कुल	*734*	*9*

		रु०	आना	पाई
कुल योग	भारत —	37648	6	6
	विदेश —	734	9	0
	योग —	38382	15	6

मक्तबा की चालीस मतबूआत (प्रकाशन) में से इस वक़्त 23 किताबें मक्तबा में मौजूद हैं। बाक़ी 17 में 7 प्रेस में हैं, 6 किताबत हो रही हैं और 4 का अभी कोई इन्तिज़ाम मौजूद नहीं।

उर्दू के अलावा दूसरी ज़बानों में भी जमाअत के लिट्रेचर की छपाई

मर्कज़ी मक्तबा में सिर्फ़ उर्दू और अंग्रेज़ी ज़बान में किताबें छपती हैं। दूसरी ज़बान के तर्जुमे (अनुवाद) और उनकी छपाई का काम देश के दूसरे भागों में हो रहा है, और इस काम की तफ़सील इस तरह है—

(1) अरबी

जैसा कि पिछले साल बताया गया था कि अरबी ज़बान में लिट्रेचर के तर्जुमे (अनुवाद) और तालीफ़ (संकलन, सम्पादन) के लिए जालंधर शहर में 'दारुल-अरूबा' के नाम से इदारा क़ायम किया गया है। इसके इंचार्ज मौलाना

मसऊद आलम साहब नदवी हैं। इस इदारे में अब तक जो भी काम हुआ है उसका ख़ुलासा यह है :

(1) तजदीद अह्या-ए-दीन, इस्लाम और जाहिलियत और सयासी कशमकश, तीनों हिस्सों का इंडेक्स (Index) यानी एशारिया तैयार कर लिया गया है।

(2) जदीद अरबी मुस्तलहात (Modern Arabic Phrases and Technical Terms) की छान-बीन का काम भी एक हद तक हो चुका है।

(3) मिस्र (Egypt), शाम (Syria), दमिश्क़ (Damascus) और ईराक़ के कई इल्मी और दीनी इदारों और रिसालों (Magazines) और अख़बारों के साथ सम्बन्ध क़ायम हो गए हैं।

(4) अब तक 'दीने हक़', 'इस्लामी हुकूमत किस तरह क़ायम होती है?', 'नज़रिय-ए-सियासी' और 'क़ुरआन की चार बुनियादी इस्तिलाहें' का तर्जुमा (अनुवाद) हो चुका है और 'तजदीद अहया-ए-दीन' का अनुवाद हो रहा है। 'नज़रिय-ए-सियासी' इस वक़्त प्रेस में है और अल्लाह ने चाहा तो बहुत जल्द छपकर तैयार हो जाएगा। 'इस्लामी हुकूमत' की नज़रसानी (Revision) हो रही है और बाक़ी दोनों तर्जुमों की नज़रसानी (पुनरावलोकन) बाक़ी है।

(5) रिसाला (Magazine) 'अल-हुदा' जो दारुल-अरूबा से अरबी ज़बान में छापने की तजवीज़ है, उसकी जहाँ तक हमारी तरफ़ से तैयारी का ताल्लुक़ है, वह बिलकुल मुकम्मल है। रुकावट सिर्फ़ Declaration की है। ये ग़ैर-मामूली पाबन्दियाँ हट जाएँ तो यह रिसाला तुरन्त जारी किया जा सकता है।

(2) तुर्की

तुर्की अनुवाद के लिए अब जनाब आज़म हाशिमी साहब मुहाजिर तुर्किस्तानी, जो कई साल से दारुल-इस्लाम में रह रहे हैं, अपना पूरा वक़्त दे रहे हैं। इस वक़्त तक 'रिसाला दीनियात', 'ख़ुतबात', 'तंक़ीहात', 'तफ़हीमात' और 'परदा' का तर्जुमा हो चुका है और 'रिसाला दीनियात' और 'ख़ुतबात' की नज़रसानी (Revision) भी हो चुकी है। लेकिन जहाँ तक छपाई का ताल्लुक़ है, चूँकि हिन्दुस्तान में इसका इन्तिज़ाम मौजूद नहीं है, इसलिए छपाई का अभी कोई इन्तिज़ाम नहीं हो सका। अब हम इस कोशिश

में हैं कि जल्द से जल्द छपाई का सिलसिला शुरू हो जाए।

तुर्की इदारे के बाक़ायदा और मज़बूत क़ियाम के लिए तुर्क मुहाजिरीन में से उन लोगों की जो जमाअत से परिचित और मुतास्सिर हैं, मार्च 1947 ई० में एक कान्फ्रेंस (सम्मेलन) मर्कज़ में बुलाई गई थी, लेकिन पंजाब में दंगे शुरू हो जाने की वजह से मुश्किल से तीन आदमी यहाँ तक पहुँच सके और उनके मश्विरे से काम का एक ऐसा नक़्शा बना लिया गया है जिसके मुताबिक़ कोशिश की जाएगी कि तुर्की ज़बान बोलनेवाले देशों तक इस दावत को पहुँचाने के काम में उन तुर्की मुहाजिरीन की मदद हासिल की जाए जो इस वक़्त हिन्दुस्तान में मौजूद हैं।

(3) अंग्रेज़ी

अंग्रेज़ी लिट्रेचर में इस साल रिसाला दीनियात (अंग्रेज़ी) नज़रसानी (Revision) के बाद प्रकाशित हुआ। इसके अलावा मौलवी मज़हरुद्दीन सिद्दीक़ी साहब की दो अंग्रेज़ी किताबें 'इस्लाम क्या है?' और 'इलहाद के बाद क्या?' प्रकाशित की गईं। 'इनसान का मआशी मसला और उसका इस्लामी हल', 'क्या हिन्दुस्तान की नजात नैशनलिज़्म में है?' 'नज़रिय-ए-सियासी' और 'इस्लामी हुकूमत किस तरह क़ायम होती है?' इस वक़्त प्रेस में हैं। 'इस्लाम का अख़लाक़ी नुक़्त-ए-नज़र' और 'ज़िन्दगी बाद मौत' का तर्जुमा हो चुका है और नज़रसानी हो रही है। 'हक़ीक़ते जिहाद', 'रिसालत पर ईमान लाना क्यों ज़रूरी है?' और 'नुबूवते मुहम्मदी का अक़ली सुबूत' का इस वक़्त तर्जुमा हो रहा है।

अंग्रेज़ी का इस वक़्त तक सारा काम अरकान और हमदर्द हज़रात बिला मुआवज़ा करते रहे हैं और इस काम के लिए पूरा वक़्त देनेवाला अभी तक कोई नहीं मिला। अब हम कोशिश कर रहे हैं कि कम से कम एक कारकुन की मुस्तक़िल ख़िदमत इस विभाग के लिए हासिल करें ताकि बाक़ायदगी के साथ काम पूरा हो सके।

(4) सिन्धी

'ख़ुतबात' अलग-अलग आठ हिस्सों में और एक मुकम्मल किताबी शक्ल में छप चुकी है। 'रिसाला दीनियात' की छपाई हो रही है। 'इस्लामी इबादात

पर एक तहक़ीक़ी नज़र' और 'कुरआन-फ़हमी के बुनियादी उसूल' का अनुवाद हो चुका है। 'इस्लाम और जाहिलियत' और 'सलामती का रास्ता' का अनुवाद हो रहा है। अब तक काम की रफ़्तार धीमी रही है, लेकिन अब सिन्धी दारुल इशाअत का क़ियाम बाक़ायदा अमल में आ चुका है और एक प्रेस भी ठीके पर मिल गया है, इसलिए उम्मीद है कि आनेवाले साल में यह रफ़्तार बहुत तेज़ हो जाएगी।

सिंधी रिसाला (Magazine, पत्रिका) ज़ारी करने की कोशिश बदस्तूर जारी है।

(5) गुजराती

'ख़ुतबात' में से पहले नौ ख़ुतबे पिछले साल एक मजमूए की शक्ल में प्रकाशित किए गए थे। इस साल सिर्फ़ 'सलामती का रास्ता' प्रकाशित हुआ है। इस धीमी चाल की वजह कारकुनों की कमी और बम्बई (मुम्बई) के लगातार दंगे-फ़साद हैं। अब अमीरे जमाअत ने बम्बई के सफ़र में हिदायत कर दी है कि गुजराती दारुल इशाअत बाक़ायदा क़ायम किया जाए और उसके लिए मुस्तक़िल (Permanent) कारकुन की ख़िदमात मुआवज़े के साथ हासिल कर ली जाएँ।

(6) हिन्दी

हिन्दी तर्जुमा का इदारा (विभाग) इस साल अल्लाह के फ़ज़्ल से हाफ़िज़ इमामुद्दीन साहब रामनगरी की निगरानी में तक़रीबन बाक़ायदा क़ायम हो गया है। कुछ आदमी और भी उनके साथ मदद के लिए तैयार हो गए हैं।

अब तक 'दीने हक़', 'सलामती का रास्ता', 'ज़िन्दगी बाद मौत', 'सरवरे आलम', 'कुरआन और पैग़म्बर' और 'नुबूवत मुहम्मदी का अक़्ली सुबूत' का तर्जुमा (अनुवाद) पूरा हो चुका है। 'रिसाला दीनियात', 'इस्लाम और जाहिलीयत', 'इस्लाम में इबादत का तसव्वुर' और 'अक़्ल का फ़ैसला' का तर्जुमा हो चुका है और नज़रसानी (Revision) हो रही है।

हाफ़िज़ साहब एक हिन्दी प्रेस से उनकी छपाई के लिए बात-चीत कर रहे थे कि बनारस में फ़साद शुरू हो गया। इससे काम में रुकावट पैदा हो गई, वरना उम्मीद थी कि इस इजतिमा से पहले 'दीने हक़', 'सलामती का रास्ता' और

'नुबूवते मुहम्मदी का अक़्ली सुबूत' छपकर तैयार हो जाते।

हिन्दी पत्रिका निकालने के लिए भी कोशिश की जा रही है लेकिन अभी तक ज़ाहिरी कामयाबी की कोई उम्मीद नज़र नहीं आती है।

(7) बंगला

बंगला भाषा में 'ख़ुतबात', 'रिसाला दीनियात' और 'सलामती का रास्ता' का अनुवाद हो चुका है और इनमें से 'रिसाला दीनियात' के पहले दो पाठ और 'सलामती का रास्ता' प्रकाशित हो चुकी है। 'रिसाला दीनियात' प्रेस में जाने के लिए तैयार है, अलबत्ता 'ख़ुतबात' का अनुवाद बंगला अनुवादक कमेटी ने पसन्द नहीं किया इसलिए इसपर दोबारा नज़रसानी की जाएगी। अब आठ-नौ महीने से बंगाल और बिहार में दंगे की वजह से यह सारा काम बन्द पड़ा है और सारे मक़ामी कारकुन वहाँ रिलीफ़ और दंगे से सम्बन्धित दूसरे सुधार और तब्लीग़ के कामों में मसरूफ़ (व्यस्त) हैं।

हालात ठीक हो जाएँ तो बंगला में मासिक पत्रिका जारी करने के लिए भी योग्य आदमी नज़र में है, वे ख़ुद भी इसको निकालने के लिए बेचैन हैं।

(8) पश्तो

पश्तो भाषा में इस वक़्त तक 'दावते इस्लामी और उसके मुतालिबात', 'सलामती का रास्ता', 'मुसलमानों की ताक़त का असली मम्बा', 'हक़ीक़ते इस्लाम', 'ख़ुत्बा जुमा, इजतिमा दारुल इस्लाम 1945 ई०', 'मुसलमानों का बुनियादी अक़ीदा' और जमाअत के लिट्रेचर से कई इक़्तिबासात (उद्धरण) प्रकाशित हो चुके हैं। 'रिसाला दीनियात' का तर्जुमा (अनुवाद) हो रहा है। बड़ी रुकावट सिर्फ़ अनुवादकों की कमी है। अब तक अनुवाद का सारा काम हमदर्दों से लिया जा रहा है।

(9) मलयालम

मलयालम में (जो मालाबार की मक़ामी ज़बान है) 'रिसाला दीनियात' और 'सलामती का रास्ता' पिछले साल छापे गए थे। अब 'ख़ुतबात' प्रेस में जा चुके हैं। चूँकि इस इलाक़े में उर्दू बहुत ही कम बोली और समझी जाती है और हमारे लिट्रेचर से लोगों के लिए बात-चीत के सिवाय और कोई जानकारी का ज़रिया अब तक नहीं था इसलिए 'रिसाला दीनियात' और 'सलामती का

रास्ता' जो छपवाए गए थे उनके निकासी की रफ़्तार बहुत धीमी है। 'ख़ुतबात' छपकर तैयार हो गई तो उम्मीद है कि यह दीनी तबक़ों में ज़्यादा तेज़ी से फैल सकेगी। मलयालम भाषा का 'दारुल इशाअत' (प्रकाशन विभाग) 'इस्लामिक पब्लिशिंग हाउस' के नाम से अरमबीलियम में बाक़ायदा क़ायम हो चुका है।

(10) तमिल

इस भाषा में 'ख़ुतबात' का अनुवाद हो चुका है। 'तंक़ीहात' और 'रिसाला दीनियात' का अनुवाद हो रहा है। अब उम्मीद है कि दो महीने के अन्दर तमिल प्रकाशन विभाग मुस्तक़िल तौर पर क़ायम हो जाएगा। इसके लिए पूरा वक़्त देनेवाले दो कारकुनों की सेवा हासिल कर ली गई है।

(11) कन्नड़

मंगलूर में हमारे हल्क़े के हमदर्दों ने तर्जुमे और छपाई का काम शुरू कर रखा हैं। तर्जुमे तो वे छोटे-छोटे कई पंफ़लेटों का कर चुके हैं, लेकिन छपाई अभी तक उन्होंने 'सरवरे आलम' ही की की है। छपाई और प्रकाशन का मेआर बहुत अच्छा रखा है। तर्जुमे के मुताल्लिक़ हम कुछ नहीं कह सकते, लेकिन जिस एहतिमाम और ज़िम्मेदारी के साथ उन्होंने काम किया है उसको देखते हुए उम्मीद यही की जा सकती है कि तर्जुमा (अनुवाद) भी अच्छा होगा।

इन भाषाओं के अलावा इस साल मद्रास के सफ़र में अमीरे जमाअत ने तेलंगी और मराठी दारुल इशाअत (प्रकाशन विभाग) क़ायम करने की भी हिदायत की है और उसके लिए योग्य कारकुन तलाश किए जा रहे हैं।

फ़सादात और जमाअत इस्लामी

फ़सादात का सिलसिला वैसे तो 13 अप्रैल, 1946 ई० को यू०पी० के फ़साद से ही शुरू हो गया था, लेकिन अगस्त 1946 ई० से तो यह देश में इस तरह फैलना शुरू हो गया जैसे सूखे जंगल को किसी ने आग लगा दी हो। सैकड़ों मील के इलाक़ों में बाक़ायदा जंगें लड़ी गई और वहाँ की अक़लियतों (अल्पसंख्यकों) को सिरे से मिटा देने की मुनज़्ज़म मुहिमें अमल में लाई गईं। यह देखकर हमें बेहद अफ़सोस हुआ है कि मुल्क के एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक दोनों क़ौमों के लीडरों और अख़बारों ने आग लगाने में तो पूरा-पूरा हिस्सा लिया, लेकिन कोई एक भी अल्लाह का बन्दा ऐसा सामने न आया जिसने

वाक़ई ख़ुलूसे दिल के साथ यह कोशिश की हो कि ये फ़सादात न हों और दोनों क़ौमों के ताल्लुक़ात नफ़रत और दुश्मनी के बजाय सुलह और मुहब्बत पर क़ायम हों। फिर भी शरीफ़ इनसानों का फ़र्ज़ यही है कि वे जहाँ जितनी भी कुव्वत रखते हों, ख़ुदा की ज़मीन पर अम्न और इनसाफ़ क़ायम करने की कोशिश करें और अगर कुव्वत हो तो अपने बाज़ू के ज़ोर से उपद्रवी ताक़तों को रोक दें।

जमाअत इस्लामी ने फ़सादात की आग भड़कने से पहले ही उसके आसार भाँप लिए थे, बल्कि वह कई साल से हिन्दुस्तान के लोगों को यह बताने की कोशिश कर रही थी कि जिस रास्ते पर तुम जा रहे हो उसका नतीजा आपसी जंग और सबकी तबाही के सिवाय और कुछ नहीं हो सकता। सितम्बर 1946 ई० में जब इस तबाही के आसार साफ़ नज़र आने लगे तो मर्कज़ में मजलिसे शूरा का इजलास हुआ और आनेवाले फ़सादात और दंगों के बारे में जमाअत का मस्लक और अमल का तरीक़ा साफ़ तौर पर तय करके सारे जमाअत के अरकान के नाम निम्निलिखित हिदायतें भेज दी गईं—

''सवाल किया जा रहा है कि अगर कहीं फ़सादात हो जाएँ तो हम क्या रवैया अपनाएँ?''

इस सिलसिले में आम हिदायतें इससे पहले तर्जुमानुल क़ुरआन में दी जा चुकी हैं। अब मजलिसे शूरा काफ़ी सोच-विचार के बाद निम्नलिखित हिदायतें देती है—

(1) आम फ़सादात की हालत में जमाअत के अरकान के लिए अपने बचाव का सबसे बड़ा ज़रिया उनका अपना अख़लाक़ी रवैया और उनका क़ौमी और नस्ली तास्सुबों से ऊपर उठकर बेहतरी और भलाई की अमली तौर पर दावत देना है। इस मामले में जमाअत के अरकान जितने ज़्यादा सीधे रास्ते पर चलनेवाले और उपद्रव रहित होंगे, और जितनी ज़्यादा भलाई करने और भलाई की तरफ़ दावत देने में सरगर्म होंगे, उतना ही ज़्यादा आम फ़ितने की आग से उनके महफ़ूज़ रहने की उम्मीद है। और जितना ज़्यादा बेअमल रहेंगे उतना ही ज़्यादा ख़तरे में रहेंगे।

(2) अगर फ़साद की हालत में कोई रुक्ने जमाअत घिर जाए और उसपर हमला किया जाए तो हर मुमकिन कोशिश तक उसे हमलावरों को नसीहत करनी चाहिए और अगर इसका मौक़ा न हो तो वह अपने बचाव के लिए हाथ

उठा सकता है। इस सूरत में अगर उसके हाथ से कोई मारा जाए तो क़त्ल होनेवाले के क़त्ल की ज़िम्मेदारी शरई तौर पर ख़ुद क़त्ल होनेवाले (मक़्तूल) पर ही होगी। बचाव में हाथ उठानेवाला ख़ुदा के नज़दीक बरी होगा और अगर बचाव करनेवाला ख़ुद मारा जाए तो वह, इनशा अल्लाह, शहीद होगा।

(3) अगर जमाअत के किसी रुक्न के सामने हिन्दुओं या मुसलमानों का कोई गिरोह किसी मज़लूम पर ज़्यादती कर रहा हो तो उसको रोकने की और मज़लूम को बचाने की हर मुमकिन कोशिश करनी चाहिए, यहाँ तक कि अगर ख़ुद अपनी जान भी ख़तरे में पड़ जाए तो उस ख़तरे को बरदाश्त कर लेना चाहिए।

(4) फ़सादात या दंगों की हालत में अगर कोई आदमी या ख़ानदान ख़तरे में घिरा हो, चाहे वह मुस्लिम हो या ग़ैर-मुस्लिम और चाहे वह पनाह और मदद माँगे या न माँगे, अपनी तरफ़ से कोशिश करके उसे अपनी पनाह में ले लिया जाए और अपने आपको ख़तरे में डालकर भी उसकी हिफ़ाज़त की जाए।

(5) फ़सादात के वक़्त जब कभी और जहाँ कहीं मौक़ा मिले सारे इनसानों को और अगर मुमकिन हो तो दंगा भड़कानेवाले गिरोह को समझाने की कोशिश की जाए, उनको अल्लाह से डराया जाए, अगर मुसलमान हों तो उनको दीन का हक़ीक़ी मक़सद और उसके हासिल करने का सही तरीक़ा बताया जाए और उनपर वाज़ेह किया जाए कि यह क़ौमी कशमकश और उसके लिए यह फ़साद किसी हाल में भी ख़ुदा के नज़दीक मक़बूल नहीं है और अगर ग़ैर-मुस्लिम हों तो उनपर नैशनलिज़्म के बुरे नतीजे वाज़ेह किए जाएँ।

(तर्जुमानुल क़ुरआन, जिल्द 29, अंक-5, पेज-278)

मजलिसे शूरा ने यह भी फ़ैसला किया था कि मौजूदा हालात और आम राजनैतिक माहौल पर एक तफ़सीली दलील और इनसाफ़ पर आधारित बयान अमीरे जमाअत तैयार करके प्रकाशित करें और उसमें यह बताया जाए कि ये हालात और राजनैतिक माहौल किस चीज़ का नतीजा है और एक हक़ पर क़ायम रहनेवाले इनसान को इस वक़्त कौन-सा तरीक़ा इख़्तियार करना चाहिए? लेकिन लगातार बीमारी और ऑपरेशन की वजह से अमीरे जमाअत अब तक यह बयान तैयार नहीं कर सके।

हमें यह मालूम करके बहुत ज़्यादा ख़ुशी हुई है कि हमारे रुफ़क़ा और हमदर्दों और मुतास्सिरीन ने ज़्यादातर जगहों पर बहुत अच्छा काम किया है और अपनी

सीरत व किरदार (चरित्र) और अद्ल व इनसाफ़ पर आधारित अपने तौर-तरीक़ों से हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों की सही ख़िदमत की। लेकिन ज़ाहिर है कि अरकान की तादाद देश में अभी आटे में नमक से भी कम है इसलिए जमाअत के इस काम का असर अभी आम तौर पर लोग महसूस नहीं कर सकते। फिर भी अमृतसर, रावलपिंडी, ज़िला झेलम, ज़िला केम्बलपुर, रिवाड़ी ज़िला हिसार और बाबापुर ज़िला निज़ामाबाद में हमारे अरकान और हमदर्दों ने जो काम किया है उसका ज़िक्र मैं इस रिपोर्ट में सिर्फ़ इसलिए करना चाहता हूँ कि हमारे जो साथी और हमदर्द अभी तक हैरान हैं कि मौजूदा हंगामी माहौल में कैसे काम किया जा सकता है, उन्हें मालूम हो जाए कि उनके दूसरे साथियों ने इन हालात में किस तरह काम किया है।

अमृतसर के एक मुहल्ले में हमारे एक हमदर्द ने दोनों क़ौमों के हथियारबन्द और लड़ने के लिए आमने-सामने खड़े गिरोहों को लगातार चौबीस घंटे अपनी जान को ख़तरे में डालकर रोके रखा और रात-दिन उनको समझाते रहे और आख़िरकार अपने मुहल्लेवालों को दंगे-फ़साद से बाज़ रखने में कामयाब हो गए। दंगा-फ़साद के बाद जमाअत के लोग सिविल अस्पताल में पहुँचे और देखा कि ज़ख़्मियों और तीमारदारों सबमें फ़िरक़ावाराना ख़यालात काम कर रहे हैं। हमारे साथियों ने सारे ज़ख़्मियों की बिना किसी धर्म और क़ौम के भेद-भाव के सेवा शुरू की और हासिल यह हुआ कि हिन्दू, सिख और मुसलमान सब ज़ख़्मी अपने रिश्तेदारों से बढ़कर उनपर भरोसा करने लगे। इनमें से ज़्यादातर लोगों ने हमारे साथियों के पते नोट कर लिए कि बाद में उनसे ताल्लुक़ात रखेंगे और इस जमाअत के मस्लक को समझने की कोशिश करेंगे जो ऐसे इंसान तैयार करती है। हमारे साथियों की इसी अख़लाक़ी साख का नतीजा था कि एक पूरी ग़ैर-मुस्लिम आबादी में जमाअत के मक्तबा को एक सिख ने हिन्दू और सिख बलवाइयों का मुक़ाबला करके बचा लिया।

रावलपिंडी में हमारे एक रुक्न और हमदर्द का काम भी बड़ा ही सराहनीय रहा। जिस मुहल्ले में वे रहते हैं, सिवाय उनके दो घरों के, सारा हिन्दुओं और सिखों का मुहल्ला है और इन दोनों के घर भी एक-दूसरे से काफ़ी दूरी पर हैं, लेकिन ये दोनों न ख़ुद महफ़ूज़ रहे बल्कि मुसलसल और लगातार कोशिशों से उन्होंने अपने मुहल्ले के ग़ैर-मुस्लिम लोगों को भी दंगे-फ़साद से दूर रखा और इससे बचा लिया। उनके अख़लाक़ी असर का नतीजा था कि हमारे दूसरे मक़ामी

साथी और हमदर्द उनका हाल मालूम करने के लिए ठीक फ़साद के मौक़े पर रात-दिन उस मुहल्ले में जाते रहे, लेकिन किसी ग़ैर-मुस्लिम ने भी उनकी तरफ़ आँख उठाकर भी न देखा।

ज़िला झेलम, जहाँ मुसलमान दंगाइयों ने बिहार और गढ़ मुक्तेश्वर के ग़ैर-मुस्लिम दंगाइयों की पूरी पैरवी की और ग़ैर-मुस्लिम अक़लियत पर बेपनाह ज़ुल्म ढाए, वहाँ हमारे साथियों ने जहाँ-जहाँ उनके असरात थे मज़लूमों की हिमायत और हिफ़ाज़त का फ़र्ज़ जिस तरह अदा किया उसको ख़ुद एक क्षेत्रीय हिन्दू नेता ने हिन्दुओं के एक वफ़्द (प्रतिनिधि-मण्डल) के सामने इस तरह स्वीकार किया—

> "इन इलाक़ों में हमें इन लोगों की हस्ती पर गर्व है। इन्होंने अपने अख़लाक़ी फ़र्ज़ को निभाने में पूरी हद तक और जानतोड़ कोशिशें कीं। इनकी दी हुई कुछ इस्लामी किताबें 'सलामती का रास्ता', 'इस्लाम का नज़रिय-ए-सियासी', 'इस्लाम और जाहिलीयत' और जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह' का मैंने अध्ययन किया और अख़बार 'कौसर' भी लगातार पढ़ता रहा। इस वक़्त अगर कोई सही सोसायटी है तो वह इन हज़रात की है जो सही इनसानी अख़लाक़ी उसूलों पर काम कर रही है। मौजूदा नेताओं, पत्रकारों और एडीटरों को हटाकर किनारे कर दिया जाए तो आज ही हिन्दू-मुस्लिम झगड़ा-फ़साद मिट सकता है और दोनों क़ौमें गले मिल सकती हैं।"

केम्बलपुर में हमारे एक साथी के यहाँ कुछ किसान भी लूट-मार में शामिल हुए। उन्हें पता चला तो वे तुरन्त बीमारी की हालत में ही मौक़े पर पहुँचे और जो माल उनके क़ब्ज़ा में पाया गया वह असल मालिकों को वापस दिला दिया और हिन्दू और सिख आबादी को इत्मीनान दिलाया कि वे उनकी पनाह में हैं, उन्हें कोई ख़तरा नहीं, वे पहले मर जाएँगे तो उन्हें कोई हाथ लगा सकेगा।

रिवाड़ी, ज़िला हिसार में भी ईद के मौक़े पर दोनों क़ौमों में बहुत खिंचाव पैदा हो गया, लेकिन मक़ामी जमाअत के अमीर के हुस्ने-अख़लाक़ और हुस्ने-तदबीर ने हालात को ऐसा ख़ुशगवार बना दिया कि फ़िज़ा बिलकुल साफ़ हो गई।

बाबापुर ज़िला निज़ामाबाद में दोनों क़ौमों के हालात इतने ज़्यादा ख़राब हो गए थे कि दोनों पक्षों ने हथियार निकाल लिए थे, लेकिन मक़ामी जमाअत ने

रात-दिन काम करके और अपने आपको ख़तरे में डालकर माहौल को ठीक किया। आख़िरकार नतीजा यह हुआ कि हिन्दुओं और मुसलमानों का मुश्तरक जलसा और चाय की दावत हुई और ख़ुद हिन्दुओं ने लगभग उसी क़िस्म की बातें कहीं जो झेलम के सिलसिले में बयान हो चुकी हैं और दोनों क़ौमों को यक़ीन दिलाया कि इतमीनान रखो, जहाँ जमाअत इस्लामी के लोग मौजूद होंगे वहाँ अल्लाह ने चाहा तो दंगा-फ़साद नहीं होगा।

नवाखाली के दंगे-फ़साद के बाद हमें फ़ौरन यह ख़याल पैदा हुआ था कि जमाअत अगरचे अभी तक इतनी फैली नहीं है कि उसपर किसी बड़े पैमाने पर वैसी ज़िम्मेदारी डाली जाए जैसी दूसरी बड़ी हिन्दू और मुसलमान जमाअतों पर है, लेकिन फिर भी जमाअत को अपने साधनों की हद तक फ़साद के मज़लूमों की मदद और ढारस बँधाने का इन्तिज़ाम करना चाहिए। मगर हमें अफ़सोस है कि पूर्वी बंगाल में हमारा कोई एक रुक्न या हमदर्द भी न था और न वहाँ हमारी आवाज़ की पहुँच थी। इसलिए हम नवाखाली में कोई काम न कर सके। इसके बाद बिहार में मुसलमानों का जब क़त्ले आम हुआ तो हमने पटना में अपना कैम्प क़ायम किया। वहाँ की मक़ामी जमाअत की मदद के लिए मर्कज़ से अपने मुहतरम रफ़ीक़ मुहम्मद अब्दुल जब्बार ग़ाज़ी साहब को मर्कज़ी तरबियतगाह के साथ वहाँ मुंतक़िल कर दिया और वे अब तक वहाँ काम कर रहे हैं।

बिहार में अब तक जमाअत ने जो काम किया है उसकी कोई वाक़ई रिपोर्ट तो उसी वक़्त पेश की जा सकेगी जबकि हमारे कारकुन अपने प्रोग्राम को पूरा करके वहाँ से वापस आ जाएँगे क्योंकि हमने वहाँ के लिए काम का जो नक़्शा तैयार करके अपने कारकुनों के हवाले किया है, वह किसी जल्दबाज़ी और फ़ौरी काम का नक़्शा नहीं है, बल्कि वह एक सब्र आज़मा और देर-तलब प्रोग्राम है। इस वक़्त ज़्यादा से ज़्यादा उस काम का ख़ाका बताया जा सकता है जो वहाँ हमारे साथियों के सामने है और जिसको पूरा करने के इरादे से वे अब तक वहाँ जमे हुए हैं। बिहार में हम इन कामों को करना चाहते हैं —

(1) सबसे पहला काम यह है कि वहाँ के मुसलमानों पर अक्सरियत के बेतहाशा ज़ुल्म और उनकी अपनी तादाद की ग़ैर-मामूली कमी की वजह से ख़ौफ़ व डर की जो हालत छा गई है उसको दूर करके उनकी हिम्मत बँधाई जाए। इस बात की ज़रूरत कुछ तो इस वजह से थी कि जो लोग बिहार में मुसलमानों के आगे-आगे थे उनके ज़ेहन ख़ुद एक जगह पर न थे जिसकी वजह

से उनसे यह उम्मीद नहीं की जा सकती थी कि वे किसी हिम्मत हारी हुई भीड़ की परेशानी दूर करके उसे दोबारा एक जगह जमा कर सकेंगे। और कुछ इस वजह से थी कि आज मुसलमान लीडरों पर भी क़ौम-परस्ती का वही रोग मुसल्लत (प्रभावी) है जो दुनिया की दूसरी क़ौमों पर मुसल्लत है। इस वजह से ये मुसलमानों की पस्त-हिम्मती को दूर करने के लिए अगर कुछ कर सकते हैं तो सिर्फ़ यह कर सकते हैं कि उनके क़ौमी तास्सुब को भड़काकर उनके अन्दर कुछ जोश पैदा कर दें। हमारे नज़दीक इस तरह का जोश ख़ुद ही एक जानलेवा बीमारी है जिसको इस्लाम ने 'जाहिलीयत' के नाम से पुकारा है। इस वजह से हमने यह चाहा कि इस मौक़े पर हम अपनी मुमकिन हद तक बिहार के मुसलमानों के अन्दर वह सही इस्लामी रूह पैदा करने की कोशिश करें जो मौजूदा ख़तरनाक हालतों में उनकी हिम्मत भी बँधाए और उनके सोचने और काम करने के तरीक़े में भी इंक़िलाब पैदा करे जिसकी वजह से वे अपने आपको एक अक़लीयत (Minority) की हैसियत में पा रहे हैं और उनके ग़ैर-मुस्लिम पड़ोसी उनको अपने लिए रहमत के बजाय मुसीबत समझ रहे हैं। हम इस बात पर पूरा यक़ीन रखते हैं कि अगर मुसलमान सच्चे मुसलमान बन जाएँ और अपनी ज़िम्मेदारियों को ठीक-ठीक समझ जाएँ जो 'शुहदा अल्लाहु फ़िल अर्ज़' (ज़मीन पर अल्लाह के गवाह) होने की हैसियत से अल्लाह तआला ने उनपर अपने ग़ैर-मुस्लिम भाइयों के सुधार से मुताल्लिक़ डाली हैं, तो कम से कम जहाँ तक ख़ुद उनका ताल्लुक़ है उनका रवैया अपने ग़ैर-मुस्लिम पड़ोसियों के साथ तुरन्त हमदर्दाना हो जाएगा और उम्मीद है कि उसके जवाब में ग़ैर-मुस्लिमों के रवैये में भी बहुत ख़ुशगवार तबदीलियाँ होंगी और अपने अच्छे पड़ोसियों की अच्छी बातें और उनके अच्छे कामों से अच्छा सबक़ लेंगे। लेकिन अगर ऐसा न हुआ (जिसका अन्देशा बहुत कम है) बल्कि वे विरोध और दुश्मनी ही पर तुले रहे और इस विरोध और दुश्मनी के जुनून में उन्होंने इससे ज़्यादा ज़ुल्म मुसलमानों पर किए, जो उन्होंने बिहार में पिछले दिनों ढाए हैं; तो इससे मुसलमानों पर वह ख़ौफ़ और डर तारी न होगा जो इस वक़्त है, बल्कि उनकी सच्ची ख़ुदा-तरसी की वजह से उन ज़ुल्मों से उनकी हिम्मत और ताक़त में बढ़ोत्तरी होगी और वे कमज़ोर दिल होने के बजाय दुगने जोश और हौसले के साथ न सिर्फ़ अपने काम को जारी रखेंगे, बल्कि अपने ऊपर ज़ुल्म ढानेवाले ग़ैर-मुस्लिमों के साथ अपनी मुहब्बत और हमदर्दी भी बाक़ी रखेंगे। इस हालत में लाज़िमी तौर पर अल्लाह की मदद उनके साथ होगी और कुछ पत्थर दिल लोग अगर उनको सताएँगे,

उनको उनके घरों से निकालेंगे और उनके जान-माल, इज़्ज़त और आबरू पर हमला करेंगे तो अल्लाह उन्हीं ग़ैर-मुस्लिमों के अन्दर से ऐसे लोगों को उठाएगा जो अपने इन नेक और नेकी की तरफ़-लानेवाले पड़ोसियों के साथ न सिर्फ़ हमदर्दी करेंगे, बल्कि उनका पूरा-पूरा साथ देंगे। लेकिन क़ौम-परस्ती का बुरा हो कि उसने इस सीधे और साफ़ रास्ते की तरफ़ आने से मुसलमानों को रोक दिया है। और अब उनमें दो ही तरह के लोग पाए जाते हैं— या तो वे लोग हैं जो वतनी क़ौमियत (राष्ट्रवाद) के जुनून में पड़कर मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम का अन्तर (फ़र्क़) ही सिरे से खो बैठे हैं या फिर वे लोग हैं जो नस्ली क़ौमियत के तास्सुब में इतने पागल और दीवाने हो गए हैं कि अपने और ग़ैर-मुस्लिमों के बीच दुश्मनी के ताल्लुक़ के सिवा और किसी ताल्लुक़ का इमकान ही नहीं समझते।

(2) दूसरा काम हमारे साथियों के सामने यह है कि मुसलमानों को मशविरा दें कि अपनी बस्तियाँ अलग-अलग ख़ित्तों (Pockets) की शक्ल में बसाएँ। यह मशविरा हक़ीक़त में है तो सरकार के सामने पेश करने का, क्योंकि यह काम आम लोगों के करने का नहीं, बल्कि सरकार के ही करने का है, लेकिन जिन लोगों के हाथों में आज सरकार की बागडोर है, उनसे हमें यह उम्मीद नहीं है कि वे अपने हित के ख़िलाफ़ कोई बात सिर्फ़ इस वजह से मान लेंगे कि वह मुनासिब और अम्न-पसन्दी की है। इस वजह से हमने यह रास्ता अपनाने के बजाय अपने कारकुनों को यह मशविरा दिया है कि वे मुसलमान बस्तियों का कोई ख़ास क्षेत्र चुन करके वहाँ के मुसलमानों के अन्दर अनसार और मुहाजिरीन की स्प्रिट (भावना) पैदा करने की कोशिश करें। जिन लोगों को मुन्तक़िल करना हो उनके अन्दर ऐसा जज़्बा पैदा किया जाए कि उनको अपना अख़लाक़ी और दीनी फ़ायदा इतना प्यारा हो जाए कि उसके लिए वह हर तरह की परेशानी और तकलीफ़ बरदाश्त कर लेने पर आमादा हो जाएँ और जिन लोगों की तरफ़ मुन्तक़िल करना हो उनके अन्दर क़ुरबानी का वह जज़्बा पैदा किया जाए कि वे मुन्तक़िल होनेवालों को ख़ुशी से अपनी ज़मीनों और अपनी जायदाद में हिस्सेदार बनाने पर राज़ी हो जाएँ। असली चीज़ दिलों के अन्दर जगह का पैदा होना है। जब यह चीज़ पैदा हो जाएगी तो ज़मीन भी कुशादा हो जाएगी और रोज़ी-रोज़गार में भी बरकत होगी। इस तरह अगर एक पाकेट भी मुसलमानों की अपनी हिम्मत और क़ुरबानी से बन गया तो इसका सबसे बड़ा फ़ायदा तो यह

होगा कि इस कोशिश में आप से आप मुसलमानों की अख़लाक़ी तरबियत बड़े ऊँचे दर्जे की हो जाएगी और दूसरा फ़ायदा यह होगा कि यह पाकेट (Pocket) एक नमूना का काम देगा जिसकी नक़ल दूसरे इलाक़े के मुसलमान भी करेंगे, और इस तरह धीरे-धीरे यह काम सरकार की मदद के बिना बल्कि उसके विपरीत अंजाम पा जाएगा। और जब सरकार यह महसूस कर लेगी कि अक़लीयत (Minority) अपने बचाव के जाइज़ साधन इख़्तियार करने पर तुल गई है तो आख़िरकार वह भी मजबूर होगी कि उनकी जायदाद और सम्पत्ति के लिए कोई ऐसी सूरत पैदा करे कि हक़दार अपने हक़ों से महरूम न रहें।

(3) तीसरी चीज़ हमारे साथियों के सामने यह है कि अपनी हैसियत-भर इमदाद (रिलीफ़) का काम करें। इस सिलसिले में हमने अपने कारकुनों को हिदायत दी है कि इस मामले में मुस्लिम व ग़ैर-मुस्लिम के बीच हरगिज़ कोई फ़र्क़ न किया जाए। अगर ग़ैर-मुस्लिम को भी मदद की ज़रूरत हो तो उनकी भी मुमकिन हद तक हर तरह की मदद की जाए। और हमें यह मालूम हुआ था कि बिहार के दंगा-पीड़ित इलाक़ों में एक बड़ी तादाद ऐसे लोगों की भी है जिन्हें यूँ तो बहुत ज़्यादा मदद की ज़रूरत है लेकिन वे रिलीफ़ कमेटियों और उनके इमदादी कैम्पों से कोई फ़ायदा नहीं उठा रहे हैं। ये अपनी शराफ़त और ख़ुद्दारी की वजह से रिलीफ़ कमेटियों और इमदादी कैम्पों के दरवाज़े खटखटाने पर आमादा नहीं हैं और कोई ऐसा इमदादी इदारा इस इलाक़े में मौजूद नहीं है जो ख़ुद उनको खोजकर उनकी मदद करे। हमने इस ज़रूरत को महसूस करके अपने कारकुनों को यह हिदायत की है कि वे मुमकिन कोशिश करके इस तरह के नेक, परहेज़गार और ख़ुद्दार लोगों का पता लगाएँ और उनके हलात ठीक करने की कोशिश करें। इसके अलावा ऐसे लोगों की तादाद भी दंगा-पीड़ित इलाक़ों में कुछ कम नहीं थी जो अपने क़ीमती सामान और जायदाद, जैसे ज़ेवरात वग़ैरा औने-पौने बेच रहे थे। हमने इस सिलसिले में भी कुछ ज़रूरी हिदायतें अपने कारकुनों को दे दी हैं कि पहले तो वे लोगों को इस तरह के काम करने से रोकने की कोशिश करें और अगर रोकना मुमकिन न हो तो कम से कम इसका बन्दोबस्त किया जाए कि उनकी चीज़ें बाज़ार के भाव बिक जाएँ।

—तर्जुमानलु क़ुरआन, जिल्द 30, अंक-4, पृष्ठ 196-199

अब उत्तरी-पश्चिमी पंजाब और मुल्तान डिवीज़न में जो दंगे हुए हैं, वहाँ भी काम शुरू करने के लिए हमने दौरे के लिए जमाअत के भरोसेमन्द लोगों को

भेजा। रावलपिंडी डिवीज़स की रिपोर्ट हमारे पास आ चुकी है और काम का नक़्शा और प्रोग्राम पर ग़ौर किया जा रहा है। मुल्तान से अभी कोई रिपोर्ट नहीं पहुँची लेकिन अब यह रिलीफ़ का काम इतना फैल गया है कि बिहार की तरह कोई 'कुल हिन्द रिलीफ़ कैम्प' क़ायम करना मुमकिन नहीं रहा। अब यही हो सकता है और हम कर भी यही रहे हैं कि हर इलाक़े के अरकान को मर्कज़ से हिदायत देकर उसी इलाक़े में काम करने पर लगा दें और वे ख़ुद इस काम को सँभाल लें। अब यह मुमकिन नहीं है कि दूसरे इलाक़ों से कारकुन किसी जगह भेजे जाएँ। इसलिए बिहार में भी लिख दिया गया है कि वहाँ के काम को भी अब मक़ामी जमाअत और उसी इलाक़े के अरकान और हमदर्दों के हवाले करने के इन्तिज़ामात की तरफ़ तवज्जोह दी जाए।

आम हल्क़ावार इजतिमाआत

इस साल पिछले साल के मुक़ाबले में आम हल्क़ावार और ज़िलावार इजतिमाआत ज़्यादा हुए। लेकिन ट्रेनिंग सेन्टर की मसरूफ़ियतों, अमीरे जमाअत की लगातार बीमारी और ग़ाज़ी साहब के पटना चले जाने की वजह से मर्कज़ में काम इतना ज़्यादा रहा कि रावलपिंडी, सियालकोट और सरायमीर, आज़मगढ़ के इजतिमाआत के सिवा किसी इजतिमाअ में मर्कज़ से कोई नहीं पहुँच सका।

बाक़ी इजतिमाआत में अगरचे मर्कज़ से कोई भी शरीक नहीं हो सका लेकिन वे सब के सब कामयाब और काफ़ी प्रभावकारी साबित हुए। अब ज़रूरत भी इसी चीज़ की है कि हर इलाक़े के अरकान और क़ैय्यिम साहिबान अपने आपको ज़्यादा से ज़्यादा ख़ुद कफ़ील बनाने की तरफ़ ध्यान दें, क्योंकि जमाअत के काम के फैलने के साथ-साथ यह ज़्यादा से ज़्यादा मुश्किल होता जाएगा कि मर्कज़ से हर इजतिमाअ में कोई आदमी शामिल हो।

मजलिसे शूरा का चुनाव

जमाअत जब तक इब्तिदाई हालत में थी, मजलिसे शूरा का चुनाव अमीरे जमाअत की अपनी मर्ज़ी पर था। इलाहाबाद के इजतिमा के मौक़े पर इस नई पॉलिसी का आरंभ किया गया कि मजलिसे शूरा के चुनाव में पूरी जमाअत से राय ली जाए। पिछले साल इसकी सूरत यह तजवीज़ की गई थी कि अमीर पूरी जमाअत पर निगाह डालकर 12 सबसे ज़्यादा मुनासिब आदमी चुन ले और फिर हर रुक्न जमाअत से अलग-अलग राय ले ली जाए कि क्या उसे अमीरे

जमाअत के चुनाव से इत्तिफ़ाक़ है या वह कोई तब्दीली चाहता है। फिर अरकान की राय सामने रखकर अमीरे जमाअत मजलिसे शूरा का चुनाव कर ले। चुनाँचे ऐसा ही किया गया और ये हज़रात मजलिसे शूरा के अरकान चुने गए—

1. मौलाना अमीन अहसन साहब इस्लाही
2. मौलाना मसऊद आलम साहब नदवी
3. मौलाना मुहम्मद इसमाईल साहब मद्रासी
4. जनाब अब्दुल जब्बार साहब ग़ाज़ी
5. मौलाना अब्दुल ग़फ़्फ़ार साहब, मालेर कोटला
6. मलिक नसरुल्लाह ख़ान साहब अज़ीज़, लाहौर
7. ख़ान सरदार अली ख़ान साहब सरहद
8. जनाब मुहम्मद यूसुफ़ सिद्दीक़ी साहब, टोंक
9. सरदार मुहम्मद अकबर ख़ान साहब, कैमलपुर
10. क़ाज़ी हमीदुल्लाह साहब, सियालकोट
11. सैयद अब्दुल अज़ीज़ शरक़ी साहब
12. चौधरी शफ़ीअ अहमद साहब, यू०पी०

इनके अलावा क़ैय्यिम जमाअत को मजलिसे शूरा का बहैसियत उहदादार (पदाधिकारी) रुक्न मुक़र्रर किया गया।

अब नया चुनाव तीन साल के लिए किया जा रहा है और इसका तरीक़ा यह रखा गया है कि जमाअत का हर रुक्न एक से लेकर जितना मुनासिब समझे मजलिसे शूरा के लिए मुनासिब अरकान के नाम लिखकर चुनाव का परचा अपने दस्तख़त के साथ वापस भेज दे। इन लोगों में से फिर अमीरे जमाअत बारह सब से ज़्यादा मुनासिब आदमियों का चुनाव कर लेंगे।

क़ैय्यिम जमाअत इस बार भी उहदे की हैसियत से मजलिसे शूरा का रुक्न होगा।

हमारी मुशकिलें

वैसे तो जमाअत के रास्ते में बहुत-सी मुशकिलें हैं लेकिन इस वक़्त मर्कज़ अपना न होने की मुशकिल ने दूसरी सारी मुशकिलों की अहमियत को ख़त्म कर

दिया है। जमाअत के सामने जितनी तामीरी तजवीज़ें हैं उन सबके अमल में आने का दारोमदार इसपर है कि नई इमारत बनवाई जाए, और नई इमारत का बनना उस वक़्त तक मुमकिन नहीं है जब तक जमाअत के पास ख़ुद अपनी ज़मीन न हो। सितम्बर 1946 ई० में मजलिसे शूरा यह फ़ैसला कर चुकी है कि किसी ऐसे वक़्फ़ की ज़मीन पर जमाअत का रुपया ख़र्च न किया जाए जिसका अधिकार अमीरे जमाअत को उहदे की हैसियत से हासिल न हो। इस फ़ैसले की बिना पर हम यहाँ कोई तामीर नहीं कर सकते और इसी वजह से हमारे सारे काम एक हद पर आकर रुक गए हैं।

अब मर्कज़ के बारे में यह स्कीम बनाई गई है कि पंजाब की किसी मुनासिब जगह पर 50-60 एकड़ ज़मीन का कोई टुकड़ा अरकान और क़रीबी हमदर्द मिलकर इस तरह ख़रीदें कि आधा हिस्सा जमाअत को दें और आधा अपने लिए रख लें। ज़मीन सारी की सारी जमाअत की रजिस्टर्ड सोसायटी के नाम ख़रीदी जाएगी और वह आधा हिस्सा रखकर बाक़ी आधा हिस्से के मुताबिक़ ख़रीदारों में बाँट देगी। यह स्कीम तफ़सील से छपवाकर हर रुक्ने जमाअत के पास भेज दी गई है। अगर यह स्कीम कामयाब हो गई तो मर्कज़ की मौजूदा ज़रूरतों के लिए ज़मीन जमाअत को मुफ़्त मिल जाएगी क्योंकि जमाअत की माली हालत इस वक़्त ऐसी है कि अगर ज़मीन भी ख़ुद ही ख़रीदे तो फिर बनाने के लिए हमारे पास कुछ भी नहीं बचता।

ज़मीन ख़रीदने में बहुत-सी क़ानूनी मुशकिलें भी हैं, ज़मीन दूसरे के नाम मुंतक़िल करने का ऐक्ट, शुफ़अ (पड़ोसी का यह हक़ कि अगर वह चाहे तो सबसे पहले ज़मीन वही ख़रीदे) और मंसूख़ (रद्द) करने की बेशुमार रुकावटें हैं। हम अपने अरकान और हमदर्दों से उम्मीद रखते हैं कि वे फुलवर ज़िला जालंधर से लेकर झेलम और रावलपिंडी तक मेन लाइन पर और किसी अच्छे स्टेशन से क़रीब 50-60 घुमाव का टुकड़ा ज़मीन तलाश और हासिल करने में हमारी मदद करें। पंजाब राज्य के जमाअत के अरकान को ख़ास तौर पर इस तरफ़ ध्यान देना चाहिए ताकि जमाअत के रुके हुए काम जल्द से जल्द आगे बढ़ सकें।

जमाअत के काम में दूसरी बड़ी मुशकिल जिसकी वजह से ऊपर बयान की गई मुशकिल और ज़्यादा सख़्त बन गई है वह अमीर जमाअत की लगातार और ग़ैर-मामूली बीमारी है। वे ढाई-तीन साल से गुर्दे के मर्ज़ में मुब्तिला हैं। पिछले सालाना इलाहाबाद के इजतिमा में वे गए तो, लेकिन उसमें कोई हिस्सा न ले

सके। इजतिमा के बाद ऑपरेशन का ख़याल था लेकिन इसी इजतिमा के मौक़े पर हकीमों और डाक्टरों ने मिलकर कांफ्रेंस की और इस बात पर ज़ोर दिया कि ऑपरेशन से पहले पथरी को दवाइयों से निकालने की कोशिश की जाए। इलाज शुरू किया गया लेकिन कोई फ़ायदा न हुआ, बल्कि तबीअत और ज़्यादा ख़राब हो गई। अख़िरकार अक्तूबर के महीने में ऑपरेशन करवाया गया तो बाएँ गुर्दे से पाँच पथरियाँ निकलीं। ख़ुदा का शुक्र हुआ कि गुर्दा सही-सलामत बच गया। ऑपरेशन से अभी सेहत पूरी तरह ठीक भी नहीं हुई थी कि जनवरी के तीसरे हफ़्ते में फिर गुर्दे में दर्द हुआ। एक्सरे करवाने से मालूम हुआ कि फिर तीन पथरियाँ बनने लगी हैं। हिन्दुस्तान और दूसरे मुल्कों के माहिर डाक्टरों से मशविरा लिया गया तो उन्होंने ऑपरेशन को ज़रूरी बताया लेकिन अब ऑपरेशन का इरादा छोड़कर एक हकीम साहब का इलाज शुरू किया गया है और इससे बहुत फ़ायदा है।[1] अगर अमीर जमाअत की सेहत ठीक रहती तो काम अब तक बहुत ज़्यादा आगे बढ़ गया होता।

फिर पैसों और कारकुनों की कमी की वजह से भी ज़्यादातर काम रुके पड़े हैं और मुश्किलों के क़ायम रहने और दूर न होने की बड़ी वजह यह भी है। अगर हमारे पास पैसे और कारकुन काफ़ी तादाद में मौजूद हों तो ज़्यादातर मुश्किलों पर आसानी से क़ाबू पाया जा सकता है। मुल्क की बद-अमनी ने हमारी आमदनी पर बहुत ज़्यादा असर डाला है। न काग़ज़ वक़्त पर मिल रहा है, न किताबें वक़्त पर छप सकती हैं। और जो मौजूद भी हैं वे भी बुकिंग की पाबन्दियों की वजह से हर जगह ज़रूरत के मुताबिक़ नहीं भेजी जा सकती हैं।

मर्कज़ी बैतुलमाल और उसका हिसाब

अब मैं आपके सामने जमाअत के मर्कज़ी बैतुलमाल का हिसाब पेश करता हूँ ताकि आपको पिछले साल में जमाअत की माली हालत का भी ठीक-ठीक अन्दाज़ा हो जाए।

---

1. अल्लाह का शुक्र है कि इस इलाज से 8 जून 1947 ई0 को मटर के दाने के बराबर एक पथरी निकली। एक्सरे कराने से मालूम हुआ है कि गुर्दे में अब दो पथरियाँ बाक़ी हैं।

तफ़सील आमदनी मर्कज़ी बैतुलमाल, जमाअत इस्लामी

(1 अप्रैल 1946 से 28 फ़रवरी 1947 ई० तक)

	रु०	आने	पै०
1. किताब की बिक्री	35187	13	9
2. एआनत (सहयोग)	17522	13	6
3. ज़कात	17436	6	0
4. प्रेस की बिक्री	2300	0	0
5. मुतफ़र्रिक़ (विविध)	4789	15	6
6. क़र्ज़ की वुसूली	108	6	0
7. अमानत	1354	12	0
कुल आमदनी	78700	2	9
पिछले साल का बक़ाया	23809	15	7
कुल योग	101510	2	4
वुसूल होनेवाली रक़म			
किताब की मद में	14719	13	0
क़र्ज़ की मद में	4548	11	9
	19268	8	9
स्टाक			
मौजूद किताबें	43120	4	6
काग़ज़	1500	0	0
दीगर (अन्य)	2765	8	6
कुल	47385	13	0

मर्कज़ी बैतुलमाल जमाअत इस्लामी के ख़र्च की तफ़सील

1 अप्रैल 1946 से 28 फ़रवरी 1947 ई० तक

1. शोबा मक्तबा	39469	1	9
2. शोबा तालीम	1416	14	3
3. शोबा तर्जुमा	4451	15	0
4. शोबा इन्तिज़ाम व नज़्म जमाअत (मुक़ामी व बैरूनी)	6611	7	9
5. स्टेशनरी	401	9	3
6. सफ़र ख़र्च	428	13	6
7. डाक ख़र्च	254	13	6
8. तरबियतगाह (Training Centre)	263	1	6
9. मेहमानख़ाना	1031	1	9
10. ज़रूरतमन्दों की मदद	1841	12	3
11. बिहार के मज़लूमों की मदद (मर्कज़ी बैतुलमाल से)	1445	3	9
12. तामीरात	6403	5	6
13. फ़र्नीचर	212	12	0
14. लाइब्रेरी	198	4	0
15. रीडिंग रूम	75	15	6
16. अमानत की वापसी	188	4	0
17. क़र्ज़	4548	11	9
18. मुतफ़र्रिक़ (विविध)	605	15	6
19. ग़ल्ला	1911	1	9
कुल ख़र्च	71261	3	3
कुल आमदनी	101510	2	4
कुल ख़र्च	71261	3	3
बाक़ी	30248	15	1

इसके बाद जनाब मुहम्मद यूसुफ़ सिद्दीक़ी क़ैय्यिम हलक़ा राजपूताना व मध्य भारत ने अपने हल्क़े की सालाना रिपोर्ट पेश की, और यह इजलास ख़त्म हुआ।

नोट : सूबा बम्बई (मुम्बई) के क़ैय्यिम साहब अपनी बीमारी की वजह से इजतिमा में नहीं आ सके थे इसलिए वहाँ की रिपोर्ट पेश नहीं हो सकी।

दूसरा इजलास

दिन जुमा

यह इजलास ख़ास था और जुमा की नमाज़ के बाद ठीक तीन बजे क़यामगाह के हाल में शुरू हुआ। इस इजलास में वे तजवीज़ और सवाल पेश हुए जो मुख़्तलिफ़ जमाअतों और अरकान की तरफ़ से आए हुए थे। पहले क़ैय्यिम जमाअत उनमें से एक-एक तजवीज़ और सवाल को पढ़कर सुना देते थे, उसके बाद तजवीज़ करनेवाले और दूसरे हज़रात को मौक़ा दिया जाता, ताकि वे इसके हक़ में या ख़िलाफ़ अपने ख़यालात का इज़हार करें और आख़िर में अमीरे जमाअत अपने फ़ैसले या राय का इज़हार करते और हाज़िरीन को फिर मौक़ा दिया जाता कि अगर कोई साहब इससे मुत्मइन न हुए हों तो उसकी वजह बयान करें। लेकिन इसका कोई मौक़ा न आया। ये तजवीज़ें और सवालात और उनपर अमीरे जमाअत ने अपने जिस फ़ैसले या राय का इज़हार किया वे नम्बरवार इस तरह से हैं—

1. होमली सेंडल इंडस्ट्रीज़, कानपुर की तरफ़ से जो तिजारती स्कीम शुरू की गई है उसके ख़िलाफ़ लोगों को तरह-तरह की शिकायतें पैदा हो रही हैं और इस बात का बड़ा ख़तरा है कि वह जमाअत की बदनामी की वजह, बल्कि इसके लिए फ़ितना साबित हो। कुछ लोग इस स्कीम की ख़राबियों को देखकर तहरीके इस्लामी से बदगुमान हो रहे हैं और यह कहने लगे हैं कि तहरीक के उसूल अच्छे हों तो हों मगर तहरीक के लोग यहाँ भी इसी तरह के इकट्ठा हैं जैसे दूसरी तहरीकों में। इसलिए इस तरफ़ फ़ौरी और ख़ास तवज्जोह की ज़रूरत है।

अमीरे जमाअत : हमारे पास कुछ दिनों से इस तरह की शिकायतें आ रही हैं। जब हमने इस स्कीम को मंज़ूर किया था, उस वक़्त इसकी तफ़सील और उसके सारे अमली पहलू हमारे सामने नहीं थे। अब इस स्कीम को हाफ़िज़ रशीदुल हसन साहब की ज़ाती (निजी) स्कीम क़रार दे दिया गया है और हल्क़ा तुज्जार और अहले सनअत को इससे अलग करके जनाब सुल्तान अहमद

साहब (फ़ेअर प्राइज़ शाप, लाल बाग़ सरकस, लखनऊ) के हवाले कर दिया गया है। हाफ़िज़ साहब की इस तिजारती स्कीम के नज़्म व इन्तिज़ाम से हमें कोई सरोकार नहीं, अलबत्ता उनके ख़िलाफ़ अगर ग़लत मामला करने की कोई शिकायत हो तो वह वाज़ेह मिसालों और तफ़सील के साथ हमारे पास आनी चाहिए ताकि उसकी छान-बीन की जाए। अब तक जितनी शिकायतें भी हमारे पास आई हैं वे बद-इन्तिज़ामी (Mis-management) की शिकायतें हैं, ग़लत मामला करने की कोई शिकायत हमारे सामने नहीं आई।

तजवीज़ करनेवाले : जमाअत के इस फ़ैसले को प्रकाशित कर देना चाहिए ताकि लोगों की ग़लतफ़हमी दूर हो जाए और आइन्दा वे इस स्कीम को जमाअत की तरफ़ मंसूब न करें।

अमीरे जमाअत : इस इजतिमा की रूदाद में यह प्रकाशित हो जाएगा।

2. तफ़हीमुल क़ुरआन जितनी तैयार हो चुकी है उसकी छपाई का जल्द इन्तिज़ाम किया जाए। क़ुरआन-फ़हमी के सिलसिले में इसकी बहुत ज़रूरत है।

अमीरे जमाअत : मेरी सेहत की ख़राबी और उर्दू और अरबी के किसी अच्छे कातिब का न मिलना जो मेरे पास रहकर किताबत का काम करे, इस काम में रुकावट पैदा कर रहे हैं। इन इजतिमाआत से फ़ारिग़ होकर इनशा अल्लाह इसका इन्तिज़ाम किया जाएगा। जहाँ तक इस ज़रूरत का ताल्लुक़ है, हम ख़ुद बहुत शिद्दत से इसे महसूस कर रहे हैं।

3. जमाअत इस्लामी की तरफ़ से एक वफ़्द (प्रतिनिधि मण्डल) मुक़र्रर किया जाए जिसके मेम्बरों में मौलाना अमीन अहसन साहब और मौलाना सिब्ग़तुल्लाह साहब ज़रूर हों और यह वफ़्द मौलाना .... और मौलाना .... और दूसरे मशहूर और बाअसर उलमा और मशाइख़ के पास पहुँचकर जमाअत इस्लामी के नस्बुल-ऐन और काम करने के तरीक़े के मुताल्लिक़ ज़बानी बात-चीत करे और जो ग़लतफ़हमियाँ हों उनको दूर करने की कोशिश करे।

और यही वफ़्द या दूसरा वफ़्द......... और दूसरे मुसलमान लीडरों के पास जाए और उनको इस्लाम के अस्ल और सही तक़ाज़ों से वाक़िफ़ करने की कोशिश करे और फिर यही वफ़्द (प्रतिनिधि-मण्डल).......... और दूसरे हिन्दू और अछूत लीडरों के पास पहुँचकर उनके सामने इस्लाम की दावत पेश

करे और उन्हें बताए कि इस्लाम, इस्लामी सियासत और इस्लामी निज़ाम की हक़ीक़त क्या है।

अमीरे जमाअत : यह तजवीज़ हमारे सामने कई साल से बार-बार लाई जा रही है। यह असल में लीडरों की तबीयत और उनकी नफ़सियात (Psychology) से जानकारी न होने का नतीजा है। लीडरों की नफ़सियात आम लोगों से बिलकुल अलग होती हैं। किसी तहरीक (Movement) में लीडर वही आदमी हो सकता है जो उस तहरीक के मक़सद और नस्बुल ऐन में सबसे ज़्यादा पक्का और सबसे ज़्यादा साबित क़दम और इस तहरीक के उसूलों पर सबसे ज़्यादा बढ़कर ईमान रखनेवाला हो, जिसका उन मक़सदों के लिए लगाव इतना ज़्यादा हो चुका हो कि उनके हासिल करने के लिए न सिर्फ़ वह ख़ुद नतीजे से बेपरवाह होकर मैदान में कूद सके, बल्कि अपने पक्के इरादे और अमल की ताक़त से अपने आस-पास के लोगों को भी उन मक़सदों की मुहब्बत में लगा दे। इसलिए किसी आदमी का लीडर होना ही इस बात की दलील है कि वह अपनी जमाअत का आख़िरी आदमी है जिसे अपने उसूलों और मक़सदों से हटाया या उनके ख़िलाफ़ मुत्मइन किया जा सकता है।

फिर यह जमहूरी (Democratic) तहरीकों का ज़माना है और इस वक़्त ताक़त और सत्ता जनता और पब्लिक के हाथ में है। इस वक़्त के लीडर देखने में लोगों के आगे, लेकिन हक़ीक़त में उनके पीछे चलनेवाले हैं। इसलिए लीडरों को मुतास्सिर (प्रभावित) करने का सही और असरदार तरीक़ा उनको सीधे तौर पर मुख़ातिब करना नहीं, बल्कि यह है कि उन लोगों को अपनी तरफ़ ख़ींचा जाए जिनके बल पर वे लीडरी कर रहे हैं और जिनको खींचना निस्बतन बहुत आसान है।

जब तक उनकी एक बड़ी तादाद आप अपने साथ न मिला लें, लीडर लोग आपकी बात सुनने के लिए तैयार नहीं हो सकते और न ही उनको इसकी ज़रूरत महसूस हो सकती है।

फिर किसी लीडर के पास उसकी अपनी दावत के ख़िलाफ़ कोई दूसरी दावत सीधे तौर पर लेकर जाना समझाने का सबब तो नहीं अलबत्ता आपसी टकराव का सबब ज़रूर हो सकता है।

4. मर्कज़ से एक हिन्दी और गुजराती रिसाला या अख़बार जारी किया

जाए। हिन्दी और गुजराती जाननेवाली बड़ी तादाद में मुसलमान और दूसरी क़ौमें दावते इस्लामी से बिलकुल अनजान हैं।

अमीरे जमाअत : मर्कज़ से तो ऐसे किसी रिसाले (पत्रिका) या अख़बार के जारी होने की कोई शक्ल नहीं है और न पंजाब में इसका इन्तिज़ाम हो सकता है, अलबत्ता हिन्दी और गुजराती दारुल इशाअत अपने पैरों पर खड़े हो जाएँ और इन ज़बानों में कुछ लिट्रेचर तैयार होकर फ़िज़ा हमवार हो जाए तो आगे चलकर इन दारुल इशाअतों से रिसालों और अख़बारों के इजरा का भी काम लिया जाएगा। चुनांचे बम्बई की जमाअत के अमीर का जो इस वक़्त गुजराती दारुल इशाअत के इंचार्ज भी हैं, पूरा वक़्त लेने का इन्तिज़ाम किया जा रहा है।

5. बच्चों के लिए ट्रेनिंग सेन्टर क़ायम किया जाए ताकि आनेवाली नस्ल ठीक और सही लाइनों पर तरबियत पाकर तहरीक के कामों के लिए तैयार हो सके।

अमीरे जमाअत : यह मक़सद दर्सगाह के क़ियाम से हासिल हो सकेगा, और दर्सगाह के क़ियाम के लिए ज़रूरी है कि जमाअत के पास अपना मर्कज़ और ज़मीन हो ताकि उसपर इमारतें तैयार करके दर्सगाह शुरू की जा सके। इस वक़्त हम मर्कज़ के लिए अपनी ज़मीन हासिल करने की कोशिश कर रहे हैं।

इन तजवीज़ों के बाद एक साहब ने कुछ सवाल किए जो जवाबों के साथ इस तरह हैं—

सवालात :

1. यह तस्लीम है कि मुस्लिम लीग के पेशे नज़र जो प्रोग्राम है वह ग़ैर-इस्लामी है, लेकिन इस वक़्त सूरतेहाल (स्थिति) यह है कि मुसलमानों की अक्सरियत दीन से बेख़बर है, आलिमों ने उन्हें इस्लाम समझाने की कोशिश नहीं की, वे अपने राजनैतिक नेताओं के बताए हुए रास्ते को ही सीधा रास्ता और इस्लाम का सही रास्ता समझ रहे हैं और ग़ैर-मुस्लिम क़ौमें उनके वुजूद को मिटाने के लिए ज़ुल्म और ख़ून-ख़राबे से काम ले रही हैं। इन हालात में उनकी मज़लूमी में जमाअत उनका साथ क्यों न दे और ग़ैर-मुस्लिमों से इस सुरक्षात्मक जंग में शामिल क्यों न हो?

2. इस वक़्त इंग्लैण्ड हिन्दुस्तान की हुकूमत हिन्दुस्तानियों के हवाले कर रहा है और इसकी दो शक्लें हैं—एक यह कि हिन्दुओं का हिस्सा हिन्दुओं के

हवाले किया जाए और मुसलमानों का हिस्सा मुसलमानों के हवाले किया जाए, और दूसरी यह कि पूरे मुल्क की बागडोर अक्सरियत यानी हिन्दुओं के हवाले कर दी जाए। ज़ाहिर है कि अगर आपने मुस्लिम लीग का साथ न दिया तो ग़ैर-मुस्लिम अक्सरियत सारे मुल्क पर और मुसलमानों पर हावी हो जाएगी।

अमीरे जमाअत : इन सवालों का साफ़ मतलब यह है कि मौजूदा हालात में मुसलमानों की इस क़ौमी तहरीक का साथ दिया जाए और जब ये हालात ख़त्म हो जाएँ तो फिर उनका साथ छोड़ दिया जाए, क्योंकि इसे तो सवाल करनेवाले ख़ुद भी स्वीकार करते हैं कि यह तहरीक (Movement) ग़ैर-इस्लामी है। मगर मैं उनको यक़ीन दिलाता हूँ कि जिस तरह के हालात देखकर वह हमसे इस वक़्त माँग कर रहे हैं, ऐसे हालात कभी ख़त्म न होंगे, मसलों पर मसले पैदा होते चले जाएँगे और हर मसला पहले मसले से ज़्यादा सख़्त होगा और आप कहीं भी लकीर नहीं खींच सकेंगे कि फ़लाँ हद तक तो हम इन क़ौमी तहरीकों (National Movements) का साथ देंगे और वहाँ पहुँचकर उनका साथ छोड़ देंगे। यह तो है इस सवाल का एक पहलू। दूसरा पहलू जो इससे कहीं ज़्यादा ग़ौर के क़ाबिल है वह यह है कि जब आप एक तहरीक को ग़ैर-इस्लामी मान रहे हैं तो फिर किस मुँह से एक मुसलमान से यह माँग करते हैं कि उसका साथ दिया जाए। जिन मसलों और परेशानियों का इतना रोना रोया जा रहा है, ये मसले और परेशानियाँ सिरे से पैदा ही नहीं होतीं अगर मुसलमान इस्लाम के वाक़ई सच्चे नुमाइन्दे होते। और अगर मुसलमान अब भी सच्चे मुसलमान बन जाएँ तो आज ही ये सारे मसले ख़त्म हो जाते हैं।

इस्लाम की लड़ाई और क़ौमी लड़ाई एक साथ नहीं लड़ी जा सकती। अगर लोग इस्लाम और इस्लामी काम के तरीक़ों को अपने नफ़्स की ख़ाहिशों के ख़िलाफ़ पाकर उनको छोड़ देना चाहते हैं तो हेर-फेर के रास्तों से आने के बजाय साफ़-साफ़ क्यों नहीं कहते कि अल्लाह और रसूल के काम को छोड़िए और हमारे नफ़्स के काम में हिस्सा लीजिए।

अमीरे जमाअत की इख़तितामी (Conclusive) तक़रीर

इसके बाद अमीरे जमाअत ने एक मुख़्तसर (संक्षिप्त) तक़रीर के ज़रिये जमाअत के अरकान और हमदर्दों को ये हिदायतें दीं—

(1) मैं कुछ अरकान में ज़िम्मेदारी का एहसास और सरगर्मी कम पाता हूँ। सबसे पहले तो जो अह्द (वादा) आपने अपने रब से किया है उसका तक़ाज़ा यह है कि आपको हर पल अपने रब के सामने जवाबदेही का एहसास रहे, दूसरे अब इस मुल्क में और बाहर जो हालात पैदा हो रहे हैं वे भी तक़ाज़ा करते हैं कि अब आप अपनी सारी ताक़तें इस रास्ते में लगा दें। शैतानी ताक़तें इस वक़्त पूरे ज़ोर-शोर से अपने सारे ज़राए और वसाइल दुनिया में फ़साद फैलाने के लिए वक़्फ़ किए हुए हैं और उसके लिए हर क़ुरबानी पेश कर रही हैं। अगर हमारा सही मानों में यह ईमान है कि सच्चा दीन ही इनसान की फ़लाह और सलामती की ज़मानत देता है और अगर हम यह समझते हैं कि इस मुल्क के रहनेवाले जिस रास्ते पर जा रहे हैं, वह तबाही की तरफ़ ले जानेवाला रास्ता है, तो हमारा फ़र्ज़ है कि अपनी इस आवाज़ को इस मुल्क में बसनेवाले एक-एक आदमी तक पहुँचाने की कोशिश करें। वह माने या न माने यह उसकी मर्ज़ी पर निर्भर है। हमारा काम पहुँचा देना है, ताकि जो कोई हमारा साथ दे, यह जानता हुआ साथ दे कि वह किस चीज़ का साथ दे रहा है, और जो आदमी विरोध के लिए खड़ा हो वह भी यह जानता हुआ विरोध करे कि किस चीज़ का विरोध कर रहा है।

(2) इस हल्क़े के अरकान और हमदर्दों में आपसी सहयोग भी कम पाया जाता है, उन्हें आपस में इससे बहुत ज़्यादा जुड़ा हुआ होना चाहिए। पंजाब में इस वक़्त हमारे काम की रफ़्तार बहुत तेज़ है और इसकी वजह यह है कि हर कमिश्नरी के अरकान हर तीन महीने पर इजतिमा करते रहते हैं। कुछ ज़िलों के लोग हर महीने इकट्ठा होते हैं, आपस में सहयोग के रास्ते निकालते हैं, अपने पिछले कामों का जाइज़ा लेते हैं और आइन्दा के लिए काम को आगे बढ़ाने का प्रोग्राम बनाते हैं। मैं चाहता हूँ कि इस हल्क़े (क्षेत्र) के जो चार डिवीज़न (Division) बनाए गए हैं वे भी इसी तरीक़े पर काम शुरू करें। हर डिवीज़न के लोग हर तीसरे महीने जमा हों और ये इजतिमाआत जगह बदल-बदलकर

अलग-अलग जगहों पर किए जाते रहें। इस तरह आपस में सहयोग बढ़ेगा, कारकुनों की दिलचस्पी भी ताज़ा होती रहेगी, दावत को फैलाने के भी नए-नए मौक़े सामने आएँगे और इजतिमाआत की कशिश प्रभावित होनेवाले लोगों को भी खींचती चली जाएगी।

(3) अरकाने जमाअत बालिग़ों की तालीम (प्रौढ़ शिक्षा, Adult Education) की तरफ़ ध्यान नहीं दे रहे हैं। मैं चाहता हूँ कि वे इस काम की अहमियत को समझें। अगर आपको आगे चलकर जनता के बीच काम करना है और अपनी इस तहरीक (Movement) को गाँवों में, मज़दूरों में और आम शहरी आबादियों में फैलाना है तो इसके लिए ज़रूरी है कि आप जनता के क़रीब से क़रीब होने की कोशिश करें और उनके अन्दर काम करने के लिए ख़ुद उन्हीं में से कारकुन तैयार करें। बालिग़ों की तालीम (Adult Education) से यही मक़सद हमारे सामने है। अपनी-अपनी बस्ती के अनपढ़ लोगों के साथ सम्बन्ध बढ़ाइए। उनकी रोज़ाना ज़िन्दगी और मामलात में दिलचस्पी लीजिए, उनके सामने अनपढ़ रहने के नुक़्सान साफ़ तौर पर बयान कीजिए। फिर जब एक-दो आदमी भी पढ़ने के लिए तैयार हो जाएँ तो बिना कुछ लिए उनको पढ़ाना शुरू कर दीजिए और इस सिलसिले में जिस सामान की भी ज़रूरत हो उसका इन्तिज़ाम ख़ुद कीजिए। उनके साथ मुहब्बत, हमदर्दी और भाईचारे का बरताव कीजिए, हर परेशानी और दुख में उनके काम आइए और उनके सच्चे दोस्त और सच्चे सलाहकार बनकर रहिए। उनके अख़लाक़ी और दीनी सुधार में बेसब्री से काम न लीजिए। सीधे तौर पर तबलीग़ के मुक़ाबले में बेहतर तरीक़ा यह है कि जब वे उर्दू पढ़ने के क़ाबिल हो जाएँ तो उन्हें जमाअत के लिट्रेचर में से आसान चीज़ें कोर्स के तौर पर पढ़ानी शुरू कर दी जाएँ। इस तरह आप देखेंगे कि धीरे-धीरे उनके अक़ीदे, अख़लाक़ और अमल सब ठीक होते चले जाएँगे और आगे चलकर यही लोग अपने क्षेत्र और वर्ग में इस तहरीक (Movement) के कारकुन बन जाएँगे।

(4) क़ैय्यिम जमाअत ने शिकायत की है कि कुछ जमाअतें रिपोर्ट भेजने में सुस्ती करती हैं और इस मामले में मुंफ़रिद अरकान का हाल और भी ज़्यादा ख़राब है। यह सूरते हाल अफ़सोसनाक है। पहले हम रिपोर्ट नहीं लेते थे, और इसका नतीजा यह हुआ कि कुछ जगहों पर जमाअतें मुर्दा हो गईं और हमें इसका पता भी नहीं चला। रिपोर्ट भेजने में सुस्ती इस बात का सुबूत है कि जमाअत के

काम और प्रोग्राम से दिलचस्पी कम हो रही है। मुझे उम्मीद है कि फिर दोबारा यह शिकायत पैदा न होगी।

(5) हल्क़ा (क्षेत्र) के क़ैय्यिम के पास हल्क़ावार बैतुलमाल होना चाहिए ताकि वह पूरे हल्क़े के कामों में इस्तेमाल हो सके। हल्क़े की सारी जमाअतों और मुंफ़रिद अरकान को इस बैतुलमाल के क़ियाम में हिस्सा लेना चाहिए। मेरी राय में मुनासिब यह होगा कि जमाअतें एक शरह (मिक़दार) तय कर लें कि वे अपने बैतुलमाल में से इतने फ़ीसद (प्रतिशत) रक़म क़ैय्यिम हल्क़ा के बैतुलमाल में भेजती रहेंगी। मेरे ख़याल में आमतौर पर 10 फ़ीसद काफ़ी होगा। क़ैय्यिम हल्क़े का बैतुलमाल वहाँ की मक़ामी जमाअत (अगर कोई जमाअत उस जगह पर हो) के बैतुलमाल से अलग होगा और हिसाब क़ैय्यिम हल्क़ा अपने हल्क़े के इजतिमाआत में पेश किया करेगा।

(6) मुल्क की मौजूदा ख़ानाजंगी (गृह-युद्ध, Civil War) में, अल्लाह न करे, आपका इलाक़ा मुब्तला हो जाए तो ऐसी हालत में जमाअत की पॉलिसी (Policy) का ठीक-ठीक ख़याल रखकर उसपर अमल कीजिए। इस झगड़े-फ़साद में हमारी असल हैसियत तो भलाई की दावत देनेवाले एक गिरोह की-सी है और हमारा काम यही है कि इस आग को बुझाने की कोशिश करें, लेकिन अगर कहीं आग लग ही जाए तो बचाव (प्रतिरक्षा) में हमारा फ़ितरी मक़ाम मुसलमानों के साथ है, अलबत्ता यह मदद बिना शर्त के न होगी, बल्कि तीन शर्तों के साथ होगी—

1. हम सिर्फ़ बचाव (प्रतिरक्षा) में शामिल होंगे। अगर मुसलमान ज़्यादती करेंगे तो हम उनका साथ न देंगे।

2. मुसलमान इस लड़ाई में इस्लामी हदों की पाबन्दी करें। मिसाल के तौर पर औरतों, बच्चों, बीमारों, बूढ़ों और एक्के-दुक्के मुसाफ़िरों पर हमला नहीं करेंगे। अगर वे ऐसा करेंगे तो हम उनसे अलग हो जाएँगे।

3. लड़ाई के बाद पकड़-धकड़ और मुक़द्दमों के वक़्त भी इस्लामी हदों की पाबन्दी करें। अगर वे झूठी गवाहियाँ देने और बेगुनाहों को पकड़वाने लगें तो हम उनसे अलग हो जाएँगे, क्योंकि हम अपने उसूल किसी दूसरी चीज़ पर क़ुरबान नहीं कर सकते। दुनिया का चाहे कोई काम हो, उसमें हमारा साथ सिर्फ़ इसी हाल में हो सकता है कि इस्लामी हदों और शर्तों की पाबन्दी की जाए।

अमीरे जमाअत की इन हिदायतों के बाद इजलास ख़त्म हुआ।

आम जलसा

18 अप्रैल की रात को मग़रिब की नमाज़ के बाद आम जलसे का प्रोग्राम था और उसमें मक़ामी मुसलमान, हिन्दू और दूसरी ग़ैर-मुस्लिम आबादी को शिर्कत की दावत दी गई थी। अतः छः-सात सौ के क़रीब लोग इस जलसे में शामिल हुए। औरतों के लिए अलग इन्तिज़ाम था।

अमीरे जमाअत को गुर्दे की और नज़ले-खाँसी की बहुत ज़्यादा तकलीफ़ थी लेकिन इसके बावजूद वे ख़िताब के लिए आए, मगर बदक़िस्मती से ठीक वक़्त पर लाउडस्पीकर फेल हो गया और उसे ठीक करने की कोशिश में 20-25 मिनट गुज़र गए। इसके बाद भी जब उसके ठीक होने की ज़ाहिर में कोई शक्ल न रही तो अमीरे जमाअत ने मौलाना मुहम्मद रफ़ी साहब इन्दौरी से फ़रमाया कि वे उनकी तक़रीर 'शहादते हक़' जो उन्होंने दिसम्बर, 1946 ई० में सियालकोट के इजतिमा में की थी, पढ़कर सुनाना शुरू करें ताकि हाज़िर लोगों का वक़्त बरबाद न हो। चुनांचे मौलाना ने यह पूरी तक़रीर पढ़कर सुना दी। उनकी आवाज़ काफ़ी बुलन्द थी इसलिए लाउडस्पीकर की ज़रूरत पेश नहीं आई। इस बीच में लाउडस्पीकर ठीक हो गया और अमीरे जमाअत ने हम्द और सना के बाद अपनी तक़रीर शुरू की। अभी आठ-दस मिनट ही बोल पाए थे कि खाँसी का इतना तेज़ हमला हुआ कि तक़रीर को जारी रखना नामुमकिन हो गया और यह इजलास यहीं ख़त्म कर देना पड़ा।

इस तक़रीर को अमीरे जमाअत ने इजतिमा दारुल इस्लाम के मौक़े पर अपने जुमा के ख़ुतबे में पूरा किया। इसलिए टोंक की रूदाद के बजाय हम इसे रूदाद इजतिमा दारुल इस्लाम में दर्ज करेंगे।

औरतों का इजतिमा

टोंक में जमाअत की हमदर्द और हमख़याल औरतों ने आपस में मिलकर एक हल्क़ा क़ायम कर रखा है। इस हल्क़े की तरफ़ से दरख़ास्त आई कि अमीरे जमाअत की बीमारी की वजह से इजतिमा में औरतों को उनके ख़यालात से फ़ायदा उठाने का मौक़ा नहीं मिल सका इसलिए अमीरे जमाअत उन्हें मौक़ा दें कि वे अपने सवालात और शक व शुब्हे उनके सामने पेश करके आगे के काम

के लिए हिदायतें हासिल कर सकें। इसलिए इस दरख़ास्त के मुताबिक़ 20 अप्रैल 1947 ई० को सुबह 10 बजे औरतों का इजतिमा हुआ। अमीरे जमाअत और शहर के 20-22 इज़्ज़तदार लोग जो उस वक़्त मिलने आए हुए थे, एक कमरे में मौजूद थे और दूसरे कमरे में परदे में औरतें जमा थीं। इस इजतिमा की मुख़्तसर सी कार्रवाई इस तरह है—

सबसे पहले अमीरे जमाअत ने औरतों को इन लफ़्ज़ों में मुख़ातिब किया—

बहनो! मुझे यह मालूम करके बड़ी ख़ुशी हुई कि यहाँ औरतों में भी इस्लामी तहरीक (Islamic Movement) मक़बूल हो रही है और आपने इस दावत को फैलाने के लिए अपना एक हल्क़ा मुनज़्ज़म (संगठित) कर लिया है। हमारे इस काम में औरतों के शामिल होने और उनकी मदद की उतनी ही ज़रूरत है जितना मर्दों के शामिल होने और उनकी मदद की है। इनसानी ज़िन्दगी में आप बराबर के हिस्सेदार हैं और ज़िन्दगी के जो पहलू आपसे ताल्लुक़ रखते हैं, वे उन पहलुओं से किसी तरह भी अहमियत में कम नहीं हैं जो मर्दों से ताल्लुक़ रखते हैं। जिस तरह गाड़ी के दो पहियों में से कोई भी उस वक़्त तक ठीक नहीं चल सकता जब तक कि दूसरा पहिया उसका साथ न दे। इसी तरह इनसान की इजतिमाई ज़िन्दगी का निज़ाम भी कभी ठीक नहीं चल सकता जब तक कि उसके चलाने में मर्दों के साथ-साथ औरतें भी बराबर का हिस्सा न लें। ख़ुदा ने इस गाड़ी को बनाया ही इस तरह है कि यह दो पहियों पर हरकत करती है, और अगर एक पहिया जम जाए या उल्टी हरकत करने लगे तो अकेले दूसरा पहिया उसको लेकर ज़्यादा दूर तक और ज़्यादा देर तक नहीं घसीट सकता।

यह एक ऐसी हक़ीक़त है जिसकी बिना पर हर इजतिमाई तहरीक औरतों की शिरकत और मदद को अहमियत देने पर मजबूर है। मगर ख़ास तौर से इस्लामी तहरीक तो इसको बहुत ही ज़्यादा अहमियत देती है। इसकी एक वजह तो यही है कि इस्लाम ठीक-ठीक ख़ुदा की बनाई हुई शक्ल के मुताबिक़ इनसानी ज़िन्दगी का निज़ाम ठीक करना चाहता है, जिसके लिए औरतों का ठीक होना उतना ही ज़रूरी है जितना मर्दों का ठीक होना। लेकिन इससे भी बढ़कर दूसरी वजह यह है कि इस्लाम जिस ख़ुदा की बन्दगी की तरफ़ बुलाता है वह औरतों का भी वैसा ही ख़ुदा है जैसा मर्दों का है, जिस दीन को हक़ (सच्चा) कहता है वह औरतों के लिए भी वैसा ही सच्चा है जैसा मर्दों के लिए, जिस नजात को मक़सूद समझता है उसकी ज़रूरत औरतों को भी वैसी ही है जैसी मर्दों को है,

जिस दोज़ख़ से बचाना चाहता है वह औरतों के लिए भी उतनी ही भयानक है जितनी मर्दों के लिए है और जिस जन्नत की उम्मीद दिलाता है, वह औरतों को भी अपनी ही कोशिश से मिल सकती है, जिस तरह मर्दों को अपनी कोशिश से। अगर किसी मर्द की निजात (मुक्ति) के लिए यह बात काफ़ी नहीं हो सकती कि उसकी बीवी या माँ या बहन ईमान लाई थी या ख़ुदा की ख़ुशी हासिल करने के लिए कोशिश करती रही थी। तो ज़ाहिर है कि कोई औरत भी सिर्फ़ इस बिना पर नजात नहीं पा सकती कि उसका शौहर या बाप या भाई ईमान लाया था और उसने अपने ख़ुदा को ख़ुश करने के लिए जान खपाई थी। ख़ुदा के यहाँ कोई आदमी कुछ भी नहीं पा सकता जब तक कि उसने ख़ुद कुछ पाने की कोशिश न की हो। इसलिए इस्लाम का तक़ाज़ा यह है कि औरतों और मर्दों को एक जैसी नजात (मुक्ति) की फ़िक्र हो। हर एक दिल व जान से वह ख़िदमतें बजा लाए जो उसे ख़ुदा की सज़ा से बचाएँ और उसके इनाम का हक़दार बनाएँ, कोई मर्द या औरत इस तरह अपने आपको दूसरों के साथ न बाँध ले कि उसके साथी बँधे-बँधे दोज़ख़ में जा पहुँचे, और न कोई मर्द या औरत अन्धों की-सी ज़िन्दगी गुज़ारे कि उसके अपने घर में दीन और ईमान की रौशनी मौजूद हो मगर वह उससे फ़ायदा न उठाए।

तहरीके इस्लामी (Islamic Movement) का जो इतिहास हमारे सामने है, वह हमें बताता है कि शुरू से औरतों ने इस आन्दोलन में मर्दों के साथ बराबर का हिस्सा लिया है। नबी (सल्ल०) पर ईमान लाने की सआदत (सौभाग्य) सबसे पहले जिसको नसीब हुई वह एक औरत ही थीं, यानी हमारी आपकी और सब मुसलमानों की माँ हज़रत ख़दीजतुल कुबरा (रज़ि०)। वही थीं जिन्होंने नुबूवत के बोझ को उठाते वक़्त नबी (सल्ल०) के काँपते हुए दिल को तसल्ली दी, वही थीं जो दस साल तक हर क़िस्म की सख़्तियों में नबी (सल्ल०) की बेहतरीन साथी बनी रहीं और उन्हीं की पूँजी थी जिससे मक्की दौर में इस्लाम का मिशन चलता रहा। नुबूवत के पहले तीन सालों में जो 55 लोग ईमान लाए थे उनमें 9 औरतें भी थीं। सात-आठ साल तक मक्का में बड़ा ही ज़ुल्म व सितम सहने के बाद जो 83 लोग अपना घर-बार छोड़कर हबश की तरफ़ हिजरत कर गए थे, उनमें 18 औरतें थीं जिन्होंने दीन और ईमान के लिए जिलावतनी (देश निकाला) की मुसीबतों में अपने शौहरों और भाइयों का साथ दिया। मक्का में जिन लोगों ने काफ़िरों के हाथों सबसे बढ़कर ज़ुल्म सहे उनमें अगर हज़रत

बिलाल और हज़रत अम्मार जैसे मर्द थे तो उम्मे उबैस, उम्मे अम्मार और ज़न्नीरा जैसी औरतें भी थीं। इसी तरह मदीना में जहाँ अनसार के मर्दों ने इस्लाम के लिए कुरबानियाँ दीं, वहीं औरतों ने भी उनमें कुछ कम हिस्सा नहीं लिया। क्या आपने उस नेक औरत का क़िस्सा नहीं सुना जिसे जंगे-उहुद के मौक़े पर शौहर, बाप और भाई की शहादत की ख़बर पहुँची तो उसने पूछा कि मुझे यह बताओ कि अल्लाह के रसूल तो ख़ैरियत से हैं? और जब उसने नबी (सल्ल०) को ख़ैरियत से देख लिया तो कहने लगी—

"आप ज़िन्दा हैं तो हर मुसीबत हल्की है।"

इसी जंगे-उहुद में एक औरत उम्मे अम्मारा पानी पिलाने का काम कर रही थीं। जब उन्होंने देखा कि नबी (सल्ल०) ज़ख़्मी हो गए हैं और काफ़िरों ने आपका घेराव कर लिया है तो तलवार तानकर सामने आ खड़ी हुईं और आप (सल्ल०) को बचाने के लिए लड़ती रहीं, यहाँ तक कि काँधे पर गहरा ज़ख़्म खाया। ये और ऐसे बहुत सारे वाक़िआत बताते हैं कि इस्लाम के रास्ते में जो कुछ मर्दों ने किया है, उससे कुछ कम औरतों ने नहीं किया है। उन्होंने इस दीन के लिए ज़ुल्म भी सहे, ख़तरे भी मोल लिए, जान और माल की कुरबानियाँ भी दीं, रिश्तेदारों को भी छोड़ा, देश निकाला और भूखे रहने की तकलीफ़ें भी झेलीं और अपने ईमानदार बापों, शौहरों और भाइयों के साथ वफ़ादारी का हक़ भी पूरी तरह निभाया। ये आपसे पहले गुज़र जानेवाली औरतों के कारनामे हैं जिनकी वजह से शुरू में इस्लाम दुनिया पर छाया था, और आज अगर दीन को फिर दुनिया पर छाना है तो यह इसके बिना नहीं हो सकता कि आप उन्हीं इस्लाम की जाँनिसार औरतों के नक़्शे-क़दम पर चलें और उन्हीं की तरह ईमानी इख़लास (निष्ठा) का सुबूत दें।

इस वक़्त औरतों के करने का असल काम यह है कि वे अपने घरों को और अपने ख़ानदान और अपने पड़ोसियों और अपने मिलने-जुलनेवालों के घरों को शिर्क, जाहिलीयत, नाफ़रमानी और बदकारी से पाक करने की कोशिश करें, घरों के रहन-सहन को इस्लामी बनाएँ, पुरानी और नई जाहिलीयतों के असर से ख़ुद बचें और दूसरों को बचाएँ। अनपढ़ और कम पढ़ी-लिखी औरतों में दीन की रौशनी फैलाएँ, पढ़ी-लिखी औरतों के (ग़लत) ख़यालात का सुधार करें, ख़ुशहाल घरों में ख़ुदा से बेपरवाई और इस्लाम के उसूल से बेरुख़ी की जो बीमारियाँ फैली हुई हैं उनको रोकें, अपनी औलाद को इस्लाम पर उठाएँ। अपने घरों के

मर्दों, को अगर वे बुराइयों और बेदीनी में पड़े हों तो, सीधे रास्ते पर लाने की कोशिश करें और अगर वे इस्लाम के रास्ते में कोई ख़िदमत कर रहे हों तो उनका साथ देकर और मदद करके उनका हाथ बटाएँ। आगे चलकर इस दीन के लिए आपको और दूसरी ख़िदमतें भी अंजाम देनी होंगी और उनके लिए आपको तैयार करने का इन्तिज़ाम भी इनशा अल्लाह अपने वक़्त पर हो जाएगा, लेकिन इस वक़्त तो आपके लिए इस तहरीक (आन्दोलन) में यही काम है और यह आप ही के करने का है।

औरत को सबसे बड़ी मुश्किल उस वक़्त पेश आती है जब वह ख़ुद सही रास्ते को पाकर उसपर चलने के लिए राज़ी हो जाती है मगर उसके घर के मर्द उसके रास्ते में रुकावट होते हैं। हक़ीक़त में एक बड़ी मुश्किल सूरते हाल है जो बहुत कुछ परेशानी की वजह साबित होती है, लेकिन इस मामले में भी आपके लिए उन्हीं मुसलमान औरतों का नमूना पैरवी के क़ाबिल है जिन्होंने शुरू में इस राहे हक़ (सत्य-मार्ग) को अपनाया था। आपकी पोज़ीशन चाहे कितनी ही बेबसी और कमज़ोरी की हो, मगर बहरहाल इस हद को नहीं पहुँचती जिस हद तक जाहिलीयत के ज़माने में अरब में औरतों की पोज़ीशन गिरी हुई थी। इसी तरह आप में से जिनको भी ऐसे मर्द या रिश्तेदारों से वास्ता पेश आए जो इस्लाम से फिरे हुए या इस्लामी दावत के मुख़ालिफ़ (विरोधी) हों उनका वास्ता बहरहाल बिगड़े हुए मुसलमानों से है, मगर जिन औरतों का मैं ज़िक्र कर रहा हूँ उनका वास्ता तो काफ़िरों और इस्लाम के सबसे बुरे दुश्मनों से था। इस फ़र्क़ के बावजूद जो कुछ उन्होंने अपने दीन के लिए किया और जिस हिम्मत और सब्र के साथ अपने ख़ानदान की इन्तिहाई मुख़ालिफ़त और दुश्मनी के मुक़ाबले में हक़ परस्ती का कमाल दिखाया, वह हमेशा सारी दुनिया की औरतों के लिए एक बेहतरीन नमूना रहेगा। मिसाल के तौर पर मैं आपके सामने कुछ औरतों के हालात बयान करूँगा।

सबसे पहले तो हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) ही को लीजिए। उनके ख़ानदान के ज़्यादातर लोग इस्लाम के बहुत बड़े दुश्मन थे। ख़ासकर उनके अपने सगे भाई नौफ़िल, उनका चचाज़ाद भाई अस्वद बिन मुत्तलिब और अस्वद का बेटा ज़मआ— ये लोग तो नबी (सल्ल०) की मुख़ालिफ़त में अबू जहल के मददगार थे, लेकिन इसके बाद भी वे नबी (सल्ल०) का साथ देती रहीं और उनकी मदद करती रहीं और अपने माएकेवालों की दुश्मनी की उन्होंने ज़रा भी परवाह न

की।

हज़रत उम्मे सलमा (रज़ि०) को देखिए। उनके एक चचा का बेटा अबू जहल था। दूसरा चचा वलीद बिन मुग़ीरा और उसके बेटे ख़ालिद भी इस्लाम के बहुत बड़े दुश्मन थे। उनका अपना सगा भाई अब्दुल्लाह बिन उमैया हर वक़्त इस्लाम और मुसलमानों की दुश्मनी में सरगर्म था, मगर इसके बावजूद वे बहादुर औरत इस्लाम लाईं और जब ख़ानदानवालों ने बहुत ज़्यादा तंग किया तो घरबार और ख़ानदान को छोड़कर हबश चली गईं।

हज़रत फ़ातिमा बिन्त ख़त्ताब की मिसाल लीजिए। उनका बाप ख़त्ताब और मामू अबू जहल, दोनों इस्लाम की दुश्मनी में एक-दूसरे से बढ़-चढ़ कर थे। उनके अपने भाई हज़रत उमर भी कुफ़्र के ज़माने में इस्लाम की दुश्मनी और मुसलमानों पर ज़ुल्म करने में किसी से कम न थे। बाप, भाई और मामूँ के इस रवैये को वह जानती थीं, फिर भी वे अपने शौहर के साथ इस्लाम क़बूल करने से न झिझकीं। हज़रत उमर को जब मालूम हुआ कि बहन और बहनोई दोनों मुसलमान हो गए हैं तो वे पता लगाने आए। अभी दरवाज़े पर ही थे कि अन्दर से क़ुरआन पढ़ने की आवाज़ सुनी। घर में घुसकर बहन और बहनोई दोनों को बहुत मारा, यहाँ तक कि बहन लहूलुहान हो गई। मगर अल्लाह की उस बन्दी ने भाई से साफ़ कह दिया कि चाहे तुम मार डालो, यह हक़ (सत्य) जो मैं पा चुकी हूँ उसे छोड़ नहीं सकती। इसपर भाई का दिल कुछ पसीजा और उसने कहा कि लाओ, ज़रा मैं भी तो सुनूँ कि वह चीज़ क्या है जो तुम दोनों पढ़ रहे थे। बहन ने क़ुरआन के पन्ने निकालकर सामने रख दिए जिनमें सूरा ता-हा लिखी हुई थी। भाई ने पढ़ना शुरू किया और जैसे-जैसे पढ़ता गया हक़ का असर दिल में होता चला गया, यहाँ तक कि जब सूरा ख़त्म हुई तो वही दिल, जो अभी थोड़ी देर पहले तक इस्लाम से इनकार और नफ़रत से भरा हुआ था, ईमान से भर गया। इस तरह एक औरत ही को यह सौभाग्य हासिल हुआ कि वह उमर फ़ारूक़ जैसे अज़ीमुश्शान इनसान को इस्लाम के अन्दर लाई जिसका नाम इस्लामी इतिहास में हमेशा-हमेशा रौशन रहेगा।

सबसे ज़्यादा सबक़ देनेवाली मिसाल हज़रत उम्मे हबीबा (रज़ि०) की है जो बनी उमैया के उस ख़ानदान से थीं जिसका बच्चा-बच्चा इस्लाम और मुसलमान की दुश्मनी में साँप और बिच्छू बना हुआ था। उनका बाप अबू सुफ़ियान वह आदमी था जो लगातार 21 साल तक नबी (सल्ल०) की

मुख़ालिफ़त करता रहा। उनकी माँ हिन्दा बिन्त उतबा वह औरत थी जो जंगे-उहुद में हज़रत हमज़ा (रज़ि०) का कलेजा निकालकर चबा गई थी। उनकी फूफी उम्मे जमील, अबू लहब की बीवी, वही औरत थी जिसे कुरआन में 'हम-म ल-तल ह-तब' (ईंधन लादनेवाली) का ख़िताब दिया गया है। उनका नाना उतबा बिन रबिआ क़ुरैश के उन सरदारों में से था जो इस्लाम की दुश्मनी में सबसे आगे-आगे था। अन्दाज़ा कीजिए कि ऐसे ख़ानदान की लड़की का इस्लाम क़बूल करना कितना मुश्किल था। मगर आपको ताज्जुब होगा कि मक्का के शुरू के पाँच सालों में जो लोग ईमान लाए थे उनमें एक उम्मे हबीबा (रज़ि०) भी थीं। उनके साथ उनके शौहर ने भी इस्लाम क़बूल किया और दोनों ख़ूब सताए गए। दो-तीन साल बाद मजबूर होकर उन्हें अपने शौहर के साथ हबश की ओर निकल जाना पड़ा। वहाँ जाकर शौहर ईसाई हो गया और इस शेरदिल औरत ने जहाँ ईमान के लिए माँ-बाप और भाई-बहनों को छोड़ा था, उस मुर्तद (दीन से फिरे) शौहर को भी छोड़ दिया। उस परदेस की ज़िन्दगी में वे अकेली एक बच्ची के साथ रह गईं, मगर उनके पक्के इरादे और ईमान की मज़बूती में ज़रा भी फ़र्क़ न आया। इन्हीं बुलन्द ईमानी गुणों का इनाम था जो ख़ुदा ने उनको इस शक्ल में दिया कि नबी (सल्ल०) ने उन्हें अपने लिए पसन्द किया और हबश ही में उनका ग़ाइबाना निकाह नबी (सल्ल०) के साथ पढ़ाया गया। ख़ैबर की जंग के ज़माने में वे हबश से वापस मदीना पहुँचीं। इसके थोड़े दिनों बाद उनका बाप अबू सुफ़ियान सुलह की बात-चीत लेकर मदीना आया और उसने चाहा कि बेटी से मिलकर सुलह के मामले में उससे भी मदद ले। बारह-तेरह साल की जुदाई के बाद पहला मौक़ा था कि बेटी और बाप मिल रहे थे, मगर आपको यह सुनकर हैरत होगी कि काफ़िर बाप जब मुसलमान बेटी के यहाँ गया और अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के फ़र्श पर बैठने लगा तो बेटी ने दौड़कर फ़र्श खींच लिया और बाप से कहा कि मैं अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के फ़र्श पर एक इस्लाम के दुश्मन को बैठने की इजाज़त नहीं दे सकती।

ये हैं सच्ची और असली मुसलमान औरतों की ख़ूबियाँ, और अगर आप अपनी नजात चाहती हैं तो यही ख़ूबियाँ आपको भी अपने अन्दर पैदा करनी होंगी। ख़ूब समझ लीजिए कि माँ-बाप हों या भाई-बहन या शौहर या औलाद, किसी का हक़ भी आपके ऊपर अल्लाह और रसूल से बढ़कर या उनके बराबर नहीं है। कोई भी इसका हक़ नहीं रखता कि उसको ख़ुश करने और राज़ी रखने

के लिए आप अल्लाह और रसूल की नाफ़रमानी करें। कोई आपको अल्लाह, उसके रसूल और उसके दीन से बढ़कर या बराबर प्यारा नहीं होना चाहिए और किसी का डर-ख़ौफ़ भी आपके दिल में इस हद तक नहीं होना चाहिए कि आप उससे डरकर अल्लाह से निडर हो जाएँ। यह हालत अगर आपके अन्दर पैदा हो जाए तो दीन का रास्ता आपके लिए आसान हो जाएगा और कोई ताक़त आपको राहे हक़ (सच्चे रास्ते) से न रोक सकेगी, न हटा सकेगी।

इस तक़रीर के बाद औरतों ने अपने सवाल लिखित रूप में पेश किए और अमीरे जमाअत ने उनके जवाब दिए।

सवाल 1: औरतों को अपनी हदों के अन्दर रहते हुए तबलीग़ किस तरह करनी चाहिए?

जवाब : तबलीग़ के लिए कोई बनावटी तरीक़ा अपनाने की ज़रूरत नहीं है। असल तबलीग़ यह है कि इनसान जिस उसूल और मसलक पर यक़ीन रखता हो उसका नमूना ख़ुद अपनी ज़िन्दगी में पेश करे और अपनी किसी बात या अमल से उसके ख़िलाफ़ गवाही न दे। इसके साथ अगर आदमी ज़बान और क़लम से दूसरों को समझाने और नसीहत करने की कोशिश करे तो वह फ़ायदेमन्द साबित हो सकती है। इनसानी फ़ितरत (Nature) की ख़ूबी यही है कि वह किसी उसूल से उतना ही मुतास्सिर (प्रभावित) होती है जितना पक्का उसके अलमबरदारों का उसपर ईमान हो। अपने उसूल के मामले में किसी से कोई समझौता न कीजिए। अगर आप दूसरों के असर से दबाव क़बूल करने लगीं तो फिर दूसरे आपको दबाते ही चले जाएँगे। उसूलपरस्ती और समझौता एक-दूसरे की ज़िद (उलट) हैं। अपने उसूल के मामले में हम किसी रवादारी (उदारता) के क़ायल नहीं। अगर दूसरों को हमारी हक़परस्ती और सच्चाई पसन्द नहीं तो आख़िर हम उनकी ग़लत-रवी का क्यों लिहाज़ करें। ग़लत रास्ते पर चलनेवालों से समझौता रवादारी (उदारता) नहीं, बल्कि कमज़ोरी और दीनी बेग़ैरती है। अलबत्ता यह ख़याल रहे कि अपने उसूल की पाबन्दी में आप जितना सख़्त हों उतना ही आपको अपने उसूलों को पेश करने और विरोधियों और एतिराज़ करनेवालों को जवाब देने में नर्म और मधुर होना चाहिए।

सवाल 2: औरत को शादी से पहले माँ-बाप और भाइयों की और शादी के बाद शौहर (पति) और ससुराल के बड़ों की फ़रमाँबरदारी करनी पड़ती है। अगर हम अपनी ज़िन्दगी को बिलकुल बदल लें और ग़लत रास्ते पर चलने से

इनकार कर दें और सुधार की अमली तौर पर कोशिश करने लगें तो हो सकता है कि ये लोग हमारा विरोध करें। ऐसी हालत में उनके साथ हमें क्या सुलूक करना चाहिए? माँ-बाप और शौहर के हक़ और अधिकारों पर तो इस्लाम ने बहुत ज़्यादा ज़ोर दिया है?

जवाब : सच्चाई यह है कि अल्लाह के सिवा कोई भी किसी पर असली और ज़ाती हक़ नहीं रखता। इनसानों पर और इस दुनिया की दूसरी सब चीज़ों पर असल हक़ सिर्फ़ अल्लाह तआला के हैं। दूसरों को जो हक़ भी हासिल हैं वे असली हक़ नहीं हैं, बल्कि वे अल्लाह के दिए हुए हक़ हैं। माँ-बाप, भाई-बहन, शौहर-बीवी और सारे दूसरे रिश्तेदारों के हुक़ूक़ बस वही और उतने ही हैं जो अल्लाह तआला ने तय कर दिए हैं। उनसे ज़्यादा कोई हक़ नहीं रखते। और उनके ये हक़ अल्लाह के हक़ के तहत और उसकी तय की हुई सीमा के अन्दर ही अदा किए जा सकते हैं। अगर उनमें से कोई अपनी कथनी या करनी से यह माँग करे कि अल्लाह की मरज़ी और उसका क़ानून चाहे कुछ भी हो तुमको मेरी बात माननी पड़ेगी तो उसकी बन्दगी का क्या सवाल! उससे बग़ावत शरई तौर पर लाज़िम हो जाती है। अगर ख़ुदा की नाफ़रमानी में आपने किसी की बन्दगी की तो आपका ईमान ही सिरे से शक में पड़ जाएगा।

हाँ, अल्लाह और रसूल ने माँ-बाप, शौहर और दूसरे हक़दारों के जो हक़ तय कर दिए हैं वे एक मुसलमान औरत को दूसरी औरतों से ज़्यादा अच्छी तरह अदा करने चाहिएँ और इस बात की परवा किए बिना अदा करने चाहिएँ कि दूसरा ख़ुद उनके हक़ को कहाँ तक अदा कर रहा है। जहाँ तक मुमकिन हो कोई कड़वाहट न पैदा होने दी जाए, अपनी ज़बान और जज़्बात पर पूरा क़ाबू रखा जाए और अपने उसूलों में पूरी सख़्ती, लेकिन बात-चीत और अख़लाक़ में बहुत ज़्यादा नरमी बरती जाए।

सवाल 3 : हमें तक़रीर किस तरह करनी चाहिए कि ज़्यादा से ज़्यादा बहनें मुतास्सिर हों?

जवाब : जिन औरतों को अल्लाह तआला ने तक़रीर की सलाहियत दी है उनको चाहिए कि हमारे लिट्रेचर को ग़ौर से पढ़ें। जब ख़यालात और ज़ेहन साफ़ हो जाएँगे तो तक़रीर का ढंग ख़ुद बनता जाएगा। 'ख़ुतबात' (नामक किताब) से इस सिलसिले में ख़ास तौर पर मदद ली जा सकती है। बयान करने का अन्दाज़ आसान से आसान और साफ़ हो ताकि कम से कम सलाहियत का

आदमी भी आपकी बात समझ सके। जिन लोगों से बात कही जा रही है उनके ज़ेहन और ख़यालात का लिहाज़ बहुत ज़रूरी है। शुरू-शुरू में कुछ ग़लतियाँ हों तो घबराने की ज़रूरत नहीं। दूसरे सारे कामों की तरह यह काम भी करने ही से आता है।

सवाल 4 : सिनेमा जो आजकल महामारी की तरह फैला हुआ है, उसे देखना कहाँ तक जाइज़ है, क्योंकि कुछ खेल इस्लाही (सुधारक) और सबक़ आमोज़ भी होते हैं?

जवाब : इस सवाल का जवाब यह है कि सिनेमा देखना किसी हद तक भी जाइज़ नहीं। इससे बिलकुल परहेज़ किया जाए। जिन फ़िल्मों को आम तौर पर तालीमी और अख़लाक़ी कहा जाता है उनमें भी बद-अख़लाक़ी के जरासीम (कीटाणु) मौजूद होते हैं। जब तक यह कला उन लोगों के हाथ में है जिनके नज़दीक अख़लाक़ की सिरे से कोई क़द्र व क़ीमत ही नहीं, उस वक़्त तक कहीं कोई लकीर नहीं खींची जा सकती कि इस हद तक तो आप इससे फ़ायदा उठाएँ और फ़लाँ मक़ाम से आगे न बढ़ें। मैंने आजतक नहीं देखा कि सिनेमा से किसी ने कोई अख़लाक़ सीखा हो, बल्कि मेरा ख़्याल तो यह है कि जिस आदमी के अन्दर कोई अख़लाक़ी हिस (चेतना) मौजूद हो वह उन मंज़रों(दृश्यों) को नहीं देख सकता और न अपने बेटे, बेटियों, भाइयों और बहनों का उन्हें देखना पसन्द कर सकता है जो सिनेमा में आम तौर पर पेश किए जाते हैं।

अगर अल्लाह तआला कोई वक़्त लाया और सत्ता हमारे हाथ में आई तो हम इनशा अल्लाह दूसरे फ़नों (कलाओं) के साथ इस फ़न को भी मुसलमान बनाएँगे और फिर यह देखने के क़ाबिल होगा। अगर सिनेमा का वास्तव में सही इस्तेमाल किया जाए तो इसके ज़रिये से जनता को मौजूदा ज़माने के आम कॉलेजों की तालीम (शिक्षा) के बराबर जानकारी बहुत आसानी से दी जा सकती है। वक़्त आने पर हम इनशा अल्लाह दुनिया को यह करके दिखाएँगे। लेकिन इस वक़्त जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ सिनेमा देखना बिलकुल ही छोड़ देना चाहिए।

सवाल 5 : औरतों का लिबास किस तरह का होना चाहिए? बुर्क़ा ओढ़कर बाहर निकलना किस हद तक और किन हालतों में जाइज़ है?

जवाब : 'परदा' (नामक किताब) में इसकी तफ़सील मौजूद है, वहाँ से देख ली जाए। दिल्ली, यू०पी० और भोपाल में औरतें जिस तरह का चुस्त

(Tight) लिबास आम तौर पर पहनती हैं वे जाइज़ नहीं हैं, चाहे वे मोटे कपड़े के ही बने हुए हों। ज़रूरत के वक़्त बुर्क़ा पहनकर घर से बाहर निकलना सही है लेकिन गहरे रंग के रेशमी बुर्क़े जो आजकल आम हैं उनका इस्तेमाल दुरुस्त नहीं। बुर्क़े और चादर जिस्म और ख़ूबसूरती को छिपाने के लिए हैं, न कि उन्हें दिखाने के लिए। परदे की शरई सीमा मालूम न होने की वजह से मुसलमानों के एक गिरोह ने तो इतनी ज़्यादा आज़ादी अपना ली है कि अपनी औरतों को अर्धनग्नता की हद तक ले गए और दूसरे गिरोह ने उन्हें घर की चारदीवारियों में इस तरह क़ैद कर दिया कि बिहार में मुसलमानों के क़त्लेआम के वक़्त भी उनकी औरतें डोली के बिना घर से न निकल सकीं। ये दोनों तरीक़े ग़लत हैं। इस वक़्त तो देश में ऐसे हालात पैदा हो रहे हैं कि औरतों को इसके लिए तैयार होना चाहिए कि ज़रूरत के वक़्त अपनी हिफ़ाज़त ख़ुद कर सकें, एक जगह से दूसरी जगह जा सकें और मुसीबत के वक़्त मर्दों के लिए बोझ और रुकावट बनने के बजाय उनकी कुव्वत में बढ़ोत्तरी करने की वजह बनें। मैं तो यह भी मशविरा दूँगा कि भाई अपनी बहनों को अगर हो सके तो घरों के अन्दर साइकिल की सवारी भी सिखा दें, ताकि ज़रूत के वक़्त उससे काम लिया जा सके।

सवाल 6 : क्या औरत परदे में रहकर ज़रूरत के वक़्त ग़ैर-मर्दों से बात कर सकती है?

जवाब : हाँ, ज़रूरत के वक़्त औरत पर्दे में रहकर दूसरे मर्द से बात कर सकती है, लेकिन लहजे में लोच और नरमी नहीं होनी चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि शैतान उसके दिल में कोई ग़लत उम्मीद पैदा कर दे। हज़रत आइशा (रज़ि०) ने तो मर्दों को दर्स भी दिया है। एक मौक़े पर ख़ुतबा भी दिया और फ़ौजों को निर्देश भी दिए। दूसरे मसलों की तरह इसमें भी बीच का रास्ता ही सही है कि आम आज़ादी भी न हो और यह भी नहीं कि ज़रूरत के वक़्त भी किसी से बात न की जाए।

सवाल 7: हदीस में आया है कि आँखों का ज़िना ग़ैर-मर्द को देखना है, और अकसर ग़ैर-मर्द पर नज़र पड़ जाती है। यह गुनाह माफ़ी के क़ाबिल है या नहीं?

जवाब : इस मसले पर 'परदा' (नामक किताब) में बहस की गई है, वहाँ देख लिया जाए। असल में मर्दों के औरतों को देखने पर जो पाबन्दी है वह पाबन्दी औरतों के मर्दों को देखने पर नहीं है। अगर औरत परदा करके निकलेगी

तो ज़ाहिर है कि उसे रास्ता देखना होगा और इससे उसकी नज़र मर्दों पर भी पड़ेगी। औरत का जो देखना मना और ज़िना है वह बुरी नज़र से देखना है।

सवाल 8 : कुछ औरतें गंडे और तावीज़ों को बहुत अहमियत देती हैं और इसकी वजह यह बताती हैं कि जिस तरह नज़र फुँकवाना जाइज़ है उसी तरह यह भी जाइज़ है?

जवाब : आजकल जो तावीज़ और गंडे होते हैं वे ज़्यादातर मुश्रिकाना और शैतानी होते हैं। उनमें से जो देखने में कुरआनी कहे जाते हैं उनमें भी ज़्यादातर देखा गया है कि कुछ न कुछ गड़बड़ ज़रूर होती है। इसलिए इनसे बचना बेहतर है। दूसरे सही और क़ुरआनी तावीज़ों को भी दुआ की हैसियत से ही देखना चाहिए। उनके मुताल्लिक़ यह यक़ीन और ईमान रखना कि उनसे आराम ज़रूर ही हो जाएगा, सही नहीं है। सेहत व तन्दुरुस्ती अल्लाह के हाथ में है और इसके लिए उसी से दुआ करनी चाहिए। तावीज़ और गंडों की तरफ़ रुजूअ करना आम तौर पर बेअमल और पस्त-हिम्मत क़ौमों का तौर-तरीक़ा रहा है, और अब भी उनकी तरफ़ रुजूअ करनेवाले ऐसे ही लोग हैं।

सवाल 9 : मीलादुन्नबी में शरीक होना जाइज़ है या नहीं? इसमें पैदाइश के वक़्त खड़ा होना कैसा है?

जवाब : नबी (सल्ल०) की सीरत बयान करने के लिए इकट्ठा होना बहुत ही नेक काम है, लेकिन इसका मक़सद यह होना चाहिए कि उससे सबक़ लिया जाए। मगर यह मीलादख़ानी जो इस वक़्त राइज है, यह सारी की सारी जाहिलाना और मुश्रिकाना रस्मों पर मुश्तमिल (आधारित) है और अगर नबी (सल्ल०) या सहाबा (रज़ि०) के ज़माने में होती तो उसे हुक्म देकर बन्द कर दिया जाता। जिस तरह नबी (सल्ल०) की पैदाइश को उन महफ़िलों में बयान किया जाता है उस तरह अपनी पैदाइश के ज़िक्र को कोई आदमी भी पसन्द नहीं कर सकता।

सवाल 10 : शादी-ब्याह के मौक़े पर अकसर म्यूज़िक के साथ गाना गाया जाता है और उन पार्टियों में शामिल होना पड़ता है। इसके मुताल्लिक़ क्या हुक्म है और म्यूज़िक किस क़िस्म का सुनना जाइज़ है?

जवाब : म्यूज़िक दफ़ (डफ़ली) के अलावा और किसी तरह का जाइज़ नहीं। शादी-ब्याह के मौक़े पर अगर लड़कियाँ और बच्चियाँ आपस में बैठकर

कुछ गा-बजा लें तो इसमें कोई हरज नहीं। बल्कि नबी (सल्ल०) ने ख़ुद इसकी इजाज़त दी है। लेकिन पेशावरों और तवाइफ़ों का गाना और म्यूज़िक के साथ गाना किसी तरह जाइज़ नहीं। ऐसी महफ़िलों से बचना चाहिए। जहाँ शादी में इस तरह का इन्तिज़ाम किया गया हो वहाँ आप सिर्फ़ निकाह और वलीमे के मौक़े पर शरीक हों और बाक़ी रस्मों से अलग हो जाएँ। आपका तरीक़ा यह होना चाहिए कि हम अपने रिश्तेदारों और भाई-बन्दों के सब जाइज़ कामों में शामिल होंगे और नाजाइज़ कामों से अलग रहेंगे।

अगले दिन 21 अप्रैल को 11 बजे दोपहर में अमीरे जमाअत और क़ैय्यिम जमाअत टोंक से बम्बई (मुम्बई) के रास्ते मद्रास (चेन्नई) रवाना हो गए।

हल्क़ा दक्षिण भारत

ब-मक़ाम : मद्रास

पहला इजलास (सभा)

यह इजलास 25 अप्रैल, 1947 ई० को जुमा के दिन ठीक 2 बजे जुमा की नमाज़ के बाद इजतिमागाह के पंडाल, परम्बूर बेरकस में शुरू हुआ। यह आम इजलास था। सूबा मद्रास, रियासत हैदराबाद और मैसूर के 250 से ज़्यादा अरकान और हमदर्द हाज़िर थे। मक़ामी लोग भी बड़ी तादाद में आए थे। औरतों के लिए अलग इन्तिज़ाम किया गया था। कार्रवाई अमीरे जमाअत की इफ़्तिताही तक़रीर से शुरू हुई जो इस तरह है—

हम्द व सना के बाद फ़रमाया:

साथियो और दोस्तो! इस साल जमाअत का आम इजतिमा पटना में करना तय हुआ था। लेकिन हमारे इस फ़ैसले के बाद देश के हालात अचानक बदल गए और हमें मजबूरी में यह फ़ैसला करना पड़ा कि अब आम इजतिमा को रद्द (Cancil) करके चारों हल्क़ों के अलग-अलग इजतिमा आयोजित कर लिए जाएँ ताकि आनेवाली तब्दीलियों के शुरू में हम बिलकुल मौक़े पर पहुँच कर अपने साथियों को मुनासिब और ज़रूरी हिदायतें दे दें। अगरचे इन हल्क़ावार इजतिमाआत के बारे में भी डर था कि कहीं उम्मीद के ख़िलाफ़ कुछ मुश्किलें पेश न आ जाएँ, लेकिन अल्लाह का शुक्र है कि हम अपने इस प्रोग्राम में कामयाब हो रहे हैं।

इस वक़्त हिन्दुस्तान जिस तेज़ी के साथ बद-अम्नी और तबाही की तरफ़ जा रहा है उसे देखते हुए कोई आदमी यह ठीक-ठीक अन्दाज़ा नहीं कर सकता कि आनेवाले साल में क्या और कैसे हालात पेश आनेवाले हैं। इसलिए ज़रूरी है कि हमारे साथी अपनी पोज़ीशन (हैसियत) को समझ लें, अपने फ़राइज़ को जान लें और अपनी ज़िम्मेदारियों से पूरी तरह वाक़िफ़ (परिचित) हो जाएँ।

यही वजह थी कि मैं इस बीमारी की हालत में अपने ऊपर जब्र करके निकल आया, ताकि मौजूदा हालात के बदलने से पहले-पहले जो बातें जमाअत के साथियों तक पहुँचानी चाहिएँ वह पहुँचा दूँ और अपनी ज़िम्मेदारी से ख़ुदा के सामने बरी होने की कोशिश करूँ। आप इन हल्क़ेवार इजतिमाआत की अहमियत को समझें। ये दो-तीन दिन जो आपको यहाँ मिल-बैठने के लिए मिले हैं उनका पूरा-पूरा फ़ायदा उठाइए। इनका एक पल भी बरबाद न कीजिए, और काम ख़त्म होने के बाद वापस जाकर अपनी-अपनी जगहों पर हिदायत के मुताबिक़ काम शुरू कर दीजिए।

इसके बाद क़ैय्यिम जमाअत ने जमाअत की सालाना रिपोर्ट और मर्कज़ी बैतुलमाल के सालाना हिसाब पेश किए जो टोंक के इजतिमा की रूदाद में लिखे जा चुके हैं। फिर मौलाना सैयद सिब्ग़तुल्लाह साहब क़ैय्यिम हल्क़ा मद्रास ने अपने हल्क़े (क्षेत्र) की सालाना रिपोर्ट पेश की।

दूसरा इजलास

इसी दिन नमाज़ मग़रिब के बाद दूसरा इजलास शुरू हुआ। यह भी खुला इजलास था। इस इजलास में हाज़िर लोगों की तादाद छः-सात सौ के बीच थी। चूँकि अमीरे जमाअत को पहले इजलास में लगातार तीन घंटे बैठने से बहुत थकान और गुर्दे में कुछ तकलीफ़ भी शुरू हो गई थी इसलिए वे शामिल न हो सके और मौलाना मुहम्मद इस्माईल साहब को अपना नायब मुक़र्रर कर दिया। सबसे पहले मौलवी मज़हरुद्दीन साहब सिद्दीक़ी ने जमाअत की दावत को अंग्रेज़ी में लिखी हुई तक़रीर के ज़रिया पेश किया। यह तक़रीर अलग से पम्फ़लेट की शक्ल में शाया (प्रकाशित) कर दी जाएगी। फिर क़ैय्यिम जमाअत ने यह तक़रीर की—

सदर साहब और मोहतरम हाज़िरीन! दुनिया का हर मस्लक और निज़ामे ज़िन्दगी (जीवन-व्यवस्था) कुछ उसूलों पर आधारित होता है और अपने कुछ ख़ास तक़ाज़े और मुतालबे रखता है। उस मस्लक को मानने और क़बूल करने का मतलब ही यह होता है कि उसके तक़ाज़ों और मुतालबों को पूरा किया जाए, जिन-जिन बातों को अपनाने का उसके उसूल तक़ाज़ा करें उनको बिना किसी झिझक के अपना लिया जाए, जिन-जिन बातों से वह मना करे उनको बिना किसी आनाकानी छोड़ दिया जाए और जिस और जैसे बदलाव का भी

वह ज़िन्दगी, उसके मामले और ताल्लुक़ात में माँग करे वह बिना झिझक कर डाला जाए, चाहे ऐसा करने से कितने ही बड़े फ़ायदे को त्यागना और कितने ही बड़े नुक़सान से दोचार होना पड़े। जो लोग इस तरह किसी मस्लक को मानें वही असल में उसके असली और सच्चे माननेवाले होते हैं। उन्हीं के ज़रिया से वह दुनिया में फैल सकता है और अगर उसे आम तौर पर दुनिया में क़ायम करना हो तो ऐसे ही लोगों का एक मज़बूत गिरोह उसके लिए दरकार होता है। इतिहास गवाह है कि जब कभी कोई मस्लक या जीवन-व्यवस्था दुनिया में क़ायम हुई है, ऐसे ही माननेवाले लोगों के हाथों हुई है। बाक़ी रहे वे लोग जो सिर्फ़ ज़बानी जमा ख़र्च करनेवाले होते हैं, ज़बान से तो उसे मानने का इक़रार करते हैं लेकिन उनकी ज़िन्दगी, काम और मामले यह गवाही दे रहे होते हैं कि वे न इसके लिए अपना कोई फ़ायदा या कोई दिलचस्पी छोड़ने को तैयार हैं और न कोई तकलीफ़ या कोई नुक़सान ही उठाने के लिए तैयार, तो ऐसे मुनाफ़िक़ पैरवी करनेवाले (अनुयायी) उस मस्लक के हक़ में एलानिया इनकार करनेवालों से कुछ कम नहीं हैं। वे अगर मानने का इक़रार करते हैं तो अपनी बात में झूठे हैं और उनके इस अमल की मौजूदगी में उनके इनकार और झूठ के लिए किसी और गवाही की ज़रूरत नहीं। उनका मक़ाम ख़ुद उसी मस्लक की रू से और उसके सच्चे अलमबरदारों के नज़दीक खुले तौर पर इनकार करनेवालों से भी पीछे है। वे आस्तीन के साँप और छुपे दुश्मन हैं जो दोस्ती के रूप में अन्दर ही अन्दर जड़ें काट रहे हैं। ऐसे लोग किसी जमाअत या पार्टी में सिर्फ़ उसी वक़्त तक पनप सकते हैं जब तक कि वे सामने न आ पाएँ या फिर जमाअत में इतना जमाअती शुऊर या ऐसी तंज़ीम और ताक़त मौजूद न हो कि ऐसे लोगों को काट फेंके।

मैंने जो कुछ बयान किया है उसकी वज़ाहत (स्पष्टीकरण) के लिए अपने इस देश ही में राइज दो बड़े मस्लकों को देख लीजिए। इनमें एक 'हिन्दुस्तानी क़ौमियत' या 'वतन-परस्ती' का मस्लक है जो देश की तीन चौथाई से ज़्यादा आबादी के लिए दीन और धर्म का क़ायम मक़ाम बन गया। इसका तक़ाज़ा है कि हिन्दुस्तान नामी देश और इसमें बसनेवाले लोगों की अकसरियत के फ़ायदे को दुनिया जहान की हर चीज़ पर प्रधानता दी जाए। यानी जो लोग इस मस्लक को मानने के दावेदार हैं वह इस देश को फ़ायदा पहुँचाने और इसे नुक़सान से बचाने के लिए हर बाज़ी खेलने के लिए हर वक़्त तैयार रहें चाहे ऐसा करने से

दूसरे देशों, क़ौमों या ख़ुद इसी देश के कुछ दूसरे छोटे गिरोहों को कितना ही नुक़सान पहुँचता हो और चाहे ऐसा करना इनसानी और अख़लाक़ी दृष्टिकोण से कितना ही घिनावना और शर्मनाक काम हो। चुनाँचे 'वतन-परस्त' जमाअतों में इसी जज़्बे और काम के लोगों को जगह मिल सकती है और अगर उनके अन्दर इस तरह के जज़्बे और अमल मौजूद न हों तो उनके लिए उन जमाअतों में जगह पाना तो दूर, वह इनके बाग़ी क़रार पाए बिना नहीं रह सकते, चाहे वे अख़लाफ़ और इनसानियत और सीरत व किरदार (चरित्र) और दूसरे तमद्दुनी मेआर के लिहाज़ से कितने ही बढ़कर क्यों न हों। इसके अनगिनत उदाहरण वतन-परस्त जमाअतों के यहाँ मौजूद हैं, किसी हवाले की ज़रूरत नहीं।

इसी तरह दूसरा मस्लक 'क़ौम-परस्ती' या 'निरी क़ौमियत' का है। इसे क़बूल करने और मानने का तक़ाज़ा है कि अपनी क़ौम के फ़ायदे को बाक़ी सारी दुनिया के फ़ायदे पर प्रधानता दी जाए, हर उस काम को बेझिझक कर डाला जाए जिससे अपनी क़ौम को कोई फ़ायदा पहुँचता हो या पहुँचने की उम्मीद हो और हर उस काम को ज़बरदस्ती रोक दिया जाए जिससे अपनी क़ौम को कोई नुक़सान पहुँचता हो या पहुँचने की उम्मीद हो, चाहे इससे दूसरी क़ौमों और मुल्कों पर या अख़लाक़ और इनसानियत पर कितना और कैसा ही असर पड़ता हो। 'क़ौम-परस्ती' का मुस्तक़िल (स्थायी) उसूल यह है कि हर वह तरीक़ा और काम जाइज़ और पसन्दीदा है जिससे क़ौम को कुछ भी फ़ायदा पहुँचता हो और हर वह काम नाजाइज़ और ग़लत है जिससे क़ौम को कोई नुक़सान पहुँचता हो। इस देश में इसकी बीसियों मिसालें हमारे सामने हैं यहाँ तक कि ख़ुद मुसलमानों में से जो लोग वाक़ई 'क़ौम-परस्ती' के उसूल को माननेवाले हैं और उसके सच्चे अलमबरदार हैं उनके नज़दीक भी अगरचे सूद, शराब और नाच-गाना सब मज़हबी तौर पर नाजाइज़ और हराम हैं, लेकिन वे मुस्लिम बैंक, मुस्लिम एंसोरेन्स कम्पनियाँ, मिल्लत आर्ट प्रोडक्शन और दूसरी फ़िल्म कम्पनियाँ इसलिए धड़ाधड़ खोले जा रहे हैं और शराब और दूसरी हराम चीज़ों के ठेके इसके लिए पूरी ढिठाई के साथ लिए और दिए जा रहे हैं कि क़ौम का फ़ायदा इस वक़्त उन्हें इसी में दिखाई देता है। इसी 'क़ौम परस्ती' का यह फल है कि अपनी राजनीतिक, सामाजिक, रोज़ी-रोज़गार और ज़िन्दगी के इजतिमाई मामले में किसी जगह उन्हें यह देखने की ज़रूरत महसूस नहीं होती कि जिस दीन को मानने की वजह से वे मुसलमान क़ौम और अपने अधिकारों

के दावेदार बनते हैं वह इस बारे में कुछ हिदायतें देता और हदें निश्चित करता है या नहीं। उनके यहाँ हर उस आदमी के लिए न सिर्फ़ मेम्बरी और लीडरी की, बल्कि पेशवाई और क़ियादत (Leadership) तक की जगह ख़ाली है जिससे क़ौम को कोई फ़ायदा पहुँचाने की उम्मीद हो, चाहे इससे उसकी ज़िन्दगी और सारे मामले इस्लाम के बुनियादी उसूलों तक के बारे में कैसी ही गवाही पेश कर रहे हों और चाहे इससे इस्लाम को कितना ही बड़ा नुक़्सान पहुँच रहा हो। यह इसलिए कि वे क़ौम-परस्त हैं और उनके नज़दीक क़ौम का फ़ायदा दुनिया की हर दूसरी चीज़ पर प्रधानता रखता है। वे दीन को गिरता हुआ देख सकते हैं लेकिन क़ौम को कोई नुक़्सान पहुँचते नहीं देख सकते।

हज़रात! इस्लाम भी, जिसपर मैं और आप ईमान के दावेदार हैं, एक मस्लक (दीन) है। इसके कुछ उसूल हैं। यह भी अपनी कुछ निश्चित धारणाएँ और अपेक्षाएँ (तक़ाज़े) रखता है। दुनिया के दूसरे मस्लक (धर्म) और जीवन-व्यवस्थाओं की तरह यह भी अपने माननेवालों और अलमबरदारों से कुछ ऐसी बातें मनवाता और कुछ चीज़ें और तरीक़े छुड़वाता है और उनको हुक्म देता है कि वे अपनी ज़िन्दगियों और मामलों वग़ैरह को बदलकर उसके बताए हुए साँचों में ढालें। वह उनसे माँग करता है कि अगर वे अपने ईमान में सही मानो में सच्चे हैं तो दुनिया की किसी दूसरी चीज़ की उसके और उसकी शिक्षाओं के मुक़ाबले में परवाह न करें। उन सारे कामों को बिना किसी संकोच के करते चले जाएँ जिनके करने का वह हुक्म दे और उन सारी चीज़ों को अपनी ज़िन्दगियों से बिना किसी आना-कानी के ख़ारिज कर दें जिनसे वह मना करे। जिस तरह दुनिया के दूसरे मस्लक लाज़मी तौर पर चाहते हैं कि उनकी पैरवी करनेवाले अपने हर काम और हर मामले में हर पल यह गवाही पेश करें कि वह अपने ईमान में सच्चे और अपने उसूल के पक्के हैं, उसी तरह इस्लाम भी अपने माननेवालों से माँग करता है कि अगर तुम अपने आपको मुसलमान कहते हो तो अपनी पूरी ज़िन्दगी, उसके सारे मामले और उसके सारे सम्बन्धों से यह साबित करो कि तुम जो कुछ कह रहे हो सच कह रहे हो। अपनी निजी, ख़ानदानी, अख़लाक़ी, सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और इजतिमाई (सामूहिक) ज़िन्दगी और उसके हर पहलू में अपने ईमान के सच्चे गवाह बनो। इस बात का सुबूत पेश करो कि तुम्हें इस्लाम दुनिया की हर चीज़ से, अपने आप से, अपने बाल-बच्चों, अपने ख़ानदान और परिवार से, अपनी क़ौम और

क़बीले से और अपने देश और वतन से बढ़कर प्यारा है। तुम अपने आपको, अपने ख़ानदान को, अपनी क़ौम और देश को और पूरी दुनिया को भी ख़तरे में डाल सकते हो लेकिन ख़ुदा के दीन को ख़तरे में पड़ते देखना तुम्हारे लिए मुमकिन नहीं है। उनका बड़े से बड़ा नुक़्सान सह सकते हो लेकिन जीते जी ख़ुदा के दीन का कोई नुक़्सान गवारा करना तुम्हारे लिए नामुमकिन है। ऐसे ही लोग ख़ुदा और रसूल के नज़दीक सच्चे मुसलमान हैं, इन्हीं के हाथों इस्लाम फैल सकता है और अगर कभी फिर इस्लाम दुनिया में दीन की हैसियत से बरपा हुआ और उसपर इस्लाम के शुरू के ज़माने की-सी बहार आई तो ऐसे ही लोगों के हाथों आएगी।

बाक़ी रहे वे लोग जो अपने आपको मुसलमान भी कहते हैं और साथ ही साथ 'वतन-परस्त' और 'क़ौम-परस्त' और सोशलिस्ट (Socialalist) और कम्युनिस्ट (Communist) और क्या-क्या भी बनते हैं तो यह बेचारे या तो इस्लाम ही को सिरे से नहीं समझते, या फिर दूसरे मस्लकों की अ-ब से भी अनजान हैं, या फिर दोनों तरफ़ से कोरे हैं। क्योंकि जैसा कि मैं इससे पहले बता चुका हूँ, हर मस्लक अपने ख़ास मुतालबे और तक़ाज़े रखता है और यह किसी तरह मुमकिन नहीं है कि आदमी एक ही वक़्त दो अलग-अलग और परस्पर विरोधी मस्लकों के मुतालबे और तक़ाज़े पूरे कर सके। इसलिए जो आदमी एक ही वक़्त में दो ऐसे मस्लकों की पैरवी करता है वह मजबूरन एक का मोमिन और दूसरे का मुनाफ़िक़, एक का वफ़ादार और दूसरे का ग़द्दार बनकर रहेगा। या फिर दोनों तरफ़ के लोगों से धोखाबाज़ी करेगा। ख़ासकर इस्लाम तो चूँकि अपने माननेवालों की पूरी ज़िन्दगी को अपनी लपेट में लेता है, ज़िन्दगी के हर शोबे (विभाग) के लिए तयशुदा हिदायतें देता है और उसका मुतालबा ही 'उदख़ुलू फ़िस्सिलमि काफ़्फ़:' (इस्लाम में पूरे के पूरे दाख़िल हो जाओ। (—क़ुरआन) का है, इसलिए एक मुसलमान तो एक वक़्त में बस मुसलमान ही हो सकता है और कुछ नहीं। और अगर वह कुछ और भी होने का दावेदार है तो फिर यक़ीन कर लेना चाहिए कि वह मुसलमान नहीं जो ख़ुदा और रसूल को मतलूब है। एक मुसलमान के लिए ज़रूरी है कि वह अपनी कथनी और करनी से कम से कम नीचे लिखी चार बुनियादी कामों की गवाही पेश करे—

(1) यह कि जगत् स्वामी (अल्लाह) के सिवा वह किसी के लिए भी इस ज़मीन पर ख़ुदाई, रबूबियत और हाकिमियत का हक़ स्वीकार नहीं करता।

(2)यह कि किसी ऐसी इमामत (नेतृत्व),पेशवाई, रहनुमाई (मार्गदर्शन), और क़ियादत (सरदारी) को नहीं मानता जो ख़ुदा और रसूल की फ़रमाँबरदारी और पैरवी से बेनियाज़ (निस्पृह) हो।

(3) यह कि वह किसी ऐसे क़ानून को जाइज़ क़ानून और किसी ऐसे दस्तूर (नियम) को जाइज़ दस्तूर नहीं मानता जो ख़ुदा की भेजी हुई हिदायतों (आदेशों) को अपना माख़ज़ (स्रोत) और मरजा (शरण-स्थल) स्वीकार न करता हो।

(4) यह कि वह अपनी हर कथनी और करनी और मामले के लिए अपने आपको ख़ुदा ही के सामने जवाबदेह समझता हो।

इनमें से हर एक ख़ुदापरस्ती के सिवा दूसरी हर 'परस्ती' की जड़ काट रहा है इसलिए कि दूसरी 'परस्ती' का जोड़ उस ख़ुदापरस्ती के साथ किसी हाल में भी नहीं लगाया जा सकता।

यही वे काम हैं जिनकी तरफ़ हम अपने मुसलमान भाइयों का ध्यान दिलाने के लिए यह दौड़-धूप कर रहे हैं। हम उनको दावत देते हैं कि वे अपनी-अपनी जगह ख़ुद अपनी ज़िन्दगियों और कोशिशों का जाइज़ा लें, अपने मामलात का, अपने ताल्लुक़ात का, अपनी मसरूफ़ियतों का और अपनी शख़्सी और क़ौमी उमंगों का जाइज़ा लेकर देखें कि वे किस हद तक इस्लाम के उन बुनियादी उसूलों के मुताबिक़ हैं और कहाँ उनसे हट गए। मुफ़्ती और क़ाज़ी आपके ईमान व इस्लाम का अन्दाज़ा करने में ग़लती खा सकते हैं, मगर आप ख़ुद अगर ख़ुदा को ग़ैब का जाननेवाला और 'अलीमुन बिज़्ज़ातिस्सुदूर' (सीनों के हाल जाननेवाला) जानते हुए अपने दिल पर निगाह डालेंगे तो आपके अपने ज़मीर से यह बात नहीं छुप सकती कि जिस दीन को अपनी दुनियावी और उख़्रवी (पारलौकिक) नजात का यक़ीनी ज़रिया मानते हैं उसपर आपके ईमान का सही मानों में क्या हाल है। यह आपके ज़बानी दावे और यह बुलन्द नारे इनसानों को मुमकिन है मरऊब (प्रभावित) कर दें और उन्हें किसी ग़लत-फ़हमी में भी डाल दें। लेकिन ख़ुदा के सामने तो सब हक़ीक़त खुलकर सामने आ जाएगी। वहाँ नारे और नाम नहीं, नीयतें और काम देखे जाएँगे। इस्लाम का जो नमूना आप इस वक़्त दुनिया में पेश कर रहे हैं उसका नतीजा तो 'ख़ैरुद्दुनिया वल आख़िरः' (दुनिया और आख़िरत के नुक़सान) के सिवा कुछ दिखाई नहीं देता। आपके इस इस्लाम ने दुनियाभर को असली इस्लाम से बदगुमान करके रख दिया है और अल्लाह की किताब गवाह है कि ऐसे इस्लाम की आख़िरत में भी

कोई क़द्र व क़ीमत नहीं होगी। दूसरे मस्लकों और जीवन-व्यवस्थाओं की तरह इस्लाम भी दो ही सूरतें पेश करता है कि या तो उसे सारे का सारा क़बूल करो या फिर इस मामले ही को ख़त्म करो। यह मुसलमान और नामुसलमान एक साथ बने रहने के लिए कोई गुंजाइश नहीं। और अगर आप इसपर ज़िद करेंगे तो फिर आपसे पहले की मुसलमान क़ौम यानी यहूदियों का अंजाम आपके सामने है। अगर आप इस अंजाम से बचना चाहते हैं तो इसकी शक्ल यही है कि ख़ुदा के दीन पर हक़ीक़त में ईमान लाएँ और अपनी ज़िन्दगी और उसके मामलात से, अपनी कथनी और करनी से और अपनी दौड़-धूप और सरगर्मियों से इस्लाम की सच्ची गवाही पेश करें।

अपने ग़ैर-मुस्लिम भाइयों से जो कुछ हम कहते हैं वह यह है कि 'इस्लाम-धर्म' न मुसलमानों की मिलकियत है और न उनके बाप-दादा की मीरास। यह तो सब इनसानों के लिए ज़िन्दगी का एक ही रास्ता है जो ख़ुदा ने अपने बन्दों की रहनुमाई के लिए उतारा है। यह कोई नया रास्ता भी नहीं। जब से दुनिया क़ायम हुई तब से जहाँ भी ख़ुदा की तरफ़ से कोई रहनुमाई आई उसमें यही रास्ता बताया गया था। यानी यह कि इनसान सिर्फ़ ख़ुदा के बन्दे और फ़रमाँबरदार और ताबेदार बनकर रहें। भलाइयों और नेकियों को अपनाएँ, बुराइयों से बचें, किसी पर ज़ुल्म और ज़्यादती न करें, हक़दारों के हक़ ठीक-ठीक अदा करें, कमज़ोरों और मुहताजों को सहारा दें, ख़ुदा की ज़मीन का ख़ुदा की मरज़ी के मुताबिक़ इन्तिज़ाम करें क्योंकि ख़ुदा के नाफ़रमान और दुराचारी लोग अगर बाक़ी भी रहें तो छोटे बनकर बाक़ी रहें और उनकी बुराइयों और शरारतों से ख़ुदा के दूसरे बन्दे महफ़ूज़ (सुरक्षित) रहें। इस रास्ते का नाम अरबी में 'इस्लाम' है। दूसरी ज़बानों में कुछ और रहा होगा, मगर ज़बानों के फ़र्क़ के बावजूद उसकी हक़ीक़त हमेशा एक ही रही है। आप लोगों के पास भी ख़ुदा की तरफ़ से यही दीन उसी तरह भेजा गया था जिस तरह दुनिया की दूसरी क़ौमों की तरफ़ और जिस तरह सबसे आख़िर में और अपनी मुकम्मल सूरत (पूर्ण रूप) में अरबों की तरफ़ भेजा गया। आपने और दूसरी क़ौमों ने जब उसका कुछ हिस्सा बरबाद कर दिया, कुछ दूसरी चीज़ों के साथ ख़लत-मलत कर दिया और जो बाक़ी बचा उसे भी पीठ पीछे डाल दिया तब एक ऐसी उम्मत के पास फिर से भेजा गया जिसने उसे और उसके लानेवाले की सीरत (चरित्र) को हमेशा के लिए महफ़ूज़ (सुरक्षित) कर लिया। इसलिए यह आपकी अपनी ही

खोई हुई चीज़ है जो दूसरों के हाथों आपके पास वापस आई है। इसे पराई चीज़ समझकर नाक-भँव न चढ़ाइए, बल्कि ख़ुदा का शुक्र अदा कीजिए कि जो कुछ आपने खोया था वह फिर वापस मिल रहा है। अगर आप इसको असली रूप में देखना चाहते हैं तो कुरआन में देखें और मुहम्मद (सल्ल०) और उनके सहाबा (रज़ि०) की ज़िन्दगियों में देखें। आज के मुसलमानों की ज़िन्दगी और मामलात को इस्लाम न समझ बैठें। जिस तरह आप लोग दीन-धर्म से बेनियाज़ होकर वतनीयत, क़ौमियत और दुनिया-परस्ती में गुम हो गए हैं उसी तरह ये भी इस्लाम को पीठ-पीछे डालकर उन्हीं चीज़ों में गुम हो गए हैं और इनके यहाँ इस्लाम का इस्तेमाल सिवाय अपने जलसों और जुलूसों में एक क़ौमी नारे की हैसियत से इस्तेमाल करने के और कुछ नहीं रहा है। आप इस्लाम का खुले दिल से मुताला (अध्ययन) कीजिए। इसे हर हैसियत से जाँचिए और परखिए। हमने इसे एक सिस्टम (System) की हैसियत से इसको असली रूप में पेश किया है। अगर आप इसे समझने के लिए तैयार हैं तो हम आपकी इस काम में हर मदद के लिए तैयार हैं। हैरत है कि आप शोसलिज़्म (Socilaism), कमयूनिज़्म (Communism), नाज़िज़्म (Nazism) और फ़ासिज़्म (Facism) और दुनिया की हर तहरीक (आन्दोलन) का खुले दिल से अध्ययन करते और उसकी अच्छाई और बुराई की बिना पर उसपर ग़ौर करते हैं, लेकिन इस्लाम के मामले में तास्सुब (पक्षपात) की ऐनक चढ़ा लेते हैं और यह सिर्फ़ इसलिए कि जिन लोगों से आपकी एक मुद्दत से राजनैतिक कशमकश है वह अपने आपको इसी (दीन) से जोड़ते हैं। 'इस्लाम' ख़ुदा का दीन है और उसके बन्दों के लिए उसी तरह नेमत (अनुकम्पा) है जिस तरह उसका पानी, अनाज, फल, फूल, बारिश और ख़ुदा की पैदा की हुई ज़मीन और आसमान की बाक़ी सारी चीज़ें। जब आप इन नेमतों के इस्तेमाल से इसलिए हाथ नहीं खींचते कि मुसलमान भी उनको इस्तेमाल करते हैं तो आख़िर उस नेमत से सिर्फ़ मुसलमानों की ज़िद में क्यों भागते हैं।

मेरे प्यारे भाइयो!

यह शैतान की बहुत बड़ी चाल है। वह इनसान को हक़ (सत्य) से रोकने के लिए तरह-तरह की रुकावटें डालता है। आप उसकी इस चाल में फँसकर अपनी दुनिया और आख़िरत ख़राब कर रहे हैं। हम ख़ुदा के दीन को आपके सामने पेश करते हैं। यह हमारा फ़र्ज़ है जो हमारे और आपके रब ने हमारे ज़िम्मे लगाया है। ख़ुदा ने अपने बन्दों को यह हुक्म दिया है कि नेकी और भलाई की

हर बात जो उन्हें मालूम हो उसे अपने दूसरे भाइयों तक पहुँचाएँ ताकि वे भी उससे फ़ायदा उठाएँ और दुनिया से बुराई ख़त्म हो। जब मरने के बाद आप ख़ुदा के सामने पेश होंगे तो आपसे पूछा जाएगा कि मेरे कुछ बन्दों ने मेरा दीन आपके सामने पेश किया, आपको उसपर ग़ौर करने की दावत दी लेकिन आपने उसकी तरफ़ ध्यान न दिया। कहिए इसका आप क्या जवाब देंगे? यह दिन आनेवाला है और उसके आने में दिल की एक हरकत के सिवा कोई चीज़ रुकावट नहीं।

मुझे उम्मीद है कि मेरे मुसलमान और ग़ैर-मुस्लिम भाई मेरी इन गुज़ारिशों पर ठण्डे दिल से ग़ौर करेंगे।

मद्रास के इजतिमा के बाद नाख़ुशगवार वाक़िआत

जो लोग हमारे तरीक़े और मस्लक से वाक़िफ़ (परिचित) हैं वे अच्छी तरह जानते हैं कि हमारा तौर-तरीक़ा दूसरे लोगों या जमाअतों से ख़ामख़ाह लड़ने-झगड़ने का नहीं है, इसलिए हम नहीं चाहते थे कि हमारे मद्रास के हल्क़ेवार इजतिमा के मौक़े पर वहाँ के कुछ ग़ैर-ज़िम्मेदार और उपद्रवी लोगों ने जो बद-मज़गी पैदा करने की कोशिश की उसे रिकार्ड में लाएँ। लेकिन अवाम की इस अफ़सोसनाक हरकतों के बाद मद्रास के कुछ ज़िम्मेदार रहनुमाओं और कारकुनों ने जो रविश अपनाई और शरारत फैलानेवाले लोगों की जिस तरह एलानिया ताईद (समर्थन) की और जमाअत इस्लामी के बारे में ग़लतफ़हमियाँ फैलाने की जो कोशिश की उसकी वजह से यह ज़रूरी हो गया कि हम मद्रास के इस पूरे वाक़िआ को संक्षेप में ठीक-ठीक बयान करें।

इजतिमा के पहले इजलास में जमाअत की सालाना रूदाद सुनाई जा रही थी कि 4 बजे शाम के क़रीब 40-50 आदमियों का एक गिरोह मुस्लिम लीग का झण्डा लिए हुए नारे बुलन्द करता हुआ इजतिमागाह के मेन दरवाज़े पर आकर रुका और उसने नारों और दूसरे तरीक़ों से इतना शोर मचाना शुरू किया कि लाउड-स्पीकर के बावजूद तक़रीर करनेवाले की आवाज़ सुननेवालों तक पहुँचनी मुश्किल हो गई। अमीरे जमाअत ने जो उस वक़्त इजलास के सदर (President) थे क़ैय्यिम साहब को रिपोर्ट बन्द कर देने और इजतिमा में शरीक लोगों को बिल्कुल शान्त रहने के लिए कहा, इजतिमागाह में पूरी ख़ामोशी छा गई। बाहर से आनेवाला गिरोह लगातार शोर मचाता रहा। कुछ आदमी इजतिमागाह

में भी आए और उन्होंने गड़बड़ी फैलाने की कोशिश की और कुछ लोग इजतिमागाह के मुख्य दरवाज़े पर चढ़ गए और उन्होंने गेट पर मुस्लिम लीग का झण्डा लगा दिया। इसपर जमाअत के जो कारकुन दरवाज़े पर मौजूद थे उन्होंने उस गिरोह के लीडरों से कहा कि भाई अगर यह झण्डा लगाने ही की बात थी तो इतना हँगामा करने की क्या ज़रूरत थी। आप हमें कहते तो हम ख़ुद उसे लगा देते। अब अन्दर चलिए और कार्रवाई सुनिए। इस तरह ये सब लोग इजतिमागाह में बैठ गए और जलसे की कार्रवाई फिर शुरू हुई।

यहाँ यह बयान कर देना भी मुनासिब होगा कि इस हँगामे के बीच में पुलिस ने, जो शान्ति क़ायम करने के लिए आई हुई थी, कई बार दख़ल देने की कोशिश की लेकिन हमारे कारकुनों ने उनसे साफ़ तौर पर कह दिया कि अपने इजतिमा में शान्ति बनाए रखने के हम ख़ुद ज़िम्मेदार हैं, हम आपसे कोई मदद नहीं लेना चाहते, आप हमें अपने तरीक़े पर काम करने दें।

दूसरे इजलास में मौलवी मज़हरुद्दीन साहब और क़ैय्यिम जमाअत की तक़रीरें सभी मौजूद लोगों ने जिनकी तादाद पाँच-छः सौ थी, बहुत ही सब्र और ख़ामोशी से सुनीं। जब कैय्यिम जमाअत की तक़रीर, जो ऊपर लिखी जा चुकी है, ख़त्म हुई तो मुस्लिम लीग के एक कारकुन डॉ० नेमतुल्लाह साहब ने ये सवाल चिट पर लिखकर क़ैय्यिम जमाअत को दिया जो इस तरह हैं—

"क्या इस्लाम और मुसलमानों की ख़िदमत एक वक़्त में नहीं की जा सकती, अगर नहीं तो क्यों?"

इसके साथ ही एक मुस्लिम लीग से ताल्लुक़ रखनेवाले आलिमे दीन ने, जो बहुत बुज़ुर्ग सूरत और काफ़ी उम्र के थे, नीचे लिखे सवाल क़ैय्यिम जमाअत को जवाब के लिए दिया—

"अगर हम किसी फ़ासिक़ (ख़ुदा का नाफ़रमान) और फ़ाजिर (दुराचारी) शख़्स को अपना रहनुमा बना लें तो हम जहन्नम में जाएँगे?"

इन दोनों सवालों को हाथ में लेकर क़ैय्यिम जमाअत माइक्रोफ़ोन पर अभी आकर खड़े ही हुए थे कि दो-तीन सौ आदमी एकदम इजतिमा में खड़े हो गए और उन्होंने "मुस्लिम लीग ज़िन्दाबाद," "क़ाइदे आज़म ज़िन्दाबाद", "पाकिस्तान ज़िन्दाबाद" और "जमीअतुल उलमा मुरदाबाद" के नारे बुलन्द करने शुरू कर दिए और इतना शोर मचाया कि कानों पड़ी आवाज़ सुनाई नहीं

देती थी। क़ैय्यिम जमाअत ने लाउड-स्पीकर की मदद से सभी अरकान और हमदर्दों को नसीहत की कि "वे बिल्कुल ख़ामोश और पुरअम्न रहें, बलवाइयों की किसी बात और हरकत का नोटिस न लें और न उनकी किसी हरकत का कोई जवाब दें। जमाअत इस्लमी दुनिया में शान्ति क़ायम करने और फ़साद को मिटाने के लिए उठी है, फ़साद मचाने के लिए नहीं उठी है। अगर, ख़ुदा न करे, बलवाइयों के हाथ से किसी को चोट भी आ जाए तो उसे उसको सब्र से सहन करना चाहिए। फ़साद को रोकने के लिए जान दे देना बुज़दिली या कायरता नहीं, बहादुरी है। हम अंबिया (अलै०) के मिशन को लेकर खड़े हुए हैं, हमें दुनिया को अख़लाक़ का सबक़ देना है, हमें अपने पेशवा की तरह पत्थरों का जवाब दुआ-ए-ख़ैर से देना है, इसलिए अपने जज़्बात पर क़ाबू रखिए।"

चुनांचे सारे अरकान और हमदर्द अपनी-अपनी जगह ख़ामोश बैठे रहे और कोई भी जवाबी हरकत न की। फिर बलवाइयों ने स्टेज की तरफ़ आगे बढ़ना शुरू किया और इधर-उधर कुछ जूते भी फेंके। यह देखकर डॉ० नेमतुल्लाह साहब ने स्टेज पर पहुँचकर बलवाइयों को अम्न की नसीहत करनी चाही, लेकिन उन्होंने डॉक्टर साहब को भी बुरा-भला कहना शुरू कर दिया। डॉक्टर साहब ने ख़ुदा और रसूल और मुस्लिम लीग और क़ाइदे आज़म, हर एक का वास्ता देकर कहा कि मेरी बात तो सुन लो, मैं लीग का कारकुन हूँ, इसके लिए क़ुरबानियाँ कर चुका हूँ, पाकिस्तान के लिए जान देने को हाज़िर हूँ। लेकिन सब बेकार, बलवाई लगातार हँगामा मचाते रहे। आख़िरकार डॉक्टर साहब ने लीग के नारे लगाने शुरू किए और जब उन्हें सुनकर भीड़ ज़रा ख़ामोश हुई तो उन्होंने कहा—"यह जमीअतुल उलमा का जलसा नहीं है, बल्कि जमाअत इस्लामी का इजतिमा है जो इस्लाम और पूरे इस्लाम की अलमबरदार है और जिसका मक़सद इस्लामी निज़ाम का क़याम है। मैंने मुक़र्रिर को सवाल लिखकर दिया है, उसका जवाब उन्हें देने दीजिए और जो वह कहना चाहते हैं उसे सुनिए।" इतनी बात ही डॉक्टर साहब कहने पाए थे कि उन लोगों ने फिर शोर मचाना शुरू कर दिया और पहले से भी ज़्यादा हँगामा बरपा किया। अब एक और लीगी कारकुन जो शायद किसी हल्क़ा की लीग के सदर या सेक्रेट्री थे, स्टेज पर आए और उन्होंने भी वे सारी तदबीरें अपने लोगों को ख़ामोश करने की कीं जो वे कर सकते थे, लेकिन सब बेकार। आख़िर उन्होंने कहना शुरू किया कि "मैं पाकिस्तानी हूँ, यह हमारी ज़िन्दगी का मक़सद है। जो इसकी मुख़ालिफ़त

करेगा, वह हमारा दुश्मन है, हम उसे पीस डालेंगे, वग़ैरा-वग़ैरा।'' इससे बलवाइयों का जोश ज़रा ठण्डा हुआ तो उन्होंने उनसे गुज़ारिश की कि वे ज़रा सब्र करें और अपने लीडर के सवाल का जवाब सुनें। इस तरह उनमें से कुछ लोग बैठ गए, कुछ खड़े देखते रहे, लेकिन इजतिमागाह में बड़ी हद तक ख़ामोशी पैदा हो गई। इसपर क़ैय्यिम जमाअत ने नीचे लिखी छोटी-सी तक़रीर की और जलसा ख़त्म कर दिया।

''मेरे प्यारे भाइयो! मुझे यह देखकर बड़ा दुख हुआ कि आपमें कुछ भी सब्र और बरदाश्त मौजूद नहीं, और आप अपनी ख़ाहिशों और जज़्बों से इतना ज़्यादा मग़लूब (परास्त) हैं कि आपको अपने, अपनी क़ौम के और अपने दीन व मज़हब के वक़ार (प्रतिष्ठा) का भी कोई ख़याल नहीं रहता। आपको सोचना चाहिए कि आपने पिछले आध-पौन घंटे में जो हरकतें की हैं वह किस उसूल और तहज़ीब और शराफ़त के किस मेआर से सही कही जा सकती हैं। आपके सामने कुछ बातें कही गईं और आपको इसका मौक़ा दिया गया कि उनके मुताल्लिक़ अगर आपको कुछ एतिराज़ हो या आपके दिल और दिमाग़ में कोई शक और शुब्हा पैदा हुआ हो तो उसे बिना झिझक पेश कीजिए। अतः आपके दो मुहतरम करकुनों ने दो सवाल लिखकर दिए भी। लेकिन बजाय इसके कि आप उन सवालों और उनके जवाबों को सुनने और समझने की कोशिश करते, आपने हँगामा मचा दिया। इसका मतलब यह हुआ कि आपको किसी बात के सही या ग़लत होने से कोई बहस नहीं। आपकी ख़ाहिश की पैरवी होनी चाहिए, चाहे वह सही और माक़ूल हो या उसके ख़िलाफ़। आप ग़ौर कीजिए कि क्या इस रवैये के साथ आपके लिए दुनिया में पनपने और तरक़्क़ी करने का कोई मौक़ा है? आपमें कोई नाम के लिए भी नज़्म और ज़ब्त मौजूद नहीं। हर आदमी अपना आप लीडर बन गया है और अपनी ख़ाहिशों और जज़्बों का इतना ग़ुलाम हो गया है कि जिन लोगों को उसने ख़ुद अपना लीडर चुना है उनकी भी बात मानने के लिए तैयार नहीं।

ख़ैर इस बात से मुझे कुछ ख़ुशी भी हुई कि आख़िर आप लोगों ने अपने जज़्बात पर क़ाबू पा लिया और यह मालूम करके इतमीनान हुआ कि अभी अख़लाक़ी हिस (चेतना) बिल्कुल ख़त्म नहीं हुई है, अगर इसकी परवरिश की जाए तो इसे दूसरे जज़्बात पर ग़ालिब किया जा सकता है। अब इससे पहले कि इन सवालों के बारे में कुछ कहूँ मैं यह बिल्कुल साफ़ कर देना चाहता हूँ कि

हमारी दावत इस्लाम और ख़ालिस (शुद्ध) इस्लाम की तरफ़ है। हम न इसमें कोई कमी करते हैं और न किसी चीज़ की बढ़ोत्तरी, क्योंकि हमें या किसी दूसरे को इसका कोई इख़तियार नहीं। हम जो चीज़ पेश करते हैं किताब और सुन्नत की सनद से पेश करते हैं। इसलिए हम पर और हमारी दावत पर जो एतिराज़ किया जाए, किताब और सुन्नत की सनद और दलील ही से किया जाना चाहिए और हमारे जवाब को भी उसी मेआर पर परखना चाहिए। अगर किसी के नज़दीक यह मेआर (पैमाना) क़ाबिले क़बूल नहीं तो उसके लिए हमारे पास कोई जवाब नहीं। इसके साथ ही मैं यह बात भी बिल्कुल खुले लफ़्ज़ों में बता देना चाहता हूँ कि हम इसी दावत के लिए जीने और मरने की ठान चुके हैं, दुनिया की कोई ताक़त न इससे हमें हटा सकती है और न मरऊब (भयभीत) कर सकती है। हाँ, दलील व बुरहान (तर्क) और किताब व सुन्नत को साथ लेकर मैदान में आइए। अगर आप इस रास्ते को ख़ुदा और रसूल की तालीम की रू से ग़लत साबित कर दें, तो हम न सिर्फ़ इसे छोड़ देंगे बल्कि अपनी ग़लती का इसी स्टेज से एलान करेंगे और आपका शुक्रिया अदा करेंगे कि आपने हमें सही रास्ता दिखाया। लेकिन अगर कोई यह ख़्याल करे कि सिर्फ़ दंगा, फ़साद और शोर मचाकर वह हमें राहे हक़ (सत्य-मार्ग) से फेर देगा तो यह उसकी ग़लफ़हमी है जिसे जल्द से जल्द दूर हो जाना चाहिए।

अब आपके सवालों के बारे में यह अर्ज़ है कि कल मग़रिब के बाद आम ख़िताब के लिए जलसा किया जा रहा है जिसमें हमारी जमाअत के अमीर अपनी दावत को आप लोगों के सामने पेश करेंगे और आपके लिए मौक़ा होगा कि जो और जितने सवाल, एतिराज़ और शुब्हे आप पेश करना चाहें, करें। इसलिए मेरी राय यह है कि ये सवाल भी मैं उन्हीं को दे दूँ और कल वे अपनी तक़रीर में इनको भी साफ़ कर दें।

इससे आपको मुझसे कहीं ज़्यादा मुस्तनद (प्रमाणित), मुदल्लल (तर्क-संगत) और इतमीनान-बख़्श जवाब मिल जाएगा। मुमकिन है कि मेरे जवाब से आपकी तशफ़्फ़ी न हो और बात फिर वहीं की वहीं रहे। इसलिए अब यह जलसा ख़त्म किया जाता है।''

इसके बाद बलवाइयों ने फिर हँगामा शुरू कर दिया, जलसागाह से निकलकर स्टोर और किचन में घुस गए। तक़रीबन 50 आदमियों का खाना लूटकर ले गए और बड़ी ही बेहयाई के साथ ठट्ठे मारते हुए आम रास्ते पर दोनों तरफ़ खड़े

होकर उस लूटे हुए खाने को खाते रहे।

इस हंगामे के बीच पुलिस ने अपनी मदद के लिए एक गाड़ी पुलिस की और मँगवा ली और बार-बार चाहा कि दख़ल-अन्दाज़ी करें, यहाँ तक कि उन्होंने हमारे कारकुनों को बुज़दिली का ताना भी दिया और कहा कि तुम अजीब लोग हो कि तुम्हें अपनी इज़्ज़त की भी परवाह नहीं, तुम्हारी इतनी बेइज़्ज़ती की जा रही है और तुम उल्टे हमें दख़ल देने से रोक रहे हो। लेकिन जमाअत के कारकुन बराबर उनसे यही कहते रहे कि आपके दख़ल देने की कोई ज़रूरत नहीं है, हम आपको इतमीनान दिलाते हैं कि यहाँ कोई फ़साद नहीं होगा, क्योंकि फ़साद हमेशा जवाबी कार्रवाई से हुआ करता है और हम फ़ैसला कर चुके हैं कि ये लोग चाहे कुछ करें, हम उनके जवाब में कोई कार्रवाई न करेंगे, हम इसके लिए हरगिज़ तैयार नहीं हैं कि अपने भाइयों पर आपसे लाठियाँ और गोलियाँ चलवाएँ।

ग्यारह बजे के क़रीब जब बलवाई इधर-उधर हो गए और बिल्कुल शान्ति हो गई और किसी ख़राबी का डर बाक़ी न रहा तब इजलास के सदर (President) मौलाना मुहम्मद इसमाईल साहब और क़ैय्यिम जमाअत स्टेज से उठे और अपनी-अपनी जगह, जहाँ वे ठहरे थे, चले गए।

क़ैय्यिम जमाअत ने इस वाक़िआ की पूरी रिपोर्ट अमीरे जमाअत को दी और उन्होंने फ़रमाया कि चूँकि हम लोगों की सेवा और सुधार के लिए आए हैं, इनको फ़साद में डालने नहीं आए हैं, इसलिए इजतिमागाह को छोड़ दिया जाए और कल की सारी कार्रवाई मेरे ठहरने की जगह (कोठी मौलवी नज़ीर हुसैन साहब क़सूरी) पर हो। और कल आम ख़िताब का जलसा भी ख़त्म कर दिया जाए क्योंकि हम ज़बरदस्ती अपनी बात लोगों पर ठूँसना नहीं चाहते। अगर मद्रास के लोग सुनने के ख़ाहिशबन्द नहीं हैं तो हमें भी उन्हें सुनाने की ज़िद नहीं।

अगले दिन (26 अप्रैल को) एक साहब जिनका नाम शायद अब्दुल हफ़ीज़ था, अमीरे जमाअत के पास आए और कहने लगे कि मुझे और दूसरे समझदार मुसलमानों को कल के वाक़िआत से बहुत तकलीफ़ हुई और हम बड़े शर्मिन्दा हैं कि मद्रास के लोगों ने ऐसी अख़लाक़ से गिरी हुई हरकतें कीं। ख़ुद मुस्लिम लीग के लीडर इसे महसूस कर रहे हैं और यह मालूम करके कि आपने आज अपना आम ख़िताब की तक़रीर का प्रोग्राम रद्द कर दिया है, सब पढ़े-लिखे लोग अफ़सोस कर रहे हैं। आपका लिट्रेचर बहुत दिनों से मद्रास में फैल रहा है और

बहुत दिनों से हमें आरज़ू थी कि आपकी दावत कभी आपकी ज़बान से भी सुनने को मिले। अब अल्लाह तआला यह मौक़ा लाया था कि कुछ शरारती लोगों ने यह सूरते हाल पैदा कर दी। आप हमें इस मौक़े से महरूम न कीजिए, हम आपको यक़ीन दिलाते हैं कि अब फिर ऐसी सूरत (स्थिति) पेश न आएगी।

इसपर अमीरे जमाअत ने कहा—"आपको मालूम है कि ढाई-तीन साल से मैं गुर्दे की सख़्त तकलीफ़ में मुब्तला (ग्रस्त) हूँ। अभी पिछले अक्तूबर में मैंने ऑपरेशन करवाया था लेकिन इसके बाद फिर मर्ज़ लौट आया। इस वक़्त बिल्कुल ही इस क़ाबिल नहीं था कि इतना लम्बा सफ़र अपने आपको ख़तरे में डाले बिना कर सकूँ, लेकिन हालात की नज़ाकत और फ़र्ज़ के एहसास की बिना पर इसी हाल में घर से निकल खड़ा हुआ कि अल्लाह तआला ने अपने दीन की जो और जितनी रौशनी मुझे दी है उसे अपने भाइयों तक पहुँचाने की कोशिश करूँ और उन्हें यह समझाऊँ कि मुसलमान और मुस्लिम उम्मत होने की हैसियत से उनकी ज़िम्मेदारियाँ क्या हैं और वे क्या कर रहे हैं। लेकिन मद्रास के मुसलमानों ने कल अपने रवैये से यह बता दिया कि वे मेरी बात नहीं सुनना चाहते, इसलिए मैंने आम ख़िताब का प्रोग्राम रद्द कर दिया। क्योंकि जो लोग मेरी बात सुनना न चाहें-उन्हें सुनाने पर मुझे कोई ज़िद नहीं। जहाँ तक मेरी दीनी ज़िम्मेदारी का ताल्लुक़ था, वह मैंने पूरा कर दिया। अब अगर ये लोग अपनी ग़लती को महसूस करते हैं और मेरी बात सुनना चाहते हैं तो बिसमिल्लाह, मैं ख़िदमत के लिए हाज़िर हूँ, लेकिन मुस्लिम लीग के मक़ामी लीडरों की तरफ़ से मुझे यक़ीन दिलाया जाना चाहिए वे अपने ज़ेरे असर (आधीन) जनता को क़ाबू में रखेंगे। मुझे अपनी बेइज़्ज़ती की परवाह नहीं, लेकिन मैं ख़ुदा के दीन और अंबिया (अलैहि०) की दावत की बेइज़्ज़ती किसी हाल में बरदाश्त नहीं कर सकता, ख़ासकर जबकि इसके करनेवाले मुसलमान हों।"

अब्दुल हफ़ीज़ साहब यह पैग़ाम लेकर चले गए। इसके बाद दिन में और भी कई जाने-माने लोग आए और उन्होंने भी हफ़ीज़ साहब ही की तरह अफ़सोस ज़ाहिर किया और अमीरे जमाअत ने उन्हें वही जवाब दिया जो हफ़ीज़ साहब को दिया था, और साथ ही उन्होंने यह समझाने की कोशिश की कि मौजूदा क़ौमी तहरीक (आन्दोलन) में मुसलमानों की आम अख़लाक़ी हालत जितनी गिर गई है, हक़ीक़त में यह एक बड़ी ही तश्वीशनाक (चिन्ताजनक) हालत है। क़ौमी बेदारी (जागरूकता) के नाम से उनके अन्दर कुछ ख़ाहिशें तो पैदा कर

दी गई हैं और उनके जज़्बात भी भड़का दिए गए हैं, मगर न उनकी अख़लाक़ी तरबियत की गई है, न उनमें कोई ज़ब्त (बर्दाश्त का माद्दा) पैदा किया गया है और न ही उनके अन्दर कोई समझ-बूझ पैदा की गई है। आम लोगों को इतना आज़ाद और बे-लगाम बना देना हर पहलू से बहुत ही ख़तरनाक है। डर है कि कहीं किसी वक़्त ऐसी हरकत न कर बैठें जिसकी सज़ा मद्रास शहर के मुसलमानों को ही नहीं, बल्कि पूरे दक्षिणी भारत के मुसलमानों को भुगतनी पड़े। अगर ये लोग इसी राह पर चलते रहे तो बहुत जल्द ये किसी ख़ौफ़नाक हादसे से दोचार होंगे। उनका अपने चुने हुए लीडरों तक की ज़रा-भी परवाह न करना बहुत ही तश्वीशनाक सूरते-हाल (चिन्ताजनक स्थिति) है, आप लोगों को इस तरफ़ जल्द से जल्द ध्यान देना चाहिए। अगर आपने इसका जल्दी सुधार न किया तो मैं देख रहा हूँ कि एक दिन आपकी यही पैरवी करनेवाले ख़ुद आप लोगों की पगड़ियाँ उछालेंगे और आप उनके हाथों बेइज़्ज़त होंगे। अवाम का मामला आग और पानी का-सा होता है कि अगर उनपर क़ाबू और कन्ट्रोल न रखा जाए तो ये अपने घर को भी उसी तरह बरबाद कर सकते हैं जिस तरह दूसरे के घर को।''

इन सब बातों के बावजूद हम बहुत ही अफ़सोस और दुख के साथ इस बात का इज़हार करने पर मजबूर हैं कि सिवाय सेठ सर मुहम्मद जमाल साहब के बहुत कम लोग ऐसे थे जिनको इस सूरते-हाल पर सही मानों में अफ़सोस हुआ हो। उनमें से ज़्यादातर तो इस बात पर फ़ख़्र कर रहे थे कि मद्रास के मुसलमानों के अन्दर मुस्लिम लीग से इतना गहरा ताल्लुक़ पैदा कर दिया गया है कि अब वे मुसलमानों में किसी दूसरी जमाअत के वुजूद को बरदाश्त ही नहीं कर सकते, चाहे उसकी दावत कैसी ही हक़ और सही हो।

उसी दिन मग़रिब से कुछ मिनट पहले मुस्लिम लीग के छः-सात लीडर जिनमें जनाब के०टी० शरीफ़ (सेक्रेट्री मुस्लिम लीग), जनाब अताउल्लाह साहब (एम०एल०ए० सेन्ट्रल), जनाब अब्दुल हमीद साहब (एम०एल०ए० लीडर मुस्लिम लीग एसेम्बली व पार्टी) और वे बुज़ुर्ग भी शामिल थे जिन्होंने रात के जलसे में सवाल नम्बर 2 लिखकर दिया था, आए और क़ैय्यिम जमाअत से मिलने की ख़ाहिश ज़ाहिर की। चुनांचे क़ैय्यिम जमाअत, जमाअत के इजलास से उठकर उनसे मिलने के लिए गए। परिचय (Introduction) के बाद जनाब शरीफ़ साहब ने अमीरे जमाअत के आम ख़िताब (आम सभा) के प्रोग्राम के

बारे में मालूम किया और क़ैय्यिम जमाअत ने वही बातें उनके सामने पेश कर दीं जो अमीरे जमाअत ने अब्दुल हफ़ीज़ साहब से कही थीं और उनसे कहा कि अब इस तक़रीर का होना या न होना आप लोगों की मरज़ी और ख़्वाहिश पर है। अभी यह बातें हो ही रही थीं कि इजतिमागाह में एक हँगामा शुरू हो गया और इतना शोर मचा कि अमीरे जमाअत के क़यामगाह में भी जहाँ आज के इजतिमा की कार्रवाई हो रही थी, काम करना मुश्किल हो गया। हमने अपने कारकुनों को कहलवा भेजा कि वे कोई जवाबी कार्रवाई न करें, बल्कि बलवाइयों की हर बदतमीज़ी और ज़्यादती को मुस्कराते हुए बरदाश्त करें क्योंकि हम उन्हें मजबूर समझते हैं। जिन लोगों के हाथ में उनकी बागडोर है उन्होंने कभी यह सोचा ही नहीं कि उन्हें किसी अख़लाक़ और नज़्म व ज़ब्त (Order & Discipline) की तरबियत देने की भी ज़रूरत है। जो इन बेचारों ने सीखा है वही कुछ वे कर रहे हैं। आप वह कीजिए जो आपको सिखाया गया है।

इसके साथ क़ैय्यिम जमाअत ने मुस्लिम लीग के उपरोक्त लीडरों से दरख़ास्त की कि पहले आप जाकर अपने लोगों को क़ाबू में लाने की कोशिश करें क्योंकि इसके बिना न आप कुछ फ़ैसला कर सकते हैं और न हम।

ये सारे लीडर इजतिमागाह में गए। बलवाइयों ने पूरे इजतिमागाह में मिस्टर जिन्नाह की बीसियों तस्वीरें लटका रखी थीं। हर तरफ़ गड़बड़ी मचा रहे थे और शरारत का वह मुज़ाहिरा (प्रदर्शन) कर रहे थे कि ख़ुदा की पनाह, उनके लीडरों ने कोई घण्टा-भर की लगातार कोशिश और जिद्दोजुहद के बाद भीड़ को ज़रा क़ाबू में किया और उनके जज़्बात को अपील करने के लिए कुछ नारे लगाए। एक-दो तक़रीरें भी कीं और उन्हें बताया कि आपने स्टेज को तो जीत लिया है, अब बताइए मौलाना मौदूदी साहब की तक़रीर सुनना चाहते हैं या नहीं? अगर आप चाहेंगे तो वे तक़रीर करेंगे और नहीं चाहेंगे तो नहीं करेंगे। इसके जवाब में भीड़ ने जो छः-सात सौ की थी, जवाब दिया कि हरगिज़ नहीं सुनेंगे। इसपर लीडरों ने उन्हें चले जाने को कहा लेकिन भीड़ इसके बाद भी देर तक शोर मचाती और हंगामा बरपा करती रही। अगले दिन जब इजतिमागाह के सामान का जाइज़ा लिया गया तो बहुत-से बरतन और चटाइयाँ ग़ायब थीं।

इस शोर-शराबे के वक़्त भी पुलिस बहुत बड़ी तादाद में मौजूद थी और उसने बहुत-सारा इन्तिज़ाम कर रखा था, क्योंकि सुबह से ही यह मशहूर था कि आज बलवाई फ़साद की तैयारी करके आएँगे और इजतिमागाह को आग

लगाएँगे। लेकिन पुलिस के बहुत ज़िद करने के बाद भी जमाअत के कारकुनों ने उन्हें बीच में आने से मना कर दिया और उनसे कहा कि जो लोग जज़्बात के जोश में आकर पागल हो गए हों और अपना तवाज़ुन (सन्तुलन) खो चुके हों उनपर लाठियाँ और गोलियाँ चलाना ज़ुल्म और ज़्यादती है। हमें इनपर ग़ुस्सा नहीं रहम आ रहा है। हमें उम्मीद है कि अगर अल्लाह ने चाहा तो एक दिन हम इनकी बीमारी को दूर करने में कामयाब हो जाएँगे।

हमें उम्मीद थी कि इस वाक़िआ के बाद मद्रास के मुसलमान अकाबिर (बड़े लोग) सिर जोड़कर बैठेंगे और सोचेंगे कि इस सूरते-हाल (स्थिति) पर कैसे क़ाबू पाया जाए और इसके सुधार के क्या उपाय किए जाएँ। लेकिन हमें यह देखकर बहुत मायूसी हुई कि अगले ही दिन बलवाइयों की इन हरकतों को बिल्कुल सही ठहराने के लिए दलीलें गढ़ी जाने लगीं। किसी ने कहा कि इजतिमा के नाज़िम से कुछ लोगों की...... ज़ाती दुश्मनी की वजह से यह सब कुछ हुआ। किसी ने कहा कि मुस्लिम लीग के लोगों को इजतिमा के इन्तिज़ाम में शामिल न करने की वजह से हुआ। किसी ने कहा कि जमाअत के किसी रुक्न से जब यह पूछा गया कि यह इजतिमा किस लिए किया जा रहा है तो उसने जवाब दिया कि लोगों को मुसलमान बनाने के लिए। इससे लोगों में ग़ुस्सा फैल गया, वग़ैरह-वग़ैरह। दलीलों और फिर इनका गढ़ना और ईजाद करना यहीं ख़त्म नहीं हुआ, बल्कि कुछ दिनों के बाद मद्रास प्रोविंशियल मुस्लिम लीग के सदर (President) मुहम्मद इस्माईल साहब (एम०एल०ए०) ने बहुत-से अख़बारों में एक लम्बा-चौड़ा बयान छपवाया जिसमें उन्होंने बलवाइयों के इस रवैये को इस तरह सही साबित करने की कोशिश की कि इजतिमा में जो तक़रीरें की गईं उनमें मुस्लिम लीग और उसके लीडरों पर बहुत ही नामुनासिब हमले किए गए थे....(इसी लिए) इस क़िस्म के चलन के ख़िलाफ़ सख़्त क़दम उठाना (ही) चाहिए (था)। इसी सिलसिले में मद्रास के एक और ज़िम्मेदार मुस्लिम लीगी का नीचे लिखा ख़त-मौलाना मौदूदी के नाम मिला—

ब-आली जनाब सैयद अबुल आला मौदूदी साहब

अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाह

कुछ लोगों से यह बात सुनने में आई है कि आप मद्रास से दुखी होकर लौटे हैं और आपने यहाँ की पब्लिक को बद-तहज़ीब वग़ैरह कहा है। इसमें कोई शक नहीं कि पब्लिक ने आपके जलसे में हँगामा मचाया, लेकिन यह अवाम की

ग़लती नहीं थी बल्कि ख़ुद आपके कुछ कारकुनों का ग़लत रवैया था। हम यह मानते हैं कि मद्रास के लोग मिस्टर जिन्नाह पर भरोसा रखते हैं और उनको अपना लीडर मानते हैं लेकिन इससे यह ज़रूरी नहीं हो जाता कि वे दूसरी जमाअतों के ख़यालात और विचारों को सुनने से इनकार कर दें।

असल बात यह है कि मद्रास में जो कुछ हुआ उसकी पूरी ज़िम्मेदारी सिर्फ़.......... पर आइद होती है। ये साहब मद्रास में कांग्रेसी मशहूर हैं क्योंकि वह हमेशा मिस्टर जिन्नाह को बुरा-भला कहते हैं और मुस्लिम लीग पर तंक़ीद करते रहते हैं। चुँकि पब्लिक उनसे पहले ही से नाराज़ थी इसलिए अब जो जसला हुआ और इजतिमा के नाज़िम यह साहब बनाए गए तो पब्लिक को यक़ीन हो गया कि यह जलसा मुस्लिम लीग के ख़िलाफ़ है। लेकिन बाद में असल हक़ीक़त मालूम हुई कि आपकी जमाअत का कांग्रेस या जमीअतुल उलमा से कोई ताल्लुक़ नहीं। हम मुअद्दबाना (नम्रतापूर्वक) अर्ज़ करते हैं कि अगर आप यह चाहते हैं कि जमाअत इस्लामी का काम अच्छी तरह मद्रास में हो तो दो हस्तियों को यहाँ से हटा देना ज़रूरी है—एक .... और दूसरे ...... जब तक ये दोनों साहब यहाँ रहेंगे; आप यक़ीन जानिए कि यहाँ जमाअत इस्लामी की हरगिज़ तरक़्क़ी नहीं हो सकती क्योंकि ये दोनों यहाँ की पब्लिक की नज़रों में बिल्कुल ही एतिबार के क़ाबिल नहीं।

मैं उम्मीद करता हूँ कि आप हमारी उन ग़लतियों को माफ़ कर देंगे जिनकी वजह से आपको तकलीफ़ महसूस हुई। जवाब दें तो बड़ी मेहरबानी होगी।

फ़क़त वस्सलाम

दस्तख़त...........

19 अप्रैल, 1947 ई०

इस ख़त का जवाब अमीरे जमाअत ने इस तरह दिया—

मुहतरमी व मुकर्रमी

अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाह।

आपका इनायत-नामा मुझे कल ही मिला। इसमें शक नहीं कि मैं मद्रास से दुखी आया हूँ लेकिन यह गुमान न कीजिए कि मेरा यह दुख कुछ अपने ही लिए है या अपने बिगड़े हुए मुसलमान भाइयों पर मुझे कोई ग़ुस्सा है। बल्कि दुख इस

बात का है कि मद्रास में मैंने मुसलमानों को जिस हालत में पाया वह बहुत अफ़सोसनाक है और इससे मुझे ख़तरा महसूस होता है कि आगे मुसलिम अवाम को बहुत नुक़्सान पहुँचेगा। मैं मद्रास के क़ौम के रहनुमाओं और शुरफ़ा से ज़बानी भी कह चुका हूँ कि अवाम का इतना आज़ाद, ख़ुदमुख़्तार और बेलगाम हो जाना कोई अच्छी बात नहीं है और इससे डर है कि वे किसी वक़्त अपने लीडरों के नक़्शे के बिल्कुल ख़िलाफ़ कोई जंग छेड़ देंगे और उससे पूरे दक्षिण भारत के मुसलमानों की ज़िन्दगी पर बहुत बुरा असर पड़ेगा। यह ज़ाहिर बात है कि मद्रास में अवाम ने जो कुछ किया वह न तो मुस्लिम लीग के लीडरों के इशारे से था और न लीडर उसपर राज़ी ही थे। अब उनकी हरकतों का इसके सिवा क्या मतलब लिया जाए कि वे अपने लीडरों के क़ाबू से बाहर हो चुके हैं, अपने लीडर आप बन गए हैं, और किसी फ़सादी (उपद्रवी) और ग़ैर-ज़िम्मेदार आदमी के भड़काने से आसानी से एक हंगामा बरपा कर सकते हैं। आज यह चीज़ हमारे ख़िलाफ़ हुई इसलिए इसका कोई बुरा असर नहीं हुआ। क्योंकि हम हर हाल में उनके ख़ैरख़ाह हैं, और वे हमारे साथ बुराई भी करें तो हम उनके साथ बुराई करने को तैयार नहीं हैं। लेकिन कल अगर उन्होंने किसी ऐसी पार्टी के ख़िलाफ़ इस तरह की कोई हरकत की जो उन्हीं की तरह उपद्रवी और उद्दण्ड हो और जिसकी पीठ पर हुकूमत की अक्सरियत (Majority) भी हो तो यह चीज़ बहुत ख़तरनाक फ़सादात का सबब हो सकती है। ये बातें हैं जिनको मैं चाहता हूँ कि मद्रास के जाने माने लोग और रहनुमा अच्छी तरह समझें और उनके सुधार की फ़िक्र करें।

.........और ....साहबान के मुताल्लिक़ आपने जो लिखा है और अगर वह सौ प्रतिशत सही हो तब भी क्या मद्रास के अवाम के लिए यह जाइज़ हो सकता था कि वे शराब पिए हुए गुण्डों को लेकर हमारी इजतिमागाह में घुसें, जूते उछालें, खाना लूटकर ले जाएँ, इजतिमागाह की दूसरी चीज़ें चुराएँ और एक दीनी जमाअत के पिंडाल में ज़बरदस्ती तस्वीरें लाकर लटकाएँ। मैं हैरान हूँ कि आख़िर आप लोग ....साहब या किसी और शख़्स पर ज़िम्मेदारी डालकर अवाम की उन नाजाइज़ और बेहूदा हरकतों को सही साबित करने की कोशिश क्यों करते हैं। मान लें अगर यह कांग्रेसी मुसलमानों का जलसा होता तब भी क्या यह कमीना हरकतें जाइज़ हो सकती थीं?

मैंने मद्रास की जमाअत के मेम्बरों से मौक़े पर ही काफ़ी पूछ-ताछ की थी,

उन सारे इलज़ामों की छानबीन की थी जो मुझ तक पहुँचे थे और उनको एहतियात से काम करने की ताकीद कर दी थी। लेकिन यह मेरे लिए मुमकिन नहीं है कि जो लोग हमारी इस दावत को क़बूल नहीं करते उनकी ख़ातिर मैं उन कुछ लोगों को अपने से दूर फेंक दूँ जो मद्रास के लाखों मुसलमानों में से उस दावत को क़बूल करने के लिए आगे बढ़े हैं। मद्रास के 72 आदमी इस काम के लिए आगे बढ़ें तो इनशा अल्लाह वह आप से आप जमाअत में आगे हो जाएँगे और जो लोग क़ाबिलियत और अख़लाक़ में उनसे कमतर होंगे वे पीछे चले जाएँगे।

ख़ाकसार

अबुल आला

7 मई, 1947 ई०

हमने यह सारा वाक़िआ बिना कमी-बेशी के ठीक-ठीक बयान कर दिया और हमें उम्मीद है कि इससे वे सारी ग़लतफ़हमियाँ जो बेबुनियाद प्रोपगंडे और ग़लत बयानात के प्रचार-प्रसार से दक्षिण भारत के कुछ हल्क़ों में फैलाई जा रही हैं, दूर हो जाएँगी।

तीसरा जलसा

सनीचर, 26 अप्रैल 1947 ई०

यह इजलास ख़ास था और अमीरे जमाअत के क़यामगाह पर हुआ। इस इजलास में सिर्फ़ अरकान और हमदर्द ही शरीक हुए और इसमें निम्नलिखित कार्रवाइयाँ हुईं—

1. सूबा (Province) मद्रास की रिपोर्ट का बचा हुआ हिस्सा सूबा के क़य्यिम ने पेश किया।

2. मौलवी मुहम्मद यूनुस साहब, क़य्यिम हल्क़ा रियासत हैदराबाद (दकन), ने अपने हल्क़े की सालाना रिपोर्ट पेश की।

3. सैयद अब्दुल हकीम साहब, क़य्यिम हल्क़ा रियासत मैसूर, ने अपने हल्क़ा की सालाना रिपोर्ट पेश की।

इसके बाद दक्षिणी भारत के अरकान और जमाअतों की तरफ़ से जो तजवीज़ें और मशविरे आए हुए थे वे पेश हुए। पहले क़य्यिम जमाअत तजवीज़

या मशविरे पढ़कर सुना देते थे, उसके बाद तजवीज़ या मशविरे देनेवाले और दूसरे लोगों को मौक़ा दिया जाता था कि वह इसके पक्ष में या विरोध में कुछ कहना चाहें तो कहें, और आख़िर में अमीरे जमाअत अपने फ़ैसले या राय को बयान करके फिर मौजूद लोगों को मौक़ा देते थे कि अगर उनको फ़ैसले या जो राय दी गई उससे इतमीनान न हो तो अपने शुब्हा को पेश करें। लेकिन इसका मौक़ा न आया। तजवीज़ें (प्रस्ताव) और उनपर फ़ैसले नम्बरवार लिखे जा रहे हैं—

तजवीज़ 1. रियासत हैदराबाद में चूँकि तालीम बहुत कम है इसलिए ऐसे लोगों की तादाद (संख्या) बहुत ज़्यादा है जो सिर्फ़ मामूली उर्दू समझ सकते हैं। उनको इस्लाम की दावत से वाक़िफ़ कराने और सुधार की तरफ़ ध्यान दिलाने के लिए ज़रूरी है कि ख़ुतबात (नामक किताबों) को अलग-अलग पम्फ़लेटों की शक्ल में छापा जाए, उनकी क़ीमत और पेज कम होने की वजह से लोग उन्हें आसानी से ख़रीद और पढ़ लेते हैं और इससे आगे के लिए रास्ता खुल सकता है।

इस तजवीज़ (प्रस्ताव) की वज़ाहत (व्याख्या) करते हुए मौलवी मुहम्मद यूनुस साहब ने मक़ामी हालात की कुछ और तफ़सीलें बताईं और इसपर अमीरे जमाअत ने नीचे लिखे दो सवाल उनसे किए—

(1) क्या इससे बदगुमानी तो पैदा न होगी कि यह पैसा बटोरने की दूसरी शक्लें हैं कि एक ही चीज़ को अलग-अलग पम्फ़लेटों की शक्ल में छापा जाता है और फिर उसी को किताबी शक्ल (रूप) में छापकर के दोबारा पैसे वुसूल किए जाते हैं?

(2) हमारी किताबों के सारे मज़ामीन मिलकर एक चीज़ पेश करते हैं। उनको अलग-अलग करके पेश करने की मिसाल ऐसी होगी जैसे किसी आदमी के मुख़्तलिफ़ आज़ा (शरीर के अंगों) को अलग-अलग करके दिखाया जाए। इससे पढ़नेवाले के सामने पूरी बात नहीं आएगी और न वह हमारा मक़सद समझ सकेगा। आप इस क़बाहत (दोष) को किस तरह दूर करेंगे?

इन सवालों के जवाब में मौलवी मुहम्मद यूनुस साहब ने कहा कि रियासत हैदराबाद में इस बात का कोई डर नहीं कि लोगों तक दावत पहुँचाने की हमारी इस तदबीर को किताब बेचने पर गुमान किया जाएगा, बल्कि लोग तो इसके लिए बेहद ख़ुद ज़िद कर रहे हैं और मर्कज़ की हिदायतों के तहत ख़ुतबात की

अलग-अलग छपाई रोक देने से हैदराबाद में तब्लीग़ी काम को बहुत नुक़्सान पहुँचा है।

दूसरे सवाल के जवाब में यूनुस साहब ने कहा कि अगर एक-एक ख़ुतबा अलग-अलग छापने में यह डर है कि हमारी कोई पूरी बात पढ़नेवाले के सामने नहीं आएगी तो ख़ुतबात को पाँच हिस्सों में बाँट करके छाप दिया जाए। मिसाल के तौर पर— इस्लाम की हक़ीक़त, नमाज़ की हक़ीकत, ज़कात की हक़ीक़त, हज की हक़ीक़त और जिहाद की हक़ीक़त। इस तरह हर बात पूरी आ जाएगी।

अमीरे जमाअत : अगर यह बात है तो रियासत हैदराबाद के ख़ास हालात के लिहाज़ से वहाँ के लिए इसकी इजाज़त है लेकिन इसे सिर्फ़ आपके कारकुन अपनी तब्लीग़ में इस्तेमाल करें। इसका कोई इश्तेहार न दिया जाए और न इसे आम मक्तबों में रखा जाए और अगर बाद में कोई बदगुमानी पैदा होती देखें तो इसकी छपाई बन्द कर दी जाए।

मौलाना सिब्ग़तुल्लाह साहब : मद्रास के हालात भी बिल्कुल वही हैं जो हैदराबाद के बयान किए गए हैं और यहाँ भी ख़ुतबात के पम्फ़लेटों (Pamplets) की बहुत ही सख़्त ज़रूरत है।

अमीरे जमाअत : आप अपनी ज़रूरतों के मुताबिक़ हैदराबाद से मँगवा लिया करें लेकिन यहाँ भी इनका इश्तेहार न दें और न आम तौर पर मक्तबों में इन्हें बेचा जाए।

तजवीज़ 2 : हिन्दुस्तान की अक्सरियत (Majority) ग़ैर-मुस्लिम है और हमारा लिटरेचर (Literature, साहित्य) सिर्फ़ मुसलमानों को सामने रखकर लिखा गया है, इसलिए ग़ैर-मुस्लिम तबक़ों में दावत फैलाने के लिए ज़रूरी है कि ग़ैर-मुस्लिमों की नफ़सियात (Pshychology) को सामने रखकर मर्कज़ से आसान लिटरेचर तैयार किया जाए जिसका तर्जुमा (अनुवाद) ग़ैर-मुस्लिमों की ज़बान में भी किया जाए।

अमीरे जमाअत : इस सवाल के दो पहलू हैं, एक यह कि जो मज़मून मौजूद हैं उन्हीं को आसान और आम ज़बान में तब्दील किया जाए और दूसरे यह कि ग़ैर-मुस्लिमों की नफ़सियात (Psyhchology) और ज़रूरियात (आवश्यताओं) को सामने रखकर अलग से मज़मून लिखे जाएँ। आपकी मुराद किस काम से है?

मौलवी मुहम्मद यूनुस साहब (तजवीज़ पेश करनेवाले) : मेरी मुराद पहली शक्ल से है।

अमीरे जमाअत : हमने पिछले साल इलाहाबाद के इजतिमा में अवामी लिटरेचर के लिए एक हल्क़ा (क्षेत्र) बनाया था लेकिन इस हल्क़े ने अब तक कोई काम नहीं किया। अरकान और हमदर्दों को ख़ुद इस सिलसिले में क़दम उठाना चाहिए। मेरे लिए अब मुश्किल है कि मैं कोई नया काम शुरू करूँ। मैं तो दुआ करता हूँ कि अल्लाह तआला मुझे इतनी ही ताक़त दे दे कि मैं तफ़हीमुल क़ुरआन को पूरा कर लूँ और एक-दो और काम जो मेरे सामने हैं उन्हें अंजाम दे सकूँ। मैं काम के लिए हिदायत दे सकता हूँ और उसकी निगरानी भी कर सकता हूँ, मगर ख़ुद कुछ ज़्यादा काम करना अब मेरे लिए मुश्किल है। जहाँ तक ज़बान और बयान करने के अन्दाज़ के आसान करने और आसान तरीक़ों से बात को समझाने का ताल्लुक़ है, इसकी वाक़ई ज़रूरत है मगर ग़ैर-मुस्लिमों के लिए एक लिटरेचर तैयार करने की कोई ज़रूरत नहीं। ग़ैर-मुस्लिमों का कोई एक गिरोह नहीं है, बल्कि बहुत सारे गिरोह हैं। उन सबको अलग-अलग मुख़ातिब करना न तो मुमकिन है और न इसकी सही मानों में कोई ज़रूरत है। हर दावत उन्हीं लोगों को ही सामने रखकर ख़िताब (सम्बोधित) किया करती है जो उस वक़्त सीधे तौर पर उसके सामने होते हैं और इसी से सब लोग यह मालूम कर लेते हैं कि यह क्या है और क्या चाहती है। क़ुरआन ने भी यही तरीक़ा अपनाया है। हालाँकि उसके सामने पूरी दुनिया का सुधार है, लेकिन उसने सिर्फ़ अरब-वालों को मुख़ातिब (सम्बोधित) किया जो उसके पहले मुख़ातब थे, उन्हीं की गुमराहियों पर उसने तनक़ीद (आलोचना) की, उन्हीं की ख़राबियों को नुमायाँ किया और उन्हीं की नफ़सियात और ज़रूरतों को सामने रखकर अपनी दावत को पेश किया। लेकिन आप देखते हैं कि इसी क़ुरआन से दुनिया के अधिकतर हिस्से में इस्लाम फैल गया। हर वह आदमी जो क़ुरआन को पढ़े, यह मालूम कर सकता है कि इस्लाम क्या है और क्या चाहता है। इसी तरह दुनिया की दूसरी इजतिमाई दावतें भी अपने मुख़ातिब लोगों के हालात ही को सामने रखकर पेश की जाती हैं और उन्हीं से सारी दुनिया उनको समझती है। यूरोपीय तहज़ीब (सभ्यता) और फ़ल्सफ़ा (Philosophy, दर्शन) ही को ले लीजिए। वह सारे का सारा यूरोप के लोगों के मसलों ही को हल करता है और उन्हीं के हालात से बहस करता है, लेकिन इसी से पूरी दुनिया इस फ़ल्सफ़े (Philosophy) को

समझ रही है और असर ले रही है। इसलिए इस्लामी दावत को ग़ैर-मुस्लिमों के सामने पेश करने के लिए भी किसी अलग लिटरेचर की ज़रूरत नहीं, बल्कि जो लिटरेचर मुसलमानों के लिए लिखा गया है, वही ग़ैर-मुस्लिमों को इस्लाम समझाने के लिए काफ़ी होगा। असल ज़रूरत एक मुनज़्ज़म (सुसंगठित) और सरगर्म जमाअत की है जो इस दावत को लेकर उठे और अपनी अमली ज़िन्दगी में दिखा दे कि इस्लाम यह है।

तज़वीज़ 3 : तीसरी तजवीज़ वही थी जो टोंक के इजतिमा में पेश होनेवाली तजवीज़ों में नम्बर 3 पर दर्ज है। इसलिए इसे दोहराने की ज़रूरत नहीं है।

तजवीज़ 4: कुरआन की वे आयतें ख़ुतबों की शक्ल में तरतीब दी जाएँ जिनसे अल्लाह पर ईमान, रसूल पर ईमान और आख़िरत पर ईमान पैदा और मज़बूत होता है ताकि जो अरकान और दूसरे लोग कुरआन मजीद का गहरा इल्म नहीं रखते और ख़ुद उन आयतों को क़ुरआन से तलाश और तरतीब देने की सलाहियत नहीं रखते, वे उन ख़ुतबात की मदद से इस्लाम की बुनियादी दावत को क़ुरआन ही से समझ सकें और उनको दावत का क़ुरआनी तरीक़ा मालूम हो।

अमीरे जमाअत : यह तजवीज़ नोट कर ली जाए और हल्क़ा क़ुरआनी मज़ामीनवालों को दे दी जाए कि इस तरफ़ ध्यान दें। बाक़ी रहा दावत का क़ुरआनी तरीक़ा, तो उसपर मौलाना अमीन अहसन इस्लाही साहब तफ़सील से किताब लिख रहे हैं और वह जल्द ही छप जाएगी (यह किताब मुकम्मल हो चुकी है)।

तजवीज़ 5: उर्दू के अलावा अरबी और फ़ारसी वे ज़बानें हैं जो मुस्लिम देशों और क़ौमों में आम तौर पर बोली और समझी जाती हैं। इन ज़बानों में लिटरेचर के तर्जुमे (अनुवाद) और छपाई की रफ़्तार को जितना ज़्यादा तेज़ किया जाएगा उतना ही जल्द दूसरे मुस्लिम देशों में सही फ़िक्र रखनेवाले और भले स्वभाव के लोग इस दावत की तरफ़ तवज्जोह देंगे और उनके ज़रिया यह दावत उन देशों में फैलेगी। इसलिए इस तरफ़ ख़ास तौर पर ध्यान देना चाहिए। फिर अंग्रेज़ी ज़बान की जो अहमियत इस वक़्त सभ्य (Cultured) दुनिया में हासिल है उससे भी इनकार नहीं किया जा सकता, इसलिए अंग्रेज़ी तर्जुमों की जल्द से जल्द छपाई का इन्तिज़ाम किया जाए।

अमीरे जमाअत : हम पहले ही इस काम को अपनी ताक़त और वसाइल की हद तक कर रहे हैं और हमारी कोशिश है कि इस काम को ज़्यादा से ज़्यादा तेज़ किया जाए, लेकिन न तो हमारे पास कारकुन बहुत ज़्यादा हैं, न तर्जुमा करनेवाले मिल रहे हैं और न काग़ज़ ही ज़रूरत के मुताबिक़ मिल रहा है। फ़ारसी में अब तक एक ही साहब काम करने के लिए मिले हैं और वे भी तरह-तरह की मुश्किलों में घिरे हुए हैं। अरबी का काम भी सही क़िस्म के कारकुनों की कमी की वजह से बहुत धीरे हो रहा है। अंग्रेज़ी में लगातार कोशिश के बाद भी अभी तक हमें कोई ऐसा आदमी नहीं मिला जो इस काम में पूरा वक़्त और मेहनत ख़र्च करे और उसको ज़रूरत के मुताबिक़ कर भी सकता हो, वरना हम इस ज़रूरत से न अनजान हैं और न बेख़बर।

तजवीज़ 6: इलाहाबाद के इजतिमा में अरकान की सलाहियतों के लिहाज़ से जो हल्क़ाबन्दी की गई थी उन हल्क़ों के काम की ख़बर अरकान को वक़्त पर मिलती रहनी चाहिए, जैसे—उनकी तीन महीने की रिपोर्ट 'कौसर' में छाप दी जाए।

अमीरे जमाअत : अभी तक इन हल्क़ों में कोई तसल्लीबख़्श काम नहीं हुआ है। जब इनमें कुछ काम होने लगेगा तो फिर इस तजवीज़ पर अमल किया जा सकेगा।

तजवीज़ 7 : अंग्रेज़ी पढ़े-लिखे लोगों और ग़ैर-मुस्लिमों में तब्लीग़ करने के लिए अंग्रेज़ी ज़बान में एक पन्द्रह-रोज़ा (Fortnightly) या हफ़तेवार (Weekly) अख़बार या रिसाला (Magazine) जमाअत की तरफ़ से जारी किया जाए।

अमीरे जमाअत : इसकी ज़रूरत हम ख़ुद महसूस कर रहे हैं, लेकिन मुनासिब आदमियों की कमी रुकावट है। जो लोग इस बारे में हमारी मदद कर सकते हैं, वे हमारा हाथ बटाएँ।

तजवीज़ 8 : पिछले साल इलाहाबाद के इजतिमा में एक तजवीज़ पेश की गई थी कि मुख़्तलिफ़ (विभिन्न) जमाअतों के सहमाही (Quarterly) इजतिमाआत की कारवाइयाँ छापने और दूसरे जमाअती कामों और प्रोग्रामों के बारे में ज़रूरी जानकारी देने के लिए आसान उर्दू ज़बान में एक पन्द्रह-रोज़ा (Fortnighly) या हफ़तेवार (Weekly) अख़बार या रिसाला (Magazine)

जमाअत की तरफ़ से जारी किया जाए और यह तजवीज़ मंज़ूर भी की गई थी। मालूम नहीं कि किन रुकावटों की वजह से यह तजवीज़ अब तक अमल में नहीं आ सकी।

अमीरे जमाअत : जिन चीज़ों को छापना ज़रूरी और फ़ायदेमन्द है वे 'कौसर' में छपती रहती हैं, हम पब्लिसिटी का चस्का लगाना नहीं चाहते। जिसके लिए हम काम कर रहे हैं वह सब कुछ जानता है। हम सिर्फ़ वही चीज़ें छापते हैं जो दावत को फैलाने और तब्लीग़ के लिए ज़रूरी हों। यह ज़रूरत 'कौसर' पूरी कर रहा है। इसलिए, सिर्फ़ इस मक़सद के लिए तो किसी अलग अख़बार के जारी करने की ज़रूरत नहीं, अलबत्ता अगर जमाअत की दावत को तेज़ करने के लिए ज़रूरत महसूस हुई तो एक हफ़्तेवार (साप्ताहिक) पर्चा जारी कर दिया जाएगा।

दक्षिणी भारत की ज़बानों में प्रकाशन का इन्तिज़ाम

तजवीज़ों के बाद दक्षिणी भारत की बड़ी ज़बानों (तामिल, तलंगी, मराठी, कन्नड़ और मलयालम) में दारुल इशाअत (प्रकाशन विभाग) क़ायम करने के मसले पर बहस हुई। अमीरे जमाअत ने दक्षिणी भारत के मेम्बरों को बताया कि अब हालात ऐसे पैदा हो रहे हैं जिनकी वजह से दक्षिणी भारत में और हिन्दू अक्सरियत (Majority) के दूसरे इलाक़ों में उर्दू ज़बान की मदद से दावत का काम करना मुश्किल से मुश्किल होता चला जाएगा। ग़ैर-मुस्लिमों में तो उर्दू के ज़रिये से इस दावत का फैलना पहले ही मुश्किल था, मगर अब धीरे-धीरे ख़ुद मुसलमानों में भी यह मुश्किल होगा, इसलिए कि आनेवाले दिनों में तालीम का ज़रिया हर इलाक़े की अपनी ज़बान होगी और वही सरकारी ज़बान भी क़रार पाएगी। उर्दू का चलन कम से कमतर होता चला जाएगा। अगर इन हालत के पैदा होने से पहले-पहले मक़ामी (क्षेत्रीय) ज़बानों में इस्लामी लिटरेचर बड़ी तादाद में मुहैया न कर दिया गया तो आगे ख़ुद मुसलमान नस्लों को भी इस्लाम से परिचित कराने का कोई ज़रिया न रहेगा। इसलिए ज़रूरी है कि हम उन ज़बानों (भाषाओं) में इस्लामी लिटरेचर तब्दील करने का जल्द से जल्द इन्तिज़ाम करें।

मलयालम दारुल इशाअत (प्रकाशन विभाग) तो हम क़ायम कर चुके हैं और इसमें कुछ काम भी शुरू हो गया है। लेकिन दक्षिणी भारत की बाक़ी चार

ज़बानों (भाषाओं) में अभी तक कोई इन्तिज़ाम नहीं हो सका। अब इस इजतिमा में हमें इनके मुताल्लिक़ कुछ सोचना है।

तमिल

तमिल दारुल इशाअत क़ायम करने के लिए हम बहुत दिनों से कोशिश कर रहे हैं लेकिन अब तक इस बारे में कामयाबी नहीं हुई। इस सिलसिले के सारे हालात को सामने रखकर बहुत लम्बी बहस और बात-चीत हुई और आख़िर में अमीरे जमाअत ने कहा कि मौलवी शैख़ अब्दुल्लाह साहब वलतना कप्पम, तामिल दारुल इशाअत के मैनेजर की हैसियत से काम करें। जनाब मुहीउद्दीन अब्दुल क़ादिर जीलानी साहब कयापटनम तर्जुमे (अनुवाद) का काम करें। बाद में जब अब्दुल समद साहब नदवी नदवा से फ़ारिग़ होकर आ जाएँ तो उनसे भी काम लिया जाए। इसके अलावा दो-तीन आदमियों की कमेटी (Committee) इस काम के लिए बनाई जाए जो मक्तबे के अलग-अलग कामों में ज़रूरी मदद और मशविरे दें। आप लोगों (सूबा मद्रास के अरकान) को दो महीने की मुहलत दी जाती है। इस बीच एक तरफ़ यह मालूम किया जाए कि मक़ामी तौर पर कितनी मदद और ज़रिये मुहैया किए जा सकते हैं, और दूसरी तरफ़ मौलवी अब्दुल जब्बार शरीफ़ साहब शहर मद्रास या उसके आस-पास में एक ऐसा मकान तलाश करें जो तमिल दारुल इशाअत के कारकुनों और सूबा मद्रास के क़ैय्यिम की रिहाइश और दफ़्तरों के लिए काफ़ी और मुनासिब हो। फिर इन दोनों कामों को एक जगह जमा कर दिया जाए ताकि मौलवी शैख़ अब्दुल्लाह साहब और दारुल इशाअत के दूसरे कारकुन तंज़ीमी कामों में हल्क़ा के क़ैय्यिम का हाथ बटाएँ और हलक़ा के क़ैय्यिम दारुल इशाअत के काम की निगरानी और मदद कर सकें।

तलंगी और मराठी

इन दोनों भाषाओं में अनुवाद कराने और दारुल इशाअत (प्रकाशन विभाग) क़ायम करने के लिए हैदराबाद (दकन) की जमाअत ने अपनी ख़िदमतें पेश कीं और कहा कि वह इसका सारा इन्तिज़ाम अपने ज़िम्मे लेने को तैयार हैं। हैदराबाद में जमाअत का जो इदारा (Department) दारुल इशाअत निशातुस-सानिया के नाम से क़ायम है वह अपने सरमाये से इस काम को करेगा और अनुवादकों का इन्तिज़ाम भी इनशा अल्लाह कर लिया जाएगा। इस दारुल

इशाअत की स्कीम (Scheme) पूरी करने के लिए अमीरे जमाअत ने हैदराबाद की जमाअत को दो महीने की मुहलत दी।

कन्नड़

इसके मुताल्लिक़ अहमद नूरी साहब मंगलोरी जमाअत के हमदर्द और इंचार्ज कन्नड़ दारुल इशाअत ने बताया कि 'सरवरे आलम' का तर्जुमा वह छाप चुके हैं, 'बुनियादी अक़ीदा' इस वक़्त छप रहा (Under Print) है, और भी कुछ पम्फ़लेट छपाई के लिए तैयार हैं, कारकुन भी कुछ मौजूद हैं लेकिन मुश्किल काग़ज़ और पैसों की कमी की वजह से पेश आ रही है। इस बारे में मैसूर की जमाअत ने मदद और सहयोग का वादा किया और अमीरे जमाअत ने कुछ ज़रूरी हिदायतें दीं।

इसपर इस इजलास का प्रोग्राम ख़त्म हुआ। बारह बज चुके थे इसलिए यह इजलास ख़त्म हुआ।

चौथा इजलास

दिन सनीचर, 26 अप्रैल 1947 ई०

यह इजलास ख़ास था और अमीरे जमाअत की आख़िरी तक़रीर और हिदायतों के लिए ख़ास किया गया था। प्रोग्राम के मुताबिक़ अमीरे जमाअत की क़यामगाह पर ठीक ढाई बजे (2:30) शुरू हुआ और इस इजलास में अमीरे जमाअत ने नीचे लिखी तक़रीर की—

अमीरे जमाअत की इख़्तितामी तक़रीर और हिदायतें

अलहम्दु-लिल्लाहिल अलीयिल अज़ीम, वस्सलातु वस्सलामु अला रसूलिहिल करीम।

साथियो और दोस्तो!

इस वक़्त हम हिन्दुस्तान की तारीख़ (इतिहास) के एक बहुत नाज़ुक और फ़ैसलाकुन मरहले से गुज़र रहे हैं और यह मरहला जिस तरह हिन्दुस्तान के लोगों की क़िस्मत के लिए फ़ैसलाकुन है, उसी तरह हमारी इस तहरीक (Movement) के लिए भी फ़ैसलाकुन है। इसलिए यह बहुत ही ज़रूरी है कि इस मौक़े पर हम पूरी होशमन्दी के साथ अपने इस मक़सद को जिसके लिए हम काम

करना चाहते हैं, और उन हालात को जिसमें हमें काम करना है, और उस रुख़ (दिशा) को जिसकी तरफ़ ये हालात जा रहे हैं और जिसमें से हमें अपना रास्ता निकालना होगा, अच्छी तरह समझ लें और हमारे हर कारकुन बड़ी सूझ-बूझ के साथ यह जान लें कि आज के और आनेवाले हालात में उनको किस हिकमते अमली (Policy) पर काम करना है।

हमारी इस तहरीक (Movement) का मक़सद, जैसाकि आप सब जानते हैं, साफ़ और खुले लफ़्ज़ों में यह है कि हम ज़िन्दगी के इस सही तरीक़े को जिसका नाम इस्लाम है इन्फ़िरादी (व्यक्तिगत) और इजतिमाई (सामूहिक) तौर पर अमलन क़ायम करें, अपनी कथनी और करनी से इसका ठीक-ठीक मुज़ाहिरा (प्रदर्शन) करें, दुनिया को इस बात पर मुत्मइन करने की कोशिश करें कि इस ज़िन्दगी के तरीक़े में उसके लिए कामयाबी और ख़ुश-क़िस्मती है, और आज की ग़लत व्यवस्थाओं की जगह वे सही व्यवस्था क़ायम करने की कोशिश करें जो सरासर इसी ज़िन्दगी के तरीक़े पर मबनी (आधारित) हो। इस मक़सद के लिए हालाँकि हमें काम तो सारी दुनिया और सारे इनसानों में करना है, लेकिन फ़ितरी तौर पर हमारे काम की जगह वही सरज़मीन है जहाँ हम पैदा हुए हैं, जहाँ की ज़बान हमारी ज़बान है, जहाँ की रस्म और रिवाज से हम परिचित हैं, जहाँ की नफ़सियात से हमें जानकारी है और जहाँ की मुआशरत (समाजिकता) से हमारा पैदाइशी रिश्ता है। ख़ुद पैग़म्बरों के लिए भी अल्लाह तआला ने उनके अपने वतन ही को अमल की जगह और दावत का मक़ाम क़रार दिया था, हालाँकि उनका पैग़ाम सारी दुनिया के लिए था, किसी पैग़म्बर के लिए जाइज़ न था कि अपने काम करने के इस फितरी हल्क़े को छोड़कर कहीं और चला जाए जब तक कि उसके वतनवाले उसे निकाल न दें या वह ख़ुद दावत और तब्लीग़ में बहुत ही कोशिश करने के बाद उनसे मायूस न हो जाए। इसलिए हमारी इस जमाअत के अमल का फ़ितरी दायरा भी यही सरज़मीन है जिसे ख़ुदा ने हमारी रिहाइश (निवास) के लिए चुना है—पूरी जमाअत का अमल का दायरा पूरा देश, हर इलाक़े के अरकान (Members) का दायरा उनका अपना इलाक़ा और हर शहर, क़स्बे या गाँव के अरकान का दायरा उनका अपना वतन—हममें से हर आदमी का यह फ़र्ज़ है कि पूरी मज़बूती के साथ अपनी जगह जमकर इस्लाह (सुधार) की दावत और इंक़लाबी कोशिश में लगा रहे और अपनी जगह से बिल्कुल न हटे, जब तक कि उसका रहना वहाँ

बिल्कुल ग़ैर-मुमकिन न हो जाए या फिर वहाँ हक़ की दावत के फैलने की कोई उम्मीद बाक़ी न रहे। आनेवाले हालात में आप बहुत कुछ हिजरत और महाजरात की आवाज़ें सुनेंगे और मुमकिन नहीं कि आम रौ देखकर या ख़याली अन्देशों से सहमकर आपमें से बहुतों के पाँव उखड़ने लगें, लेकिन आप जिस मिशन को उठाए हुए हैं उसकी माँग यह है कि आपमें से जो शख़्स जहाँ है वहीं डट जाए और अपनी दावत को अपने ही इलाक़े की ज़िन्दगी पर ग़ालिब (प्रभावी) करने की कोशिश करे। आपका हाल जहाज़ के उस बहादुर कप्तान का-सा होना चाहिए जो आख़री वक़्त तक अपने जहाज़ को बचाने की कोशिश करता रहता है और डूबते हुए जहाज़ को छोड़नेवालों में सबसे आख़िरी आदमी वही होता है। आप जिस मक़सद पर ईमान लाए हैं उसका तक़ाज़ा है कि जिस इलाक़े में आप रहते हैं वहीं के निज़ामे-ज़िन्दगी (जीवन-व्यवस्था) को बदलने और सीधे रास्ते पर लाने की कोशिश करें। उस इलाक़े (क्षेत्र) पर आपका और आपपर उस इलाक़े का हक़ है, और वह हक़ (अधिकार) इसी तरह अदा हो सकता है कि आप उसकी इजतिमाई ज़िन्दगी (सामूहिक जीवन) में जो ख़राबियाँ पाई जाती हैं उन्हें दूर करने में अपना पूरा ज़ोर लगाएँ और जिस हिदायत से आप नवाज़े गए हैं उसका फ़ायदा सबसे पहले उसे पहुँचाएँ।

हिन्दुस्तान में इस वक़्त जो हालात सामने हैं वह ज़ाहिर में हमारी दावत के लिहाज़ से बहुत ही मायूस करनेवाले हैं, और मैं देख रहा हूँ कि आप सब लोगों पर उनका दिल को तोड़नेवाला असर पड़ रहा है। देश की कई क़ौमें ख़ुदग़र्ज़ी में बुरी तरह गिरफ़्तार हैं और क़ौमपरस्ती का जुनून बढ़ते-बढ़ते इस हद तक पहुँच गया है कि उनसे वे हरकतें हो रही हैं जो अगर जानवरों की तरफ़ से भी हों जाएँ तो वे अपनी तौहीन समझें। क़ौमी कशमकश ने जंग का और जंग ने वहशत और हैवानियत का रूप अपना लिया है। पहले तो बात यहीं तक थी कि हर क़ौम एक-दूसरे से बढ़कर अपने दावे और दावे के जवाब पेश कर रही थी और उसपर कड़वी नापसन्दीदा बातों का सिलसिला चल रहा था। मगर अब नौबत यह आ गई है कि मुख़्तलिफ़ क़ौमें एक-दूसरे का नाम और निशान तक मिटा देने पर तत्पर हैं। उन्होंने अपनी रहनुमाई का काम ऐसे-ऐसे लीडरों और पत्रकारों के सुपुर्द कर दिया है जो उन्हें हर दिन ख़ुदग़र्ज़ी से भरी क़ौमपरस्ती की शराब, नफ़रत और दुश्मनी का ज़हर मिलाकर पिलाते हैं और उनकी हद से बढ़ी हुई क़ौमी ख़ाहिशों की वकालत में इनसाफ़ और अख़लाक़ की सारी हदों को फाँदते

चले जाते हैं। अख़लाक़ी तसव्वुरात (विचारों) के लिए उनके दिलों में अब हक़ीक़त में कोई गुंजाइश नहीं रही है। सारे अख़लाक़ी मेआर क़ौमपरस्ती के ताबे (अधीन) हो गए हैं। जो कुछ क़ौमी फ़ायदा और क़ौमी ख़ाहिशों के मुताबिक़ है वही सबसे बड़ा अख़लाक़ है, चाहे वह झूठ हो, बेईमानी हो, अत्याचार हो, संगदिली और बेरहमी हो या और कोई ऐसी चीज़ हो जो दुनिया की मशहूर अख़लाक़ियात (Ethics) में हमेशा से बुराई समझी जाती रही है, इससे हटकर सच्चाई, इनसाफ़, ईमानदारी, रहम, शराफ़त, इनसानियत सब गुनाह ठहराए जा चुके हैं अगर वे क़ौमी फ़ायदे के ख़िलाफ़ पड़ते हों या क़ौमी ख़ाहिशों के हासिल करने में रुकावट हों।

इन हालात में किसी ऐसी दावत के लिए काम करना बहुत मुश्किल है जो क़ौमियतों को नज़रअन्दाज़ करके इनसानियत को ख़िताब (सम्बोधित) करती हो, जो क़ौमी ख़ाहिशों को छोड़कर ख़ालिस हक़ (सत्य) के उसूल की तरफ़ बुलाती हो, और क़ौमी ख़ुदग़र्ज़ियों को तोड़कर आलमगीर इनसाफ़ क़ायम करना चाहती हो। क़ौमियत के जुनून के इस दौर में ऐसी दावत की आवाज़ सुनने के लिए न हिन्दू तैयार हैं न मुसलमान। मुसलमान कहते हैं कि तुम हमारी क़ौम के लोग हो, तुम्हारा फ़र्ज़ था कि क़ौम के झंडे के नीचे खड़े होकर क़ौमी लड़ाई लड़ते। यह तुमने अलग जत्था बनाकर दीन, अख़लाक़ और हक़ के उसूल की रट क्या लागाना शुरु कर दी है। तुम्हारी इस बेवक़्त की आवाज़ से क़ौम की ताक़त बिखरती है और क़ौमी मफ़ाद (हितों) को नुक़्सान पहुँचता है। इसलिए हम तुम्हें क़ौम का दुश्मन समझते हैं चाहे तुम्हारी दावत इसी इस्लाम की तरफ़ हो जिसका नाम लेकर हम यह क़ौमी लड़ाई लड़ रहे हैं। दूसरी तरफ़ हिन्दुओं के पास जाइए तो वे ख़्याल करते हैं कि इन लोगों की बात दिल को तो ज़रूर लगती है मगर इस छाछ को ज़रा फूँककर पीना चाहिए, क्योंकि ये हैं तो उसी क़ौम के लोग जिससे हमारी लड़ाई है, क्या ख़बर कि यह उसूली दावत भी मुसलमान क़ौमियत ही को बढ़ावा देने के लिए एक दूसरी चाल हो।

लेकिन ये हालात चाहे हौसला पस्त करनेवाले और सख़्त हों, बहरहाल मुस्तक़िल नहीं हैं, बल्कि जल्द ही बदल जानेवाले हैं। इस वक़्त आपके लिए काम करने का सही तरीक़ा यह है कि सब्र और अच्छे अख़लाक़ से अपना काम किए जाएँ, उलझनेवालों के साथ न उलझें, नादान लोगों की मुख़ालिफ़तों पर जोश में न आएँ, जिन लोगों में दोस्त और दुश्मन तक की पहचान बाक़ी नहीं

रही है और जो लोग जुनून के जोश में अब ख़ुद अपने भले और बुरे तक का होश नहीं रखते वे अगर जहालत और जाहिलीयत पर उतर आएँ तो आप शरीफ़ आदमियों की तरह उनके मुक़ाबले से हट जाएँ और उनकी ज़्यादतियों को ख़ामोशी से सह लें। इसके साथ आपको चाहिए कि ज़्यादा से ज़्यादा मुनासिब तरीक़े से अपनी दावत मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम सोसायटी के उन सब लोगों तक पहुँचाएँ जो मुनासिब बात को सुनने और उसपर खुले दिल से ग़ौर करने के लिए तैयार हों। इस तरीक़े पर अगर आपने अमल किया तो एक तरफ़ आपकी अख़लाक़ी बरतरी का सिक्का बैठ जाएगा और दूसरी तरफ़ वह ज़ेहनी माहौल एक हद तक तैयार हो जाएगा जो आनेवाले हालात में असरदार (प्रभावकारी) काम के लिए ज़रूरी है।

जिस तब्दीली की तरफ़ मैं इशारा कर रहा हूँ वह यह है कि जल्द ही देश तक़सीम (विभाजित) हो जाएगा, हिन्दुओं को उनकी अकसरियत के इलाक़े और मुसलमानों को उनकी अकसरियत के इलाक़े अलग-अलग मिल जाएँगे। दोनों अपने-अपने इलाक़ों में पूरी तरह ख़ुदमुख़्तार (Soverign) होंगे और अपनी मरज़ी के मुताबिक़ अपने राज्य (State) का निज़ाम चलाएँगे। यह बड़ी तब्दीली उस नक़्शे को बिल्कुल बदल देगी जिसपर इस वक़्त तक हालात चलते रहे हैं। इसी वजह से हिन्दुओं और मुसलमानों और दूसरी जातियों के मसाइल और उनकी क़िस्में बिल्कुल बदल जाएँगी। उनको बिल्कुल एक दूसरी ही सूरतेहाल का मामला पेश आएगा। जिस ढंग पर इस वक़्त तक उन्होंने अपने क़ौमी रवैये और अपने आन्दोलनों और जमाअती निज़ामों (व्यवस्थाओं) को क़ायम रखा है, वह बड़ी हद तक बेमानी और नाकारह हो जाएगा। बदलते हुए हालात में उन सबको सोचना पड़ेगा कि जो कुछ अब तक वे करते रहे हैं उसने उन्हें कहाँ ला खड़ा किया है और अब इस नये ज़िन्दगी के दौर में उनके लिए अमल का तरीक़ा क्या है। आज के बने और जमे हुए अक़ीदे उस वक़्त बेमानी हो जाएँगे। आज के ख़यालात और तसव्वुरात के लिए उस वक़्त कोई जगह न होगी। आज के नारे उस वक़्त खोटे सिक्के होंगे जिन्हें कोई मुफ़्त में भी न पूछेगा। जिन बुनियादों पर आज की क़ौमी तहरीकें और जमाअतें क़ायम हैं वह अपने आप ढह जाएँगी। इसलिए सिर्फ़ यही नहीं कि आज की लीडरी अपनी क़ुद्रती (Natural) मौत मर जाएगी, बल्कि नामुमकिन नहीं कि जो लोग आज उन्हें अपना मुक्तिदाता समझ रहे हैं, कल वही उनको अपनी मुसीबतों और परेशानियों की

वजह समझने लगें।

आनेवाले इस दौर में हिन्दू-हिन्दुस्तान और मुस्लिम-हिन्दुस्तान के हालात बिल्कुल एक-दूसरे से अलग होंगे, और चूँकि हमें दोनों इलाक़ों में काम करना होगा, इसलिए हमें भी अपनी तहरीक (Movement) को दो अलग-अलग तरीक़ों पर चलाना पड़ेगा, बल्कि हो सकता है कि जमाअत के निज़ाम (System) को भी बड़ी हद तक दो हिस्सों में बाँट देना पड़े, ताकि हर हिस्सा अपने-अपने इलाक़े के हालात के मुताबिक़ मुनासिब पॉलिसी (Policy) पर ख़ुद चल सके और इसके लिए ज़रूरी इन्तिज़ामात ख़ुद कर सके। जहाँ तक मुस्लिम इलाक़े का ताल्लुक़ है उसपर तो मैं यहाँ कोई बहस नहीं करूँगा, क्योंकि इसके लिए बेहतर जगह उत्तर-पश्चिमी हल्क़े का इजतिमा है जो जल्द ही होनेवाला है। आपके सामने मुझे सिर्फ़ हिन्दू-हिन्दुस्तान के भविष्य पर बात करनी है कि यहाँ मुसलमानों और हिन्दुओं को आनेवाले किन हालात से सामना पेश आनेवाला है और उन हालात में आपको किस तरह काम करना होगा।

सबसे पहले मुसलमानों के मामले को लीजिए। हिन्दू अकसरियत (Majority) के इलाक़े में मुसलमान जल्द ही यह महसूस कर लेंगे कि जिस क़ौम-परस्ती पर उन्होंने अपने इजतिमाई (सामूहिक) रवैये की बुनियाद रखी थी वह उन्हें मौत के वीराने में लाकर छोड़ गई है और उनकी क़ौमी जंग, जिसे वे बड़े जोशो-ख़रोश से बग़ैर सोचे समझे लड़ रहे थे, एक ऐसे नतीजे पर ख़त्म हुई है जो उनके लिए तबाही के सिवाय अपने अन्दर कुछ नहीं रखता। जिन जमहूरी (Democratic) उसूलों पर एक मुद्दत से हिन्दुस्तान का राजनैतिक विकास (Political Evolution) हो रहा था और जिन्हें ख़ुद मुसलमानों ने भी क़ौमी हैसियत से स्वीकार करके अपने मुतालबे की लिस्ट तैयार की थी, उन्हें देखकर एक ही नज़र में मालूम किया जा सकता था कि उन उसूलों पर बने हुए निज़ामे-हुकूमत में जो कुछ मिलता है अक्सरियत (Majority) को मिलता है, अक़लीयत (Minority) को अगर मिलता भी है तो ख़ैरात के तौर पर हाथ फैलाने की वजह से, न कि हक़ के तौर पर हरीफ़ (प्रतिद्वन्द्वी) और मुक़ाबले में आए हुए और शरीक की हैसियत से। यह एक खुली हक़ीक़त थी, मगर मुसलमानों ने इसकी तरफ़ से जानते-बूझते आँखें बन्द कीं और इस दोहरी बेवक़ूफ़ी को दिखाया कि एक तरफ़ तो हुकूमत के निज़ाम के लिए पश्चिम के उन्हीं जमहूरी (Democratic) उसूलों पर राज़ी हो गए और दूसरी तरफ़ ख़ुद अपनी तरफ़ से देश के

बँटवारे का यह उसूल पेश किया कि जहाँ हम अकसरियत में हों वहाँ हम हाकिम (शासक) और तुम महकूम (शासित) हो, और जहाँ तुम अकसरियत में हो वहाँ तुम हाकिम और हम महकूम हैं। कई साल की तल्ख़ और ख़ूँरेज़ी कशमकश के बाद अब यह दोहरी बेवक़ूफ़ी कामयाबी के मरहले में पहुँच गई है और जिस चीज़ के लिए अक़लीयत (Minority) के मुसलमान ख़ुद लड़ रहे थे वह हासिल हुआ चाहती है, यानी अकसरियत (Majority) की आज़ाद और ख़ुदमुख़्तार (Soverign) हुकूमत जिसमें वे एक क़ौम क़ी हैसियत से महकूम होंगे और महकूम (प्राधीन) भी उस अकसरियत के जिससे वे क़ौमी जंग लड़ रहे हैं।

जो स्टेट (State) अब मुस्लिम अक़लीयत (अल्पसंख्यक) के इलाक़ों में बन रहा है वह हिन्दुओं का क़ौमी स्टेट होगा। क़ौमियत और जमहूरियत (लोकतन्त्र) के जिन नज़रियों को मुसलमान और हिन्दू एक जैसा स्वीकार करके अपनी क़ौमी तहरीकों की बुनियाद बना चुके हैं, उनकी बुनियाद पर कोई क़ौमी स्टेट अपने अन्दर किसी दूसरी ऐसी क़ौम के वुजूद को गवारा नहीं किया करता जो हुक्मराँ क़ौमियत से अलग अपनी मुस्तक़िल क़ौमियत का दावेदार हो और फिर उस क़ौमियत के दावे के साथ अपने ख़ास क़ौमी मुतालबे भी रखती हो। यह चीज़ सिर्फ़ उसी वक़्त तक चल सकती है जब तक देश अमली तौर पर एक बाहरी क़ौम का था और हिन्दू और मुसलमान दोनों उसके अधीन थे। सिर्फ़ उसी वक़्त यह मुमकिन था कि अल्पसंख्यक भी बहुसंख्यक की तरह अपनी अलग क़ौमियत का दावा करे और कमो-बेश अपने मुस्तक़िल हक़ (Fundamental Rights) मनवा ले। मगर जब जमहूरी (लोकतांत्रिक) उसूल पर देशवालों की आज़ाद हुकूमत बन जाएगी तो हिन्दू-हिन्दुस्तान अक्सरियत (बहुसंख्यक) का क़ौमी स्टेट बनकर रहेगा और इसमें किसी अल्पसंख्यक की कोई अलग से क़ौमियत और ख़ास क़ौमी मुतालबों के लिए गुंजाइश न होगी। क़ौमी स्टेट ऐसी किसी क़ौमियत को स्वीकार करके उसके मुतालबे कभी पूरे नहीं किया करता, बल्कि वह पहले तो यह कोशिश करता है कि उसे हल करके अपने अन्दर हज़म कर ले, फिर वह अगर इतनी सख़्त निकलती है कि हज़म न हो सके तो उसे दबा देना चाहता है कि अलग से काई क़ौमी वुजूद और उसकी बिना पर मुस्तक़िल क़ौमी मुतालबों की आवाज़ बुलन्द होने ही न पाए, और आख़िरकार अगर वह क़ौमियत दबाव के नीचे भी चीख़े ही चली जाए तो फिर क़ौमी स्टेट उसे बाक़ायदा ख़त्म और बरबाद करने की कोशिश शुरू कर देता

है। यही कुछ हिन्दुओं के क़ौमी स्टेट में मुस्लिम अक़लीयत (अल्पसंख्यक) को पेश आनेवाला है। उसके सामने भी अमली तौर पर यही तीन रास्ते पेश किए जाएँगे—

☆ या तो अपनी अलग क़ौमियत के दावे और उसकी बिना पर मुस्तक़िल हक़ के मुतालबे से अलग होकर स्टेट की क़ौमियत में विलीन हो जाए।

☆ या, अगर वह इसके लिए तैयार न हो तो हर तरह के हक़ से महरूम करके शूद्रों और अछूतों की-सी हालत रखी जाए।

☆ या, उसे जड़ से उखाड़ फेंकने की लगातार कोशिश शुरू कर दी जाए, यहाँ तक कि क़ौमी स्टेट की सीमा में उसका नाम व निशान बाक़ी न रहे।

यह लाज़िमी नतीजा है मग़रिबी ढंग के लोकतांत्रिक व्यवस्था में क़ौमियत की बुनियाद पर अपनी राजनैतिक पॉलिसी की अमारत उठाने का। सूझ-बूझ की आँखें (दिव्य-दृष्टि) इस नतीजे को उसी वक़्त देख सकती थीं जब यह पॉलिसी अपनाई जा रही थी और नतीजा अभी बहुत दूर था। मगर उस वक़्त देखने से इनकार किया गया और दिखाने की कोशिश करनेवालों को दुश्मन समझा गया। अब यह नतीजा बिल्कुल सामने आ गया है और अफ़सोस कि उसे देखना ही नहीं भुगतना भी पड़ेगा।

मुसलमानों की सियासी रहनुमाई (Political Leadership) के लिए जो गिरोह इस वक़्त आगे-आगे हैं उनमें से एक 'नेशनलिस्ट' मुसलमानों का गिरोह है जो आनेवाले दौर में वही पार्ट अदा करेगा जो अंग्रेज़ी दौर में ख़ान बहादुर तबक़ा अदा कर चुका है। यह गिरोह मुसलमानों को दावत देगा कि पहली शक्ल को ख़ुशी से क़बूल कर लें यानी अपनी अलग क़ौमी इनफ़िरादियत (व्यक्तिवाद) के दावे और सिर्फ़ हक़ों के मुतालबों को छोड़कर सीधी तरह स्टेट की क़ौमियत में लीन हो जाएँ। इस गिरोह की बात अब तक तो नहीं चली है मगर मुझे डर है कि आगे बहुत कुछ चलने लगेगी, क्योंकि आगे इन्हीं लोगों की सरकार होगी। इन्हीं की मदद से नौकरियाँ, ठीके और तालीमगाहों (शिक्षा केन्द्रों) के ग्रान्ट (Grant) वग़ैरह मिला करेंगे और यही हुक्मरान और महकूम क़ौम के बीच वास्ता और वसीला बनेंगे। इनकी कोशिशें मुसलमानों की एक बड़ी तादाद को इस हद तक गिरा लाने में कामयाब हो जाएँगी कि वे ख़ुद महाशय और उनकी बीवियाँ और बेटियाँ श्रीमतियाँ बनें और पहनावा, ज़बान और ख़्यालात हर चीज़ में हुक्मरान क़ौम के रंग में इस तरह रंग जाएँ कि—

"ता कस नगोयद बाद अज़ाँ मन दीगरम तू दीगरी।"

"ताकि कोई शख़्स यह न कह सके कि मैं और हूँ और तुम और हो।"

जिस क़ौम की एक बड़ी तादाद इससे पहले मिस्टर और मिस बन चुकी है आख़िर उसके लिए अब यह नई तब्दीली नामुमकिन क्यों होने लगी, ख़ासकर जबकि आनेवाले वक़्त में रोटी, ख़ुशहाली और तरक़्क़ी का दारोमदार इसी पर होगा लेकिन मुझे उम्मीद नहीं कि मुसलमान 'मिन हैसुल क़ौम' (क़ौम की हैसियत से) इस तरह सिपर डाल देने पर राज़ी हो जाएँगे। क़ौमी हैसियत से इनकी कोशिश यही होगी कि इस विलीनता को रोकें।

इस चीज़ को रोकने के लिए वे शुरू में ही उसी गिरोह की तरफ़ रुजूअ करेंगे जो इस वक़्त राजनैतिक मैदान में उनकी रहनुमाई कर रहा है। मगर तजुर्बा बहुत ज़ल्दी मुसलमानों को बता देगा कि अब इस गिरोह की राजनीति पर चलकर वे सीधे तबाही के गढ़े की तरफ़ जाएँगे। बहुसंख्यक की क़ौमी जमहूरी स्टेट में रहकर अगर अल्पसंख्यक क़ौमी जंग लड़ेगी तो हर तरफ़ से पीसी और कुचली जाएगी, ज़िन्दगी के हर शोबे से निकाली जाएगी, हर क़िस्म के हक़ से महरूम (वंचित) की जाएगी, अछूतों से भी बदतर हालत में गिरा दी जाएगी और फिर भी अगर उसकी आवाज़ उठती रही तो उसे इस तरह मिटाया जाएगा कि उसपर न ज़मीन रोएगी न आसमान।

कहा जाता है कि अक़लीयत (अल्पसंख्यक) के मुसलमानों को इस अंजाम से बचाने के लिए तीन ज़रिये हैं :

एक, यह कि पाकिस्तान की रियासत हिन्दुस्तान की रियासत से सौदा करेगी, यानी वह कहेगी कि पाकिस्तान की हिन्दू अल्पसंख्यक से हम वही सुलूक करेंगे जो तुम हिन्दुस्तान की मुसलमान अल्पसंख्यक से करोगे। और इस तरह मुसलमानों को वह संवैधानिक अधिकार (Legal Rights) मिल जाएँगे जो हिन्दू पाकिस्तान में हिन्दुओं के लिए चाहेंगे। लेकिन शुरू में यह तजवीज़ चाहे कैसी ही अच्छी नज़र आए, मुझे यक़ीन है और तजुर्बा बता देगा कि आगे चलकर यह बिल्कुल ही नाकाम होगी। हम साफ़ देख रहे हैं कि हिन्दुस्तान और पाकिस्तान दोनों पश्चिमी तर्ज़े सियासत (Western Political System) की राह पर चले जा रहे हैं। इस राजनीति के ढर्रे के जो नतीजे पश्चिम में निकल चुके हैं वहीं यहाँ निकलकर रहेंगे। अक़लीयत (Minority) की अलग क़ौमियत और क़ौमी हुक़ूक़ (अधिकारों) और मुतालबों को न मुसलमानों का क़ौमी स्टेट

ज़्यादा दिनों तक बरदाश्त कर सकेगा और न हिन्दुओं का क़ौमी स्टेट। ख़ासकर जब ये दोनों अक़लीयतें (Minorities) अपनी-अपनी हमक़ौम विदेशी हुकूमत की तरफ़ मदद का हाथ फैलाएँगी। और अपने देश की हुकूमत के बजाय विदेशी हुकूमत से वफ़ादारी, दिलचस्पी और मुहब्बत की पेंगें बढ़ाएँगी तो उनका वुजूद हिन्दुस्तान और पाकिस्तान दोनों के लिए बरदाश्त के क़ाबिल न रहेगा। शुरू में चाहे कैसे ही इत्मीनान-बख़्श क़ानूनी हिफ़ाज़तें दोनों ने एक-दूसरे की अक़लीयतों (Minorities) को दिए हों, धीरे-धीरे अमली तौर पर उनको ख़त्म कर दिया जाएगा। हर दिन के बरताव में अक़लीयतों को जड़ से उखाड़ फेंकने की पॉलिसी चल पड़ेगी, दोनों हुकूमतें अपनी-अपनी क़ौमी अक़लीयतों के लिए एक-दूसरे पर दबाव डालने की कोशिश करेंगी और आख़िरकार या तो जंग तक नौबत पहुँचेगी — जिसके नतीज़े के बारे में कोई भविष्यवाणी नहीं की जा सकती — या दोनों को इसपर राज़ी होना पड़ेगा कि एक हुकूमत हिन्दुओं के साथ और दूसरी हुकूमत मुसलमानों के साथ जो बरताव चाहे करे।

दूसरा रास्ता हिफ़ाज़त का यह बताया जाता है कि संयुक्त राष्ट्र संघ (United Nations Organisation) से इस मामले में मदद ली जाएगी। लेकिन जो लोग इस निज़ाम (संघ) के मिज़ाज को कुछ भी जानते हैं वे बहुत आसानी से अन्दाज़ा लगा सकते हैं कि हिफ़ाज़त (सुरक्षा) के इस ज़रिये के बल पर कोई दबी हुई क़ौम कितने दिन जी सकती है। सबसे पहले तो संयुक्त राष्ट्र संघ से अपील ऐसे ही मामले में की जा सकती है कि जिसमें कोई बहुत बड़ी और नुमायाँ ज़ालिमाना कार्रवाई की गई हो। रोज़-मर्रा के छोटे-छोटे मामले चाहे मजमूई (सामूहिक) तौर पर मिलकर कितना ही बड़ा ज़ुल्म बन जाएँ, फिर भी इस निज़ाम (संघ) में अपील के क़ाबिल नहीं हो सकते। न उन बज़ाहिर होनेवाली मासूम पॉलीसियों पर वहाँ बहस कराई जा सकती है जो मग़रिबी मेआर के लिहाज़ से बिल्कुल सत्य पर आधारित होती हैं, मगर हमारे दृष्टिकोण से मुसलमानों की दीनी और मिल्ली ज़िन्दगी को बिल्कुल ख़त्म कर देनेवाली हैं। फिर इस संघ (Organisation) ने अब तक तो यह साबित नहीं किया है कि वह बिल्कुल बेलाग इनसाफ़ करने के लिए तैयार है। इसके मेम्बरर्स (Members) सिर्फ़ यही नहीं देखते कि मामला अपने आप में कैसा है और इस सिलसिले में इनसाफ़ की माँग क्या है, बल्कि यह देखते हैं कि शिकायत जिस हुकूमत की की गई है उससे हमारी अपनी हुकूमतों के सम्बन्ध कैसे हैं और क्या उसे बुरा-भला कहना हमारी हुकूमतों की मस्लहत के हित में है या नहीं। इस तरह कौन

कह सकता है कि आनेवाले ज़माने में संयुक्त राष्ट्र संघ (United Nations Organisation) के अन्दर हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की अतिरिक्त स्थिति (Position) क्या होगी और किसकी बात कहाँ ज़्यादा वज़नदार होगी।

तीसरा ज़रिया हिजरत और आबादी के तबादले का किया जा सकता है। हिज़रत का मतलब यह है कि मुसलमान ख़ुद हिन्दुस्तान छोड़-छोड़कर पाकिस्तान में जा बसने शुरू हों, और आबादी के तबादले का मतलब यह है कि दोनों हुकूमतें आपसी प्रस्ताव से एक नज़्म के साथ अपनी-अपनी क़ौम की आबादी को अपने क्षेत्र में शामिल कर लें। इसमें से पहली बात अमल के क़ाबिल है, मगर वह हिन्दुस्तान के मुसलमानों का मस्ला हल न कर सकेगी क्योंकि इस स्थिति में कभी-कभार सिर्फ़ खाते-पीते लोग, बहुत ही परेशान लोग और ख़ानदान या कुछ मनचले क़िस्मत आज़मानेवाले लोग ही अमल कर सकेंगे। मुसलमानों की आम आबादी जहाँ अब बस रही है, वह बस्ती रहेगी और उसका किसी बड़े पैमाने पर ख़ुद हिजरत करना मुमकिन न होगा, सिवाय इसके कि किसी वक़्त ख़ुदा न करे ऐसे हालात पेश आ जाएँ जो बिहार वग़ैरा में पेश आए हैं। रही दूसरी सूरत, तो मुझे उम्मीद नहीं कि आनेवाले पचास (50) साल तक हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की हुकूमतें 4.5 करोड़ मुसलमानों और 2.5 या 3 करोड़ ग़ैर-मुस्लिमों को इधर से उधर और उधर से इधर मुन्तक़िल करने का इन्तिज़ाम कर सकेंगी, चाहे वह दिल से ऐसा करना चाहें, फिर भी अगर कोई इस उम्मीद पर जीना चाहे तो ज़रूर जिए।

यह है उन ज़राये (संसाधनों) की हक़ीक़त जिनकी बिना पर उम्मीद की जा रही है कि क़ौम-परस्ताना सियासत जिस तरह अंग्रेज़ी हुकूमत के दौर में चलती रही है, उसी तरह हिन्दुस्तान की क़ौमी हुकूमत बन जाने के बाद भी चल सकेगी। आज मुसलमान अपनी जहालत और तंगनज़री की वजह से इन सच्चाइयों को समझ नहीं पा रहे हैं, मगर वह वक़्त क़रीब है जब यह सच्चाई ख़ुद अपने आपको उनकी समझ में उतार देंगे और उस वक़्त मजबूरन उनको तीन रास्तों में से एक को चुनना पड़ेगा।

☆ एक, यह कि नेशनलिस्ट (Nationalist) मुसलमानों की पॉलिसी क़बूल करके हिन्दू क़ौमियत में जज़्ब (विलीन) होने पर तैयार हो जाएँ।

☆ दूसरे, यह कि मुस्लिम क़ौम-परस्ती के मौजूदा तरीक़े पर बदस्तूर चलते रहें, यहाँ तक कि मिट जाएँ।

☆ तीसरे, यह कि क़ौम-परस्ती और उसके तौर-तरीक़ों और उसके दावों और मुतालबों से तौबा करके इस्लाम की रहनुमाई क़बूल कर लें जिसका तक़ाज़ा यह है कि मुसलमान अपने क़ौमी मक़ासिद के लिए कोशिश और प्रयत्न करने के बजाय अपनी सारी कोशिशों को सिर्फ़ इस्लाम की उसूली दावत पर केन्द्रित करें और क़ौम की हैसियत से अपने अख़लाक़, आमाल (कर्मों) और इजतिमाई ज़िन्दगी (सामूहिक जीवन) में उसकी गवाही दें जिससे दुनिया यक़ीन कर सके कि सही मानो में यह वह क़ौम है जो अपनी ज़ात के लिए नहीं बल्कि सिर्फ़ दुनिया की इस्लाह (सुधार) के लिए जीनेवाली है और हक़ीक़त में जिन उसूलों को यह पेश कर रही है, वह इनसानी ज़िन्दगी को इनफ़िरादी और इजतिमाई तौर पर बहुत ही ऊँचा, बलंद और बेहतर बना देनेवाले हैं।

यही-आख़री रास्ता मुसलमानों के लिए पहले भी नजात (मुक्ति) का रास्ता था और अब भी इसी में उनके लिए नजात है। मैं कई सालों से उनको इसी तरफ़ बुला रहा हूँ। अगर यह क़ौम-परस्ताना राजनीति का रास्ता अपनाने के बजाय इस रास्ते को अपनाते हैं,और जिस तरह पिछले दस सालों में उन्होंने अपनी पूरी क़ौमी ताक़त को उस रास्ते पर लगाया है उसी तरह कहीं इस रास्ते पर लगाया होता तो आज हिन्दुस्तान की राजनीति का नक़्शा बिल्कुल बदला हुआ होता और...(इस्लाम और मुसलमानों के हित में रौशन) इमकानात उनकी आँखों के सामने होते। लेकिन उस वक़्त मेरी दावत उन्हें दुश्मन की दावत या एक दीवाने दोस्त की दावत महसूस हुई। अब जो चीज़ें घटित हो रही हैं उन्होंने उन्हें घेर कर ऐसी हालत में खींचकर ला खड़ा किया है कि उन्हें मजबूर होकर यह दिखाना पड़ रहा है कि वे मुसलमान हैं। अब उनके लिए ज़िन्दगी की राह सिर्फ़ एक ही रह गई है और वह इस्लाम की असली, हक़ीक़ी और मुख़लिसाना इस्लामी राह है। दूसरे सभी रास्ते ज़िन्दगी की नहीं बल्कि ख़ुदकशी या मौत की सज़ा या तबअी (फ़ितरी) मौत के रास्ते हैं।

यह वक़्त जिसके आने की मैं ख़बर दे रहा हूँ अब बिल्कुल क़रीब आ गया है। जैसे ही हिन्दुस्तान की राजनीति का यह दौर ख़त्म होकर नया दौर शुरू होगा अक़लीयत (Minority) के क्षेत्र में मुसलमानों को अपनी वाक़ई नाउम्मीदी पैदा करनेवाली पोज़ीशन का आम एहसास शुरू हो ज़ाएगा। यह एक बड़ी तहरीक (आन्दोलन) के बरबादी का वक़्त होगा जो तहरीके ख़िलाफ़त (Khilafat Movement) की बरबादी से कई गुना ज़्यादा ख़तरनाक होगा।

ख़िलाफ़त मूवमेंट की नाकामी से मुसलमानों में जो बेहरकती और बिखराव हुआ था वह अगरचे बहुत ही नुक़्सानदेह था मगर घातक न था। अब अगर वह कैफ़ियत (स्थिति) कहीं फिर पैदा होती है तो बिल्कुल ही घातक साबित होगी। अपने इस वक़्त तक के लीडरों से मायूस होकर कोई सही लीडरशिप और कोई उम्मीद की किरण अगर मुसलमानों ने न पाई तो उनपर घबराहट और तवाइफ़ुल मलूकी (Anarchy) छा जाएगी। कोई नेशनलिस्ट मुसलमानों की तरफ़ दौड़ेगा, कोई कम्युनिस्ट गिरोह की तरफ़ लपकेगा, कोई हिजरत की तैयारी करेगा, कोई मायूसी की हालत में हाथ-पाँव तोड़कर बैठ जाएगा और कोई परेशानी और मायूसी की हालत में या सिर्फ़ अहमक़ाना झुंझलाहट की बिना पर, हारी हुई क़ौमी जंग को फिर ताज़ा करके न सिर्फ़ अपने ऊपर बल्कि अपने हज़ारों-लाखों बे-गुनाह भाइयों पर भी तबाही का तूफ़ान उठा लाएगा। इस नाज़ुक वक़्त के लिए अभी से एक ऐसा मुनज़्ज़म (संगठित) गिरोह तैयार रहना चाहिए जो होश में आनेवाले मुसलमानों के सामने ठीक वक़्त पर सही अमल का रास्ता पेश कर सके, उनकी उस ताक़तों को जो बिखराव का शिकार होनेवाली हैं, ग़लत और उलटे-सीधे कामों से बचाकर एक रौशन मक़सद के गिर्द समेट सके, और उनको मायूसी के बाद हक़ीक़ी कामयाबियों की ख़ुशख़बरी दे सकें। मेरी दुआ है कि आप ही का यह गिरोह इस ख़िदमत को अंजाम देने की तौफ़ीक़ पाए और उस वक़्त के आने से पहले इस हद तक ताक़तवर, मुनज़्ज़म (सुगठित) और तैयार हो जाए कि यह ख़िदमत अंजाम दे सके।

अब मैं यह चाहता हूँ कि आप ज़रा हिन्दुस्तान की अक्सरियत के मुस्तक़बिल (भविष्य) पर भी एक नज़र डालें। मैं आप लोगों से हमेशा कहता रहता हूँ कि इस्लामी इंक़िलाब बरपा करने का जितना इमकान मुस्लिम अक्सरियत के इलाक़ों में है क़रीब-क़रीब उतना ही इमकान ग़ैर-मुस्लिम अक्सरयित (Majoritiy) के इलाक़ों में भी है। मेरी इस बात को बहुत-से लोग एक ख़्यालों में डूबे हुए आदमी का ख़ाब समझते हैं, और कुछ लोग यह ख़्याल करते हैं कि शायद यह तसव्वुफ़ का कोई नुक्ता है जो हमारी समझ से बाहर है। इसलिए कि उनको सही तौर पर यह नज़र आ रहा है कि ग़ैर-मुस्लिम अक्सरियत मुसलमानों के मुक़ाबले में एक मज़बूत, मुत्तहिद और मुनज़्ज़म (सुगठित) ब्लॉक बनी हुई है, इसके अन्दर कहीं कोई ख़ला या दरार नहीं है जहाँ से इसके टूटने का डर हो, उसपर क़ौमपरस्ती का नशा पूरी तरह छाया हुआ है, हिन्दू इण्डिया का पूरा

निज़ामे हुकूमत (शासन-व्यवस्था) बड़े ही मज़बूत और स्थिर तरीक़े से उसके हाथ में आ चुका है और जो थोड़ी-सी कसर बाक़ी है वह जल्द ही पूरी हुई जाती है। इस हालत को देखते हुए उनकी समझ में नहीं आता कि आख़िर यहाँ इस्लामी इंक़िलाब का रास्ता किधर से निकल आएगा। मगर मैं यह कहता हूँ कि यह मज़बूत ब्लॉक जो आपके सामने नज़र आ रहा है और देखने में ठोस भी महसूस होता है उसकी बनावट को ज़रा समझने की कोशिश कीजिए कि यह किन चीज़ों से तैयार हुआ है और उनका ताल्लुक़ किस प्रकार का है।

हिन्दुस्तान के उन करोड़ों ग़ैर-मुस्लिमों को जिस चीज़ ने एक और संगठित किया है, वह कोई मुस्तक़िल नज़रिय-ए-हयात (स्थाई जीवन-पद्धति), ज़िन्दगी का कोई मज़बूत फ़ल्सफ़ा और कोई शऊरी नस्बुल ऐन नहीं है कि उसका अपनी जगह से हटना और बदल जाना मुश्किल हो, बल्कि वह सिर्फ़ एक क़ौमपरस्ती का जज़्बा है जो एक तरफ़ अजनबी सत्ता के ख़िलाफ़ और दूसरी तरफ़ मुस्लिम क़ौमपरस्ती के मुक़ाबले में भड़काया गया था। क़ौमपरस्ती का ख़ासा फ़ितरी (स्वाभाविक गुण) यह होता है कि वह सिर्फ़ किसी विरोधी, बाधक और मुख़ालिफ़ ताक़त ही के मुक़ाबले में पैदा हुआ करता है। इसमें शिद्दत मुक़ाबले और टकराव से ही भड़कती है और जबतक वह ताक़त मुक़ाबले में हो उसी वक़्त तक बाक़ी रहती है। जैसे ही मुक़ाबला ख़त्म हुआ और क़ौमपरस्ती का मक़सद हासिल हुआ, यह जज़्बा आप से आप दब जाता है, अन्दरूनी ज़िन्दगी के दूसरे अहम मसले लोगों के ध्यान को अपनी तरफ़ खींच लेते हैं और वे अनासिर (मूल तत्व) जो सिर्फ़ क़ौम-परस्ती के जज़्बे से आपस में मिले हुए थे, बिखरने लगते हैं। हिन्दू क़ौम-परस्ती का मामला भी कुछ ऐसा ही है। यह जिन दो पैरों पर खड़ी हुई थी उसमें से एक — यानी अंग्रेज़ी शासन से छुटकारा पाने का जज़्बा — जल्द ही गिरनेवाला है। इसके बाद सिर्फ़ दूसरा पैर बाक़ी रह जाता है, यानी मुस्लिम क़ौम-परस्ती के मुक़ाबले का जज़्बा। पाकिस्तान बन जाने के बाद इसका क़ायम रहना भी मुश्किल है, शर्त यह है कि हिन्दू इलाक़े के मुस्लिम अक़लीयत (अल्पसंख्यक), अपने मसले को हल करने का कोई ऐसा रास्ता निकाल ले जिससे न तो हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के बीच कशीदगी और झगड़े के कारण पैदा हों और न हिन्दुस्तान के अन्दर मुस्लिम क़ौम-परस्ती के दावों और माँगों को दबाने के लिए हिन्दू क़ौम-परस्ती के उत्तेजित होने का कोई मौक़ा बाक़ी रहे। यह हिकमत अगर अल्लाह ने मुसलमानों को अता कर दी तो

आप देखेंगे कि नेशनलिस्ट लीडर और क़ौमी व मज़हबी तरफ़दारी (पक्षपातों) के मुबल्लिग़ीन (प्रचारक) बनावटी ख़तरे और जाली हव्वे पेश कर के मौजूदा क़ौम-परस्ती को ज़िन्दा और उत्तेजित रखने की चाहे कितनी ही कोशिश करें, वह हर हाल में मरकर रहेगी और अलग-अलग और परस्पर विरोधी तत्त्व, जिनके मिलने से यह क़ौमपरस्त ब्लॉक बना है, बिखरकर रहेंगे। इसलिए कि इस ब्लॉक के अन्दर ख़ुद उसके अपने मिलनेवाले तत्वों के बीच जो तमद्दुनी (सांस्कृतिक) और मआशी बेइंसाफ़ियाँ, जो मआशी धोखेबाज़ियाँ, जो मक़सद और मफ़ाद की खींचातानी और जो तबक़ाती नफ़रतें मौजूद हैं वे बाहरी ख़तरों के हटते ही अपने आपको ताक़त के ज़ोर पर महसूस कराएँगी और मुल्क के आइन्दा इन्तिज़ाम, इख़तियारों का बँटवारा, हुकूक़ का तअय्युन और समाजी निज़ाम के गठन के मसले आख़िरकार उनको आपस में फाड़ देंगे। इस बिखराव के लिए ऐसे क़ौमी और फ़ितरी असबाब मौजूद हैं कि उसे ज़ाहिर होने से कोई ताक़त रोक नहीं सकती।

हिन्दुस्तान का मौजूदा समाजी निज़ाम (व्यवस्था) कुछ इस ढंग से बना है कि वे बहुत सारे तबक़ों (वर्गों) पर आधारित है जिसमें से कुछ, कुछ पर चढ़े हुए और कुछ उनसे दबे हुए हैं। इन तबक़ों के बीच पैदाइशी बरतरी (श्रेष्ठता) और नीचता और अटल भेद-भाव का तसव्वुर गहरी जड़ों के साथ जमा हुआ है और इसको आवागमन के फ़ल्सफ़े से और ज़्यादा मज़बूत कर दिया गया है। निचले तबक़ों के हक़ में यह यक़ीन पैदा किया गया है कि वह नीच रहने ही के लिए पैदा हुए हैं और यह उनके पिछले कर्मों का लाज़मी नतीजा है जिसे उन्हें हर हाल में भुगतना ही पड़ेगा, जिसे बदलने की हर कोशिश बेकार है और ऊँचे तबक़ों के हक़ में यह यक़ीन पैदा किया गया है कि वे पैदा ही बरतरी के लिए हुए हैं, बरतरी (श्रेष्ठता) उनका हक़ और उनके पिछले कर्मों का नतीजा है और उसको बदलने की कोशिश क़ुदरत के क़ानून के ख़िलाफ़ है। इस समाजी निज़ाम में हर ऊपर का तबक़ा नीचेवाले तबक़ा के सिर पर पैर रखे खड़ा है और उसे रौन्द रहा है। सामाज के हर पहलू में ऊँच और नीच का बरताव है। क़दम-क़दम पर बेशुमार नाइंसाफ़ियाँ हैं। तमद्दुन (संस्कृति) के हर गोशे में भेद-भाव का बर्ताव है, चाहे खाने-पीने का मामला हो या रहन-सहन का या शादी-ब्याह का, और इस भेद-भाव में सिर्फ़ फ़र्क़ का ही नहीं बल्कि बेइज़्ज़ती और ज़िल्लत के तत्व भी शामिल हैं। हद यह है कि ऊँचे तबक़े इस बात को भी गवारा करने के लिए तैयार नहीं हैं कि नीचे तबक़ों के मर्द और औरतें उनके जैसे पहनावे और ज़ेवर पहन लें। हाल ही की बात है कि राजपूताना के गूजरों और जाटों ने इस

बात पर हँगामा बरपा कर दिया था कि चमार वग़ैरह नीच तबक़ों ने — जो जंग की वजह से धनी हो गए हैं और कुछ बाहर की हवा भी खा आए हैं — अपनी औरतों को उनकी औरतों जैसे लिबास और ज़ेवर पहनाना शुरू कर दिया है। इसके बावजूद कि ये जाट और गूजर ख़ुद भी अपने साथ राजपूतों के जैसे ही सुलूक की कड़वाहट महसूस करते हैं, मगर फिर भी उन्होंने इस बात को अपनी बेइज़्ज़ती क़रार दिया कि चमार उठकर समाज में उनके बराबर बनें। इसलिए सामूहिक तौर पर उनकी बिरादरी ने ज़ोर लगाना शुरू किया कि इन ग़रीबों को ज़बरदस्ती उसी पस्ती में फेंक दें जिससे वे उठना चाहते हैं।

मआशी निज़ाम (अर्थ-व्यवस्था) भी बड़ी हद तक इसी समाजी निज़ाम (समाज-व्यवस्था) की तरकीब पर क़ायम है और इसके प्राचीन ज़ालिमाना पहलुओं पर जदीद सरमायदारी (Modern Capitalism) की ख़ुसूसियात और बढ़ोत्तरी हो गई है। जो तबक़े क़दीम इजतिमाई नज़रियों (प्राचीन सामूहिक दृष्टिकोण) और अलौकिक तबई फ़ल्सफ़ों की मदद से ऊपर की सीढ़ियों पर पहुँच चुके हैं उन्होंने सिर्फ़ इतने ही पर बस नहीं किया है कि देश की तमद्दुनी ज़िन्दगी (Cultured Life) में बढ़ोत्तरी को अपने लिए ख़ास कर लें, बल्कि इसके साथ-साथ वही देश की दौलत और उसके साधनों और ज़रियों पर भी क़बज़ा जमाए बैठे हैं और नीचे की सीढ़ियों पर रहनेवाली आम आबादी के लिए उन्होंने ज़िन्दगी गुज़ारने का कोई रास्ता इसके सिवा नहीं छोड़ा है कि वे ज़िल्लत के साथ उनकी सेवा और मज़दूरी करें। इस आर्थिक-व्यवस्था में महरूम और मेहनत करनेवाले तबक़ों के साथ जो बे-इनसाफ़ियाँ और ज़्यादतियाँ पाई जाती हैं उनका शुमार करना मुश्किल है। फिर ऊँचे तबक़ों ने ख़ुद अपने दायरे (सीमा) में भी ज़ुल्म और ज़्यादती की बहुत सारी शक्लें अपना रखी हैं जिनकी बिना पर कम लोग ख़ुशहाल और ज़्यादा लोग बदहाल हैं। उनकी सूदख़ोरी, उनका मुश्तरक ख़ानदानी जायदाद का तरीक़ा (Joint Family Property System), उनका बड़ी औलाद को वारिस बनाने का क़ानून (Law of Primogeniture) और इसी तरह के और बहुत-से तरीक़े हैं जो दौलत और उसके ज़रियों को समेटकर कुछ लोगों के हाथों में दे देते हैं और बहुतों को महरूम और मुहताज बना देते हैं। इन्हीं तरीक़ों से जिन हाथों में दौलत सिमटी है वह अब जदीद सरमायदारी (Modern Capitalism) के ढंग अपनाकर मुल्क के उद्योग-धन्धों, तिजारत और मालियात पर हावी हुए हैं और होते जा रहे हैं।

अब जो सियासी निज़ाम (Political System) बनाया जा रहा है उनकी

बनावट में काग़ज़ पर तो बिला-शुब्हा (निस्संकोच) जमहूरियत (Democracy), सामाजिक इनसाफ़ (Social Justice), बराबरी (Equality) और मौक़े के समान अवसरों (Equal Opportunities) के बड़े-बड़े ख़ुशनुमा तसव्वुरात बड़ी सुथरी और दिलकश ज़बान में लिखे जा रहे हैं, लेकिन ज़ाहिर है कि उन लफ़्ज़ों की असल क़ीमत उनके तलफ़्फ़ुज़ (उच्चारण) में नहीं, उनपर सही मानो में अमल करने में है। अमली तौर पर जो कुछ हम लोग देख रहे हैं वह यह है कि इस सियासी निज़ाम (Political System) की बनावट, तामीर और उसके निफ़ाज़ के सारे कामों पर वही तबक़े हावी हैं जो समाजी और मआशी निज़ाम की ऊपरवाली सीढ़ियों पर बैठे हैं — नहीं, बल्कि पैदा हुए हैं। और तजुरबे ने हमें बता दिया है कि उन तबक़ों को ख़ुदा ने सब कुछ दिया है मगर बड़ा दिल, कुशादा नज़र और बड़ा हौसला नहीं दिया। उनकी तंगदिली अब तक हिन्दुस्तान को बहुत कुछ नुक़्सान पहुँचा चुकी है और आगे भी उसे देखते हुए मुश्किल से यह उम्मीद की जा सकती है कि ये लोग अपनी राजनैतिक ताक़त को सही मानो में इनसाफ़ क़ायम करने में इस्तेमाल करेंगे।

ये हालात अपने अन्दर इतनी तलख़ियाँ रखते हैं जिन्हें देश की आम आबादी शिद्दत के साथ महसूस कर रही है। अब तक क़ौमपरस्ती के नशे ने इस एहसास को बड़ी हद तक दबाए रखा था, और लोग इस उम्मीद पर जी रहे थे कि देश का इन्तिज़ाम जब हमारे हाथ में आ जाएगा तो ये बे-इनसाफ़ियाँ ख़त्म हो जाएँगी। अब इन्तिज़ाम के इख़तियारात जब हक़ीक़त में देशवासियों की तरफ़ मुन्तक़िल हो जाएँगे तो यह सवाल ज़्यादा देर तक टल न सकेगा कि उन इख़तियारात को आगे किस तरह इस्तेमाल किया जाए जिससे देश में हक़ीक़ी इनसाफ़ क़ायम हो। हिन्दुस्तान के भविष्य की बागडोर इस वक़्त जिन लोगों के हाथों में आ रही है वह हिन्दू कलचर की पिछली रिवायतों के साथ मग़रिबी यूरोप और अमेरिका के ज़िन्दगी के तरीक़े का जोड़ लगाते नज़र आते हैं। यह मेरा अन्दाज़ा अगर सही हो तो इस तरह वह एक नुमाइशी जमहूरियत (प्रजातन्त्र), एक ज़ाहिरी बराबरी और एक दिखावटी इनसाफ़ क़ायम करने में तो ज़रूर कामयाब हो जाएँगे, मगर उसकी तह में बदस्तूर वही बे-इनसाफ़ियाँ, वही ना-हमवारियाँ और वही भेद-भाव बरक़रार रहेगा जो इस वक़्त पाया जाता है, क्योंकि फ़र्क़ और भेद-भाव हिन्दू कलचर की रग-रग में भरा पड़ा है जिसके होते ही किसी हक़ीक़ी जमहूरियत (Real Democracy) का क़याम ग़ैर-मुमकिन है, और इसके साथ पश्चिमी नज़रियात (दृष्टिकोणों) का जोड़ लगने से इसके सिवा कुछ

हासिल होने की उम्मीद नहीं की जा सकती कि ऊँचे तबक़ों की बरतरी और सरमायादारी को चुनावों और वोटों के सही होने की सनद मिल जाए। इसी लिए यह काम क़रीब-क़रीब यक़ीनी नज़र आता है कि ये लोग बहुत जल्द ही हिन्दुस्तान की आम आबादी को मायूस कर देंगे। उनके हाथों इनसाफ़ क़ायम न हो सकेगा, और कुछ ज़्यादा देर न गुज़रने पाएगी कि हिन्दुस्तानी अवाम, किसान, मज़दूर और ख़ुद ऊँचे तबक़े के महरूम लोग किसी दूसरे मुनसिफ़ाना निज़ाम (न्याय पर आधारित व्यवस्था) की चाह में बेचैन होने लगेंगे।

इशतिराकी गिरोह (Communist Group, Left Front) इसी सुरतेहाल से फ़ायदा उठाने की तैयारियाँ कर रहा है। जैसे ही मौजूदा क़ौमपरस्ती अपने मक़सद को पहुँचने के बाद सुस्त हुई, वे इसी तबक़ाती ख़लल और अपने-अपने फ़ायदों के टकराव के बीच में से अपना रास्ता निकालने की कोशिश करेगा और आम जनता को इनसाफ़ की उम्मीदें दिलाकर सियासी सत्ता हासिल करना चाहेगा। मगर इस ग्रुप के पास नाइनसाफ़ियों को ख़त्म करने के लिए कोई ऐसा प्रोग्राम नहीं है जो ख़ुद ज़ुल्म से, बेइनसाफ़ी से, ख़ून-ख़राबे और फ़साद से और आख़िरकार ज़ुल्म और ज़्यादती से पाक हो। वह हिन्दुस्तान की मौजूदा फ़िरक़ावाराना नफ़रतों और झगड़ों की जगह तबक़ावाराना नफ़रतों और झगड़ों का तोहफ़ा देगा। अब तक जहाँ हिन्दू और मुसलमान के झगड़े की बिना पर लोग एक-दूसरे के सिर फाड़ते और घर जलाते रहे हैं, वहाँ अब रोटी के झगड़े की बिना पर वही लोग क़त्ल और ख़ून-ख़राबा करने लगेंगे। एक तबक़ा दूसरे तबक़े के ख़िलाफ़ उसी तरह नफ़रत और ग़ुस्से से भड़क उठेगा जिस तरह आज एक फ़िरक़ा (साम्प्रदाय) दूसरे फ़िरक़े के ख़िलाफ़ भड़का हुआ है। फ़िरक़ापरस्ती (साम्प्रदायिकता) और क़ौमपरस्ती की जगह तबक़ाती मफ़ाद (हित) की ग़ुलामी ले लेगी और इनसाफ़ के हक़ीक़ी जज़्बा से दिल जिस तरह आज क़ौमी जंग के ज़माने में ख़ाली हैं उसी तरह उस वक़्त तबक़ाती जंग के ज़माने में भी ख़ाली होंगे। सत्ताधारी तबक़ा महरूम तबक़ों को महरूम रखने के लिए लड़ेंगे, और महरूम तबक़े उनकी जगह लेकर उलटा उन्हें महरूम (वंचित) कर देने के लिए सिर-धड़ की बाज़ी लगाएँगे। इस तरह हिन्दुस्तान एक मुद्दत तक अम्न व शान्ति के लिए तरस्ता रहेगा और आख़िर में अल्लाह न करे कम्युनिस्ट इंक़िलाब कामयाब हो गया तो और एक लम्बे समय तक यहाँ रूस की तरह ऊँचे तबक़ों को उनकी ज़मीनों, जायदादों और कारख़ानों से बेदख़ल करने के लिए

बड़े ख़ून-ख़राबे और ज़ुल्म व ज़ोर का बाज़ार गर्म रहेगा। फिर इशतिराकी निज़ाम (Communism) क़ायम हो जाने के बाद वैसी ही डिक्टेटरशिप (Dictatorship) यहाँ भी क़ायम होगी जैसी रूस में है। इसी तरह देश की पूरी आबादी को एक जाबिर (Totalitarian) सत्ता हर ओर से शिकंजे में कस लेगी, इसी तरह लोग ज़बान, क़लम और ख़्याल की आज़ादी से महरूम हो जाएँगे, इसी तरह सारे लोगों की रोटी-रोज़ी कुछ लोगों के हाथों में आ जाएगी, और इसी तरह ख़ुदा के बन्दों को इतनी आज़ादी भी हासिल न रहेगी कि इस निज़ाम (System) की सख़्तियों से परेशान हो जाएँ तो चीख़-पुकार लें या उस हालत को बदलने के लिए कोई सियासी जमाअत या इजतिमाई (सामूहिक) कोशिश कर सकें। और इन सबसे बढ़कर इस कम्युनिस्ट इंक़िलाब से जो नुक़सान हिन्दुस्तान को पहुँचेगा वह यह कि पिछली सदियों के पतन के बावजूद थोड़ी-बहुत रूहानी और अख़लाक़ी ख़ूबियाँ जो हिन्दुस्तान की तहज़ीब में बाक़ी हैं वह भी ख़त्म हो जाएँगी और यह देश सरासर एक माद्दापरस्त (भौतिकवादी) मुल्क बनकर रह जाएगा।

इस अंजाम से अगर कोई चीज़ हिन्दुस्तान को बचा सकती है तो वह यह है कि कोई गिरोह फ़िक्र व अमल के एक ऐसे निज़ाम को लेकर उठे जिसमें ऊँचे दर्जे की हक़ीक़ी रूहानी और अख़लाक़ी ख़ुबियाँ भी हों, सच्चाई और बेलाग सामाजिक इनसाफ़ भी हो, असली जमहूरियत (Democracy) — सिर्फ़ सियासी ही नहीं बल्कि तमद्दुनी और सामाजिक जमहूरियत (Cultural and Social Democracy) भी हो, और सारे देशवासियों के लिए तबक़ा और नस्ल के भेद-भाव के बिना इनफ़िरादी (Individuality) और इजतिमाई हैसियत से तरक़्क़ी के बराबर मौक़े भी हों। जो एक या कुछ तबक़ों के फ़ायदे को नहीं बल्कि सब इनसानों के फ़ायदे को समान हमदर्दी और इनसाफ़ की नज़र से देखे, किसी का हिमायती और किसी का दुश्मन न हो, तबक़ों और गिरोहों को एक-दूसरे के ख़िलाफ़ उकसाने और लड़ाने के बजाय एक इनसाफ़ पर क़ायम निज़ामे ज़िन्दगी (जीवन-व्यवस्था) पर उन्हें जोड़े, महरूम तबक़ों को वही कुछ दिलाए जो उनका फ़ितरी हक़ है और ऊँचे तबक़ों से सिर्फ़ वही कुछ ले जो उनके पास उनके फ़ितरी हक़ों से ज़्यादा है। ऐसे एक निज़ाम को अगर देश के लोगों के सामने पेश किया जाए और उसको पेश करनेवाले वे लोग हों जिनकी सीरत (चरित्र) और अख़लाक़ पर भरोसा किया जा सके, जो ख़ुद

किसी क़िस्म की क़ौमी या गिरोही या ज़ाती ख़ुदग़र्ज़ी में मुब्तिला न हों, जिनकी अपनी ज़िन्दगियाँ इस बात पर गवाह हों कि हक़ीक़त में उन्हीं से इनसाफ़ की उम्मीद की जा सकती है, और जिनमें ईमानदारी और दुनिया का इन्तिज़ाम करने के निज़ाम की सलाहियत दोनों जमा हों, तो कोई वजह नहीं है कि हिन्दुस्तान के लोग इस निज़ाम (व्यवस्था) के मुक़ाबले में कम्युनिस्ट इंक़िलाब के रास्ते को तरजीह दें। कम्युनिस्ट इंक़िलाब तो एक ऑपरेशन है जो मर्ज़ के साथ तन्दरुस्ती के भी एक बड़े हिस्से को काट फेंकता है और इनसान उसे सिर्फ़ ऐसी मजबूरियों की हालत ही में गवारा किया करता है जब दवा से मर्ज़ के सुधार होने की कोई उम्मीद बाक़ी न रहे। दुनिया में जहाँ भी किसी मुल्क के लोगों ने इस ऑपरेशन के तरीक़े को अपनाया है इसी वजह से अपनाया है कि उनके सामने ज़ालिमाना सरमायदारी (Capitalism) और साम्यवाद (Communism) के बीच कोई तीसरा रास्ता था ही नहीं जिसमें वे उन दोनों की ख़राबियों से बचकर इनसाफ़ मिलने की उम्मीद कर सकते। अगर इस तरह का तीसरा रास्ता पेश कर दिया जाए, जैसा कि पेश करने का हक़ है, तो न हिन्दुस्तान के लोग ऐसे पागल हैं और न दुनिया के दूसरे देशों की आबादी ही को इतना दीवाना समझने की कोई वजह है कि वह एक फ़ायदेमन्द दवा को आज़माने के बजाय यूँ ही ऑपरेशन ही पर ज़िद करेंगे।

सवाल यह है कि क्या मुसलमान यह तीसरा रास्ता पेश कर सकते हैं या नहीं? अगर पेश कर सकते हैं और इस तीसरे रास्ते का नाम इस्लाम ही है तो मैं यक़ीन के साथ कहता हूँ कि मुस्तक़बिल (भविष्य) के हिन्दुस्तान में कम्युनिज़्म के मुक़ाबले में इस्लाम के लिए कामयाबी के कम से कम 60% अनुमान हैं। यह मुसलमानों की बहुत बड़ी बद-क़िस्मती और बड़ी नालायक़ी होगी कि उनके पास इस्लाम जैसा एक मुकम्मल और सही निज़ाम मौजूद हो और फिर वे इसे लेकर उठने के बजाय पूरा मैदान कम्युनिज़्म के लिए ख़ाली छोड़ दें।

अब मैं आपको मुख़्तसर तौर पर यह बताऊँगा कि हिन्दुस्तान में इस्लामी इंक़िलाब का रास्ता हमवार करने के लिए हमें क्या करना है—

1. सबसे पहला काम यह है कि उस क़ौमी कशमकश को ख़त्म किया जाए जो हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच अब तक जारी है। मेरे नज़दीक यह बात पहले भी ग़लत थी कि मुसलमान इस्लाम के लिए काम करने के बजाय अपने क़ौमी फ़ायदों और मुतालबों के लिए लड़ते रहें। मगर अब तो इस लड़ाई को

जारी रखना सिर्फ़ ग़लती नहीं बल्कि बहुत तबाहकुन ग़लती और बेवक़ूफ़ों की-सी ख़ुदकुशी है। अब यह बहुत ज़रूरी है कि मुसलमान अपने काम के तरीक़े को बिल्कुल बदल दें। असेम्बलियों में नुमाइंदगी के तनासुब (प्रतिशत) का सवाल, यह चुनाव की दौड़-धूप, यह नौकरियों के लिए कशमकश और यह दूसरे क़ौमी हक़ों और मुतालबों के लिए चीख़-पुकार आनेवाले दौर में बेफ़ायदा होगी और नुक़सानदेह भी। बेफ़ायदा इसलिए है कि अब जिन लोगों के हाथों में हिन्दुस्तान की हुकूमत आ रही है वह संयुक्त चुनाव और नौकरियों में सिर्फ़ 'क़ाबलियत' के लिहाज़ का उसूल तय करके मुसलमानों की अलग सियासी हस्ती को ख़त्म कर देने का फ़ैसला कर चुके हैं और उनके फ़ैसले को लागू होने से किसी तरह नहीं रोका जा सकता। नुक़सानदेह इसलिए है कि इन 'हक़ों' के तय कराने की जितनी कोशिश भी मुसलमान करेंगे वे हिन्दुओं के क़ौमी तास्सुब को और ज़्यादा मुश्तइल (उत्तेजित) करेगी, और अगर वे अपनी शिकायतों को ख़त्म कराने के लिए पाकिस्तान की मदद लेना चाहेंगे तो यह बैनुल अक़वामी (International) पेचीदगी और कशमकश का कारण बन जाएगा जिससे हिन्दू क़ौमपरस्ती को ज़िन्दगी की और ज़्यादा ताक़त मिल जाएगी। इसलिए अब हमें बड़े पैमाने पर मुसलमानों में ऐसी आम राय तैयार करनी चाहिए कि वे एक क़ौम की हैसियत से हुकूमत और उसके निज़ाम (व्यवस्था) से बेरुख़ी इख़तियार कर लें और हिन्दू क़ौमपरस्ती को अपने काम के तरीक़े से यह इत्मीनान दिला दें कि मैदान में कोई दूसरी सियासी क़ौमियत उसके साथ कशमकश करने के लिए मौजूद नहीं है। यही एक तरीक़ा है इस ग़ैर-मामूली तास्सुब को ख़त्म कर देने का जो इस वक़्त ग़ैर-मुस्लिम अक्सरियत (Majority) के अन्दर इस्लाम के ख़िलाफ़ पैदा हो गया है, और इसी तरीक़े से ग़ैर-मुस्लिमों के इस शक को भी दूर किया जा सकता है कि अगर इस्लाम को मज़ीद फैलने का मौक़ा दिया गया तो कहीं फिर किसी इलाक़े के मुसलमान एक और पाकिस्तान माँगने के लिए खड़े न हो जाएँ।

2. दूसरा अहम काम हमारे लिए यह है कि हम मुसलमानों में बड़े पैमाने पर इस्लाम का इल्म फैलाएँ, उनमें इस्लाम की दावत और तबलीग़ का आम जज़्बा पैदा कर दें और उनकी अख़लाक़ी, तमद्दुनी और समाजी ज़िन्दगी का इस हद तक सुधार करें कि उनके साथी ग़ैर-मुस्लिमों को ख़ुद अपनी सोसायटी के मुक़ाबले में उनकी सोसायटी साफ़ तौर पर बेहतर महसूस होने लगे और उनमें जो लोग भी इस सोसायटी में शामिल होने के लिए राज़ी हों, चाहे वे किसी भी

तबक़े के हों, उनको बिल्कुल बराबरी की हैसियत से अपने अन्दर लिया जा सके। यह काम बरसों तक अनथक और लगातार मेहनत चाहता है, मगर जब तक हम मुस्लिम सोसायटी के एक बड़े हिस्से को इल्मी, अमली और सामाजिक हैसियत से इस्लाम का सही नुमाइन्दा न बना लें हमारा यह उम्मीद करना सिर्फ़ एक बकवास है कि हिन्दुस्तान की आम ग़ैर-मुस्लिम आबादी की राय को इस्लाम के हक़ में हमवार किया जा सकेगा। ग़ैर-मुस्लिमों के सामने आप काग़ज़ पर या तक़रीर में इस्लाम को कैसे ही दिलकश अन्दाज़ से पेश करें, बहरहाल वह उनको अपील नहीं कर सकता क्योंकि इस्लाम के असली नुमाइन्दों का जो तजुर्बा उन्हें रात-दिन की ज़िन्दगी में हो रहा है वह आपके बयान की तस्दीक़ (पुष्टि) नहीं कर सकता। फिर अगर उनमें कोई ऐसा हक़-पसन्द निकल भी आए कि मुसलमानों के बजाय इस्लाम को देखकर उसे क़बूल कर ले, तो आज की मुस्लिम सोसायटी में उसका खपना मुश्किल होता है इसलिए कि यहाँ अभी तक क़दीम (प्राचीन) हिन्दुवाना जाहिलियत के मौरूसी (पैतृक) तास्सुबात, ऊँच-नीच का भेद-भाव, ज़ात-बिरादरी के नाम पर अलगाव इस्लाम में आ जाने के बावजूद ज्यों के त्यों महफ़ूज़ हैं और इस बिना पर एक नौमुस्लिम को फिर उन्हीं सामाजिक ख़राबियों से वास्ता पड़ता है जिन्हें छोड़कर वह हिन्दू सोसायटी से निकला था। इसलिए मुसलमानों की — अगर सबकी नहीं तो कम से कम उनके एक बड़े हिस्सा की — अख़लाक़ी, तमदुनी और समाजी ज़िन्दगी के सुधार के बिना इस्लामी दावत का क़दम आगे नहीं बढ़ सकता और यह मुमकिन नहीं है कि सिर्फ़ नौमुस्लिमों से हम एक अलग सोसायटी बना सकें। इस सुधार में अगर हम कहीं किसी हद तक भी कामयाब हो जाएँ और उसके साथ-साथ मुसलमानों में इस्लाम से आम जानकारी भी पैदा कर दें और उनके अन्दर यह जज़्बा भी उभार दें कि रात-दिन की ज़िन्दगी में उनको हर जगह ग़ैर-मुस्लिमों से जो वास्ता पेश आता है उसमें वे मौक़ा के लिहाज़ से उनके सामने इस्लाम को पेश करते रहें तो दावत की रफ़्तार इतनी तेज़ हो सकती है कि हिन्दुस्तान में कोई दूसरी तहरीक (आन्दोलन) इस्लाम का मुक़ाबला नहीं कर सकती। यहाँ मुसलमानों की तादाद चार-पाँच करोड़ के क़रीब है। इस तादाद का बीसवाँ हिस्सा भी अगर इस्लाम को जानता हो और उसकी तबलीग़ शुरू कर दे तो इस्लाम के मुबल्लिग़ों (प्रचारकों) की तादाद 20-25 लाख के लगभग होगी। क्या कोई दूसरी तहरीक (Movement) ऐसी मौजूद है जिसके पास इतने प्रचारक हों ! फिर मुसलमान हिन्दुस्तान की आबादी में खिचड़ी की

तरह ग़ैर-मुस्लिमों के साथ मिले-जुले हैं और ज़िन्दगी के हर शोबे में हर जगह हर वक़्त उन्हें दूसरों तक अपने ख़्यालात पहुँचाने और अपने बरताव का असर डालने का मौक़ा मिलता है। क्या किसी दूसरी तहरीक (Movement) को ये मौक़े हासिल हैं? फिर दूसरी किसी तहरीक की अपनी कोई मुस्तक़िल सोसायटी (Permanent Society) और अपना कोई तमद्दुनी निज़ाम (Cultural System) नहीं है। उनके दामन में पनाह लेकर हिन्दुस्तान के बसनेवाले और दबे हुए तबक़े कुछ अपने पेट के मुतालबे (Demands) तो पूरे कर सकते हैं मगर अपनी सामाजिक ज़िन्दगी की मुश्किलें और ख़राबियाँ दूर नहीं कर सकते। बख़िलाफ़ इसके मुसलमान अपनी मुस्तक़िल (Permanent) सोसायटी रखते हैं जो अगर हमारे मक़सद के मुताबिक़ कुछ भी सुधर जाए तो उन सारे लोगों के लिए पूरी पनाहगाह बन सकती है जिन्हें सामाजिक ज़िन्दगी में नीच बनाकर रख दिया गया है या जिनको जाहिली तमद्दुन और मआशरत के निज़ाम की दूसरी ख़राबियों ने परेशान कर दिया है।

3. तीसरा ज़रूरी काम यह है कि हम इस मुल्क की ज़ेहनी और दिमाग़ी ताक़त का ज़्यादा से ज़्यादा हिस्सा अपनी इस दावत के लिए जुटाएँ और उससे बाक़ायदगी के साथ काम लें। हिन्दुस्तानी मुसलमानों का पढ़ा-लिखा तबक़ा (गिरोह) अपने उन मक़सदों में नाकाम हो चुका है जिसपर उसने अब तक नज़र जमा रखी थी। इस नाकामी का पता चलते ही उसपर मायूसी और नाउम्मीदी तारी होने लग जाएगी। इस मौक़े पर अगर उनके सामने एक रौशन नस्बुल-ऐन उम्मीदों और ख़ुशख़बरियों के साथ आए तो वह उनके एक बड़े हिस्से की तवज्जोह अपनी तरफ़ खींच लेगा। इस तरह जैसे-जैसे हमारी दावत को यह ताक़त मिलती जाएगी, हम चाहते हैं कि उसे उन नतीजाख़ेज़ कामों पर लगाया जाता रहे जो इस्लामी इंक़िलाब को क़रीब से क़रीब ला सकें। मिसाल के तौर पर हम मुसलमानों की अख़बार-नवेसी (पत्रकारिता) के मौजूदा रुझानों को बिल्कुल बदल देना चाहते हैं। हमारी ख़ाहिश है कि अच्छे लिखनेवाले अब अंग्रेज़ी, उर्दू और दूसरी ज़बानों में अख़बार निकालें और उनमें हुक़ूक़ (अधिकारों) की चीख़-पुकार, नौकरियों के फ़ीसद (प्रतिशत) पर शोर व ग़ुल और महकमों (Departments) में हिन्दूगर्दी पर वावेला करने के बजाय मौजूदा निज़ाम (व्यवस्था) पर उसूली तंक़ीद करें, उसकी कमियों का एक-एक पहलू नुमायाँ करके पब्लिक को दिखाएँ और उससे अच्छी एक निज़ामे ज़िन्दगी (जीवन-

व्यवस्था) पेश करके लोगों की राय को उसके हक़ में हमवार करें। इसी तरह हम चाहते हैं कि हमारे नौजवान अदीब (साहित्यकार) आराम और आसाइश चाहनेवालों का पेशा छोड़कर अपनी अदबी (साहित्यिक) क़ाबलियतों को एक ऊँचे दर्जे का तामीरी अदब (साहित्य) पैदा करने में लगाएँ जो इनसानियत के शुऊर को उजगाकर करे और दिल और दिमाग़ों में एक बेहतर निज़ाम (व्यवस्था) के लिए तड़प पैदा करे। फिर जिन लोगों को अल्लाह ने ज़्यादा ऊँचे दर्जे की दिमाग़ी सलाहियतें दी हैं उनको हम दुनिया की ज़ेहनी रहनुमाई का रास्ता दिखाना चाहते हैं और वह यह है कि ये लोग क़ुरआन की मशअल हाथ में लेकर इल्म के हर कोने और ज़िन्दगी के मामलों के हर पहलू का जाइज़ा लें और तहक़ीक़ और कोशिश के साथ इस्लामी निज़ामे ज़िन्दगी (जीवन-व्यवस्था) की पूरी तस्वीर दुनिया के सामने पेश कर दें जिसे देखकर आप आसानी से यह मालूम कर सकें कि अगर दुनिया का इन्तिज़ाम इस इन्तिज़ाम के मुताबिक़ हो तो उसकी तफ़सीली सूरत क्या होगी। इन सबके अलावा इसी दिमाग़ रखनेवाले गिरोह में से वे लोग भी निकल सकते हैं जो लीडरशिप (Leadership) की सलाहियतें रखते हैं। इस्लामी दावत को एक आम तहरीक (आन्दोलन) बनाने के लिए ज़रूरी है कि उन लोगों को उसकी रहनुमाई का पद सँभालने के लिए तैयार किया जाए

4. चौथा ज़रूरी काम यह है कि हमारे सब कारकुन और वे तमाम लोग जो आइन्दा हमारी तहरीक (Movement) से प्रभावित हों, हिन्दुस्तान की उन मक़ामी (Regional) ज़बानों को सीखें और उनमें लिखने और तक़रीर की क़ाबिलियत पैदा करें जो आइन्दा तालीम और लिट्रेचर की ज़बानें बननेवाली हैं। आगे इस बात की हर मुमकिन कोशिश करें कि इन ज़बानों (भाषाओं) में जल्दी से जल्दी इस्लाम के ज़रूरी लिट्रेचर का अनुवाद कर दिया जाए। दक्षिण भारत में तमिल, कन्नड़, मलयालम और मराठी, पश्चिम भारत में गुजराती, पूर्वी भारत में बंगला और बाक़ी भारत में हिन्दी अब तालीम (शिक्षा) की भाषाएँ होंगी। यही अपने-अपने क्षेत्रों में दफ़तरी और सरकारी भाषाएँ भी होंगी और इन्हीं में देश का लिट्रेचर छपेगा। अगर मुसलमान अपनी क़ौमी असबियत (पक्षपात) की बिना पर सिर्फ़ उर्दू तक अपनी तहरीर (लेख) और तक़रीर को सीमित रखेंगे तो देश की आम आबादी से कटकर रह जाएँगे और उनके पास अपने करोड़ों पड़ोसियों को अपना हम-ख़्याल बनाने का कोई

ज़रिया न रहेगा। बेशक हम यह ज़रूर चाहते हैं कि उर्दू ज़बान न सिर्फ़ बाक़ी रहे, बल्कि तरक़्क़ी करे। क्योंकि हमारा अब तक का सारा इल्म और तहज़ीब का सरमाया इसी ज़बान में है, लेकिन हम इस्लाम के भविष्य को उर्दू के दामन से बाँध देने के लिए तैयार नहीं हैं। अगर उर्दू ज़बान देश की आम ज़बान नहीं बन सकती, और हालात यही बता रहे हैं कि इसको यह हैसियत हासिल न होगी, तो फिर जिन-जिन ज़बानों (भाषाओं) को देश में रिवाज हासिल होगा, हम उन सब ज़बानों में इस्लामी लिट्रेचर तैयार करेंगे और उन सबको इस्लाम की दावत और तबलीग़ के लिए इस्तेमाल करेंगे। ऐसा करना सिर्फ़ ग़ैर-मुस्लिमों के लिए नहीं बल्कि ख़ुद मुसलमानों की आगे आनेवाली नस्लों को भी मुसलमान रखने के लिए ज़रूरी है, क्योंकि आगे चलकर मुसलमान बच्चे स्कूलों में तालीमी ज़बान और स्कूलों से बाहर सरकारी और मुल्की ज़बान से इतना मुतास्सिर (प्रभावित) होंगे कि उर्दू से उनका ताल्लुक़ सिर्फ़ नाम के लिए रह जाएगा, और अगर इन ज़बानों में ज़रूरत के मुताबिक़ इस्लामी लिट्रेचर न मिला तो वे बिल्कुल अक्सरियत (Majority) के रंग में रंगते चले जाएँगे।

ये चार काम ऐसे हैं जिनपर हमें अगले पाँच सालों में अपनी पूरी ताक़त लगानी है। बाद के मरहले में इस्लामी इंक़िलाब को आगे बढ़ाने के लिए जो कुछ करना होगा, उसका ज़िक्र इस वक़्त बेकार है। इसका जब मौक़ा आएगा तो ज़रूरत के मुताबिक़ हिदायतें जारी कर दी जाएँगी। मगर ख़ूब समझ लीजिए कि आगे के किसी प्रोग्राम की नौबत उस वक़्त तक आ ही नहीं सकती जब तक कि ये चार काम बड़ी हद तक अंजाम न पाएँ। इसलिए हिन्दुस्तान में हमारे जमाअत के अरकान और कारकुन हमदर्दों को अपने सारे ज़राये (साधन) और काम करने की अपनी पूरी ताक़त और अपनी सारी फ़िक्र व तवज्जोह इस शुरुआती काम पर ख़र्च कर देनी चाहिए। अब वह वक़्त है कि आप इसका एक पल भी अगर सुस्ती और ग़फ़लत में बरबाद करेंगे तो जुर्म करेंगे। जिस तूफ़ान की मैं दस साल से ख़बर देता रहा हूँ वह उमड़ आया है। अब अगर आपने इसपर रोक लगाने की फ़िक्र न की तो यह सब मुसलमानों के साथ आपको भी ले डूबेगा। जो हालात अब इस देश में पेश आनेवाले हैं, वह आपके सब्र का, आपके इरादे का, आपकी मज़बूती और जमाव का, आपकी हिकमत (दूरदर्शिता) और अक़्लमंदी का और आपकी अमली ताक़त का कठिन इम्तिहान लेंगे। आपके एक तरफ़ दज्जाल की जन्नत होगी जिसमें दाख़िल होने और ऊँचे-ऊँचे दर्जों पर

चढ़ने के लिए शर्त लाज़िम होगी कि तेज़ से तेज़ सूँघने की ताक़त रखनेवाले शख़्स को भी आदमी के अन्दर से इस्लामियत और इस्लामी ग़ैरत की ज़रा-सी महक तक महसूस न हो सकेगी, और आप देखेंगे कि आपके इर्द-गिर्द बहुत-से मुसलमान अपनी दुनियावी निजात के लिए इस शर्त को पूरा करने के लिए तैयार हो जाएँगे। आपके दूसरी तरफ़ हथौड़े और दरान्ती का झण्डा बुलन्द होगा और उसके साये में एक शद्दाद की दूसरी जन्नत का नक़्शा पेश किया जाएगा जिसके आशिक़ों को क़सम दी जाएगी कि ख़ुदापरस्ती, ईमानदारी और अख़लाक़ से अपने दिलों को ख़ाली रखें। आपकी आँखें यह भी देखेंगी कि दुनिया के भूखे मुसलमानों की एक बहुत बड़ी तादाद इसकी तरफ़ दौड़ रही होगी। इन दो झूठी जन्नतों के बीच आप अपने आपको एक ऐसे मक़ाम पर खड़ा पाएँगे जहाँ इस्लाम पर जमनेवालों और उसके लिए काम करनेवालों को तरक़्क़ी और ख़ुशहाली तो दूर, ज़िन्दगी का सामान भी मुश्किल ही से नसीब होगा। उनको हर-हर क़दम पर हिम्मत पस्त करनेवाले हालात से वास्ता पड़ेगा। उनकी इस्लामी ग़ैरत और इज़्ज़ते-नफ़्स (आत्म सम्मान) को हर वक़्त ज़ख़्म लगेंगे। इस्लामी शआइर (पहचान और चिह्नों) को वे न सिर्फ़ मिटते देखेंगे, बल्कि उनकी तौहीन और बेइज़्ज़ती भी एलानिया होगी और नामुमकिन नहीं कि मुलसमानों के अपने हाथों हो। इन हालात में सिर्फ़ वही लोग इस्लामी इंक़िलाब के लिए काम कर सकेंगे जो ग़ैर-मामूली सब्र व हिम्मत, इन्तिहाई सरगरमी और इन्तिहाई दरजे की हिकमत और अक़्लमन्दी से मालामाल हों। ये तीन ख़ूबियाँ अगर आप अपने अन्दर पैदा कर लें तो मैं आपको यक़ीन दिलाता हूँ कि इस पूरे तूफ़ान का रुख़ फेर देने में कुछ ज़्यादा देर न लगेगी। अब अपने दिलों के फ़र्क़ और मिज़ाजों के इख़तिलाफ़ को दूर करके एक सीसा पिलाई बुनियाद बन जाइए ताकि आपकी पूरी इजतिमाई ताक़त इस काम में लगे। अब अपने दिल की ख़ाहिशों को जड़ से निकाल फेंकिए, क्योंकि इस काम के लिए आपको बाहर से साधन न मिलेंगे, बल्कि सारे साधन आपको अपने अन्दर ही से जुटाने पड़ेंगे। अब अपने उन सब कामों और दिलचस्पियों को ख़त्म कर दीजिए जिनके अन्दर आपके वक़्त और फ़िक्र का कोई हिस्सा इस काम से हटकर ख़र्च होता हो, और ज़रूरी मआशी (आर्थिक) ज़रूरतों के बाद अपने वक़्त का एक-एक पल इसी काम के लिए वक़्फ़ रखिए। आपकी मुट्ठीभर जमाअत को आनेवाले पाँच सालों में — ऐसे पाँच साल जो इस्लाम और मुसलमानों और ख़ुद आपके हक़ में फ़ैसलाकुन (निर्णायक) हैं — बहुत बड़ा काम करना है। इतना बड़ा काम जो पहाड़

खोदकर दूध की नहर निकालने से कम नहीं। आपको मुसलमानों की रायों और उनके क़ौमी रवैये का रुख़ बदलना है। आपको आम मुसलमानों का अक़ीदा, अख़लाक़ और तमद्दुन का सुधार करना है। आपको मुसलमानों के दिल व दिमाग़वाले तबक़े में असर पैदा करना और उसे ज़ेहनी व अमली बिखराव से बचाकर इस्लामी इंक़िलाब की राह पर लगाना है। आपको देश के अलग-अलग हिस्से की ज़बानों में इस्लामी लिट्रेचर को फैलाने का काम करना है और ये सारे काम सिर्फ़ अल्लाह के भरोसे और अपने बूते ही पर करने हैं, कहीं से कोई मदद मिलने या हिम्मत-अफ़ज़ाई होने की उम्मीद नहीं है। अगर आप हिम्मत की कमर बाँधकर खड़े न होंगे और पूरी लगन के साथ अपनी सारी इजतिमाई ताक़त न लगाएँगे तो ये काम कैसे पूरे होंगे। अल्लाह से जो वादा करके आप जमाअत में दाख़िल हुए हैं, उसे याद कीजिए, अपने ईमान की ताक़त को ताज़ा और मज़बूत कीजिए, और सिर्फ़ अल्लाह की मदद के भरोसे पर काम के लिए आगे बढ़िए। मुझे उम्मीद है कि आप अपने रब की ख़ुशी के लिए जब काम करेंगे तो वह भी आपको ऐसे-ऐसे रास्तों से मदद पहुँचाएगा जिसके बारे में आज आप सोच भी नहीं सकते।

पाँचवाँ इजलास

दिन सनीचर, 26 अप्रैल 1947 ई०

यह इजलास (बैठक) अस्र की नमाज़ के बाद शुरू हुआ और मग़रिब तक रहा। इस इजलास में सिर्फ़ अरकाने जमाअत शरीक हुए क्योंकि इसमें सिर्फ़ उन मामलों के बारे में बात होनी थी जिनका ताल्लुक़ जमाअत और अरकान के आपस के ताल्लुक़ात और मामलात से था। सबसे पहले सूबा (Province) मद्रास के कुछ अरकान की आपसी शिकवा-शिकायतों की तहक़ीक़ (छान-बीन) की गई और उन्हें दूर किया गया। फिर बाबापुर की जमाअत का मामला लिया गया जिसके साथ मौलवी इनायतुल्लाह साहब नदवी का बहुत दिनों से झगड़ा चला आ रहा था। इसकी बहुत तफ़सीली तहक़ीक़ की गई और इजतिमा से पहले एक कमेटी के ज़रिये जो तहक़ीक़ात (Investigations) की गई थीं उसकी रिपोर्ट भी अमीरे जमाअत और अरकान के सामने पेश कर दी गई। इसके बाद अमीरे जमाअत ने यह मामला जुनूबी हिन्द (दक्षिण भारत) के अरकान के सामने मशविरे के लिए पेश किया। कुछ अरकान ने राय दी कि मौलवी इनायतुल्लाह साहब को मशविरा दिया जाए कि वे कुछ दिन जमाअत से अलग

रहकर काम करें। जब उनके रवैये के बारे में जमाअत को इत्मीनान हो जाए तो उन्हें दोबारा ले लिया जाए। इस मशविरे को अमीरे जमाअत ने पसन्द किया और मौलवी इनायतुल्लाह साहब को यह हिदायत कर दी गई कि वे जमाअत से अलग होकर अपने रवैये पर ग़ौर करें और उसके सुधार की तरफ़ ध्यान दें जिसको उन्होंने मंज़ूर कर लिया।

मग़रिब के वक़्त इस इजलास की कार्रवाई ख़त्म हुई और इजतिमा के ख़त्म होने का एलान कर दिया गया।

इजतिमा हल्क़ा पूर्वी भारत

(पटना)

एलान के मुताबिक़ पूर्वी भारत (यू०पी०, बिहार, उड़ीसा, बंगाल और आसाम) का हल्क़ावार (क्षेत्रीय) इजतिमा पटना, बिहार में 25-26 अप्रैल, 1947 ई० को हुआ। इस इजतिमा में मर्कज़ की तरफ़ से मौलाना अमीन अहसन साहब इस्लाही, मलिक नसरुल्लाह ख़ाँ साहब अज़ीज़ (एडीटर 'कौसर') और सैयद मुहम्मद हाशिम साहब (शोबा तंज़ीमे जमाअत, दारुल-इस्लाम) शरीक हुए। यू०पी०, बिहार, बंगाल और रियासत नेपाल से 350 अरकान और हमदर्द तशरीफ़ लाए। इजतिमा की पूरी कार्रवाई इस तरह है—

पहला इजलास (बैठक)

यह इजलास 25 अप्रैल, 1947 ई० को जुमा के दिन 8 बजे सुबह शुरू हुआ। यह खुला इजलास था और दफ़्तर जमाअत इस्लामी सुल्तानगंज, महेन्दरू रोड, पटना के कम्पाउंड में आयोजित हुआ। शरीक होनेवाले लोगों की तादाद चार सौ से ज़्यादा थी। इजतिमा की कार्रवाई ठीक आठ बजे मौलाना अमीन अहसन साहब इस्लाही की इफ़तिताही तक़रीर (Inaugural Speech) से शुरू हुई जो इस तरह है—

इफ़तिताही तक़रीर

हम्द व सना के बाद :

जमाअत के साथियो और हाज़िर लोगो! अल्लाह तआला का लाख-लाख शुक्र है कि इस नाज़ुक और फ़ितना व फ़साद से भरे ज़माने में उसने हमारे यहाँ इकट्ठा होने की सूरत पैदा की और हम अपने इजतिमाई मक़सदों पर ग़ौर करने के लिए यहाँ जमा हो सके। आपको मालूम है कि यह मक़ाम इस साल हमारे ऑल इन्डिया इजतिमा के लिए तय किया गया था, लेकिन इस फ़ितना व फ़साद

और ख़तरनाक हालात की वजह से जो इस वक़्त पूरे देश में छाए हुए हैं, यह इरादा पूरा न हो सका। जिस वक़्त पटना में सालाना इजतिमा का एलान किया गया उस वक़्त भी हालात अगरचे ख़राब थे, लेकिन इतने ख़राब न थे जितने कि अब हैं। लेकिन एलान के बाद ही अचानक पंजाब के एक हिस्से में फ़साद की एक चिंगारी चमकी और उसने देखते-देखते अम्बाला से लेकर अटक तक पूरे दक्षिणी भारत को अपने घेरे में ले लिया और यह हालात हो गए कि लोगों के लिए न अपने घरों में अम्न और इत्मीनान से साँस लेने का मौक़ा बाक़ी रह गया और न बाहर निकलने का कोई इमकान बाक़ी रहा। हम ख़ुद अपने मर्कज़ में क़रीब एक हफ़्ता सारी दुनिया से बिल्कुल कटे रहे। और बाहर की दुनिया से हमारा कोई ताल्लुक़ रह गया था तो उसका ज़रिया सिर्फ़ रेडियो था। ऐसे हालात के अन्दर आप ख़ुद अन्दाज़ा कर सकते हैं कि अगर हम पटना में इजतिमा के इरादे पर जमे रहते तो इससे जमाअत के आम अरकान को भी सख़्त मुश्किलें पेश आतीं और हमारे उत्तरी भारत के अरकान भी सख़्त आज़माइश में पड़ जाते। इस वजह से हमें बिल्कुल वक़्त के वक़्त इजतिमा के न होने का एलान करना पड़ा और उसके बजाय हल्क़ावार इजतिमाआत करने का फ़ैसला किया गया। हमारे नज़दीक मौजूदा हालात में यही एक शक्ल थी जिससे हम पूरे हिन्दुस्तान के सभी जमाअत के अरकान से भी मिल सकते थे और उनको किसी असहनीय परेशानी से बचा भी सकते थे। चुनांचे इस वक़्त जबकि मैं आपके सामने यहाँ पटना में पूर्वी भारत के अरकान को ख़िताब (सम्बोधित) कर रहा हूँ, मद्रास में दक्षिणी भारत के अरकान का भी इजतिमा हो रहा होगा।

इस इजतिमा की कार्रवाई शुरू करते हुए मैं आपको जो बातें याद दिलानी चाहता हूँ वह तफ़सील के साथ इलाहाबाद के इजतिमा के मौक़े पर बयान कर चुका हूँ, मुझे उम्मीद है कि वे बातें आपको पूरी तरह याद होंगी। फिर भी इस ख़्याल से फिर उनको दोबारा दुहरा देता हूँ कि अगर आप कोई बात भूल गए हों तो याद आ जाए और वे लोग भी इन बातों से वाक़िफ़ हो जाएँ जो इलाहाबाद के इजतिमा के मौक़े पर मौजूद न थे।

मैंने इलाहाबाद के इजतिमा में सबसे पहले जिस चीज़ की तरफ़ तवज्जोह दिलाई थी वह अल्लाह तआला की याद है। आज भी आपको सबसे पहले इसी चीज़ की ताकीद करता हूँ। एक साल पहले जो बात मैंने कही थी, ग़ौर व फ़िक्र और क़ुरआन और हदीस के मुतालबे से उसका यक़ीन और ज़्यादा पक्का हो

गया है। अब मुझे इस बात में ज़रा भी शक नहीं रहा कि इनसान के इल्म, इनसान की अक़्ल या इनसान के दिल व दिमाग़ और उसके फ़िक्र व नज़र को जो रौशनी भी नसीब होती है वह सिर्फ़ अल्लाह तआला की याद ही से होती है। अगर यह न हो तो इनसान का तमाम बातिन (अन्दरून) बिल्कुल अंधेरे में रहता है और उसका हर काम चाहे देखने में कितना ही सही मालूम होता हो बिल्कुल ग़लत मालूम होता है। उसका दिल उसको ग़लत मशविरे देता है और उसका दिमाग़ ग़लत रहनुमाई (मार्गदर्शन) करता है और उसके हाथ-पाँव जिस रास्ते में और जिस मक़सद के लिए भी उठते हैं, ग़लत ही उठते हैं, यहाँ तक कि अगर कोई आदमी दीन का नाम लेकर भी उठे और दीन का ही काम करना चाहे लेकिन ख़ुदा की याद से उसका दिल ख़ाली हो जाए तो उसकी वह दीनदारी भी दुनियादारी बन जाती है। आप अगरचे दीन के काम के लिए उठे हैं लेकिन उसके बावजूद आपको इस ख़तरे से बेपरवाह नहीं रहना चाहिए कि ख़ुदा से ग़फ़लत आपके उस सारे काम को ख़राब कर सकती है और आगे की किसी मंज़िल में भी शैतान आपको गुमराह कर सकता है। अगर इस ख़तरे से आप बचना चाहते हैं तो इसके सिवा इसकी कोई तदबीर नहीं कि आप अपने दिलों को अल्लाह की याद से नूरानी रखें ताकि आपके दिल और दिमाग़ और आपके हाथ-पैर वग़ैरह सही तरीक़े पर और सही रास्ते में काम करें।

मैंने इस बात की तरफ़ इलाहाबाद के इजतिमा में तफ़सील के साथ आपको तवज्जोह दिलाई थी और मेरी वह पूरी तक़रीर अब छप चुकी है। आप उसको फिर पढ़कर उसकी याद ताज़ा करें।

दूसरी चीज़ जिसकी तरफ़ मैं आपका ध्यान दिलाना चाहता हूँ वह जमाअती सीरत (Character) की तामीर है। आपको इस बात का अच्छी तरह इल्म है कि मुसलमानों में नेक लोगों की न पहले कमी थी, न अब कमी है। उनकी एक अच्छी ख़ासी तादाद पहले भी मौजूद थी और अब भी ख़ुदा के फ़ज़्ल से मौजूद है। लेकिन नेक लोगों की इस जमाअत की मौजूदगी के बावजूद यह क़ौम गिरते-गिरते पस्ती के इस दर्जे तक पहुँच गई जो आज आप देख रहे हैं। इसकी वजह इसके सिवा और क्या हो सकती है कि ये नेक लोग सलाह और तक़वा की ख़ूबियाँ रखने के बावजूद न जमाअती ज़िन्दगी की अहमियत से आशना (परिचित) थे और न जमाअत की सीरत ही के एतिबार से कोई वज़न रखते थे जिसका नतीजा यह हुआ कि वे न अपनी क़ौम ही को गिरने से बचा सके और

न आप ही को मौजूदा फ़ितनों से दूर रख सके। आपको इस ग़लती का सुधार और इस कमी की भरपाई करनी है। आपको नेक बनने के साथ-साथ अपने अन्दर वह जमाअती सीरत भी पैदा करनी है जो नेक लोगों की जमाअत के लिए ज़रूरी है। इसके बिना जमाअत इस्लामी के क़याम का मक़सद पूरा नहीं हो सकता। हम सिर्फ़ इनफ़िरादी (Individual) नेकी के दाई नहीं हैं, बल्कि आपको इजतिमाई नेकी की जिद्दोजुहद के लिए तैयार करना चाहते हैं। इस वजह से आपको इजतिमाई सीरत और इजतिमाई अख़लाक़ के लिहाज़ से बहुत ऊँचा और बरतर (श्रेष्ठ) देखना चाहते हैं। यह मक़सद उसी वक़्त हासिल हो सकता है जबकि आप एक जमाअती नज़्म और जमाअती डिसिप्लिन (अनुशासन) के तहत होकर यह दिखा दें कि आप आपस में एक-दूसरे से जुड़कर और मिलकर किस ख़ूबी के साथ एक मक़सद और नस्बुलऐन के लिए मार्च कर सकते हैं। आपको क़ियादत (रहनुमाई) और इताअत दोनों चीज़ों का गुर मालूम करना है और दोनों के तक़ाज़े पूरे के पूरे अदा करने हैं। आपमें से हर आदमी को अपनी रोज़-मर्रा की ज़िन्दगी में यह साबित करना है कि आप जमाअती मक़सद के लिए बड़ी से बड़ी क़ुरबानी कर सकते हैं, बड़ी से बड़ी बाज़ी खेल सकते हैं, अपने जान व माल और बाल-बच्चों के लिए बड़े से बड़ा ख़तरा मोल ले सकते हैं और नफ़्स की क़ुरबानी, नर्मी, ख़ाकसारी, मुहब्बत, हमदर्दी और ख़ैरख़ाही की बेहतरीन मिसाल पेश कर सकते हैं। इसमें ज़रा भी शक नहीं है कि दुनिया की दूसरी क़ौमें हमसे जिस मैदान में बाज़ी ले गई हैं वह यही मैदान है। हम शख़्सी और इनफ़िरादी (व्यक्तिगत) नेकियों में उनसे कम नहीं थे, बल्कि शायद उनसे बढ़-चढ़कर ही थे लेकिन जमाअती कैरेक्टर और जमाअती सीरत में उनसे बहुत पीछे थे जिसकी सज़ा हमें यह मिली है कि हम हर चीज़ में उनसे पीछे हो गए और बराबर पीछे होते चले जा रहे हैं, और मुसीबत पर मुसीबत यह है कि अब तक हमारे बहुत-से पढ़े-लिखे लोग भी हमारी बीमारी की जड़ तक नहीं पहुँचे। वे ख़ुद भी इस ग़लतफ़हमी में मुबतिला हैं (और दूसरों को भी इस ग़लतफ़हमी में डालना चाहते हैं) कि हमारी इस पस्ती (Downfall) में पूरा दख़ल दूसरे का है, न कि हमारा। वे समझते हैं कि मज़हब सिर्फ़ इनफ़िरादी (व्यक्तिगत) नेकियों की माँग करता है और वे इसको पूरा कर रहे हैं। इजतिमाई (सामूहिक) नेकियों के लिए उनके नज़दीक न मज़हब ने कोई ज़ाब्ता (नियम) बनाया है और न उसकी कोई माँग है, वह सिर्फ़ रोज़ा, नमाज़, हज और ज़कात के हुक्म देता है और इसी हद पर उसकी माँग ख़त्म हो जाती है। यह ख़्याल

बेशुमार ख़राबियों की जड़ है। इस चीज़ ने मुसलमानों के सारे दीनी तसव्वुर को ग़लत कर दिया है और उनको इस हद तक ला गिराया है जिसको आप देख रहे हैं। इस्लाम ने आपकी इनफ़िरादी ज़िन्दगी के लिए जिस तरह के हुक्म और क़ानून दिए हैं उसी तरह आपकी इजतिमाई ज़िन्दगी के लिए भी हुक्म और क़ानून दिए हैं। और जिस तरह आपकी इनफ़िरादी ज़िन्दगी के लिए एक अख़लाक़ी निज़ाम बनाया है उसी तरह आपकी इजतिमाई ज़िन्दगी के लिए भी एक अख़लाक़ी निज़ाम मुक़र्रर किया है और हर मुसलमान से उसकी पाबन्दी की माँग की है, और उसकी पाबन्दी न करने की सूरत में हममें से हर आदमी उसी तरीक़े से गुनहगार होता है जिस तरीक़े से इनफ़िरादी ज़िन्दगी के हुक्म और क़ानून या अख़लाक़ी निज़ाम को तोड़ने से होता है, बल्कि अगर मैं यह कहूँ तो शायद ग़लती नहीं करूँगा कि इजतिमाई हुक्म और क़ानून और इजतिमाई अख़लाक़ी निज़ाम की ख़िलाफ़वर्ज़ी करनेवाला अल्लाह और उसके रसूल की नज़रों में उससे कहीं ज़्यादा नफ़रत के क़ाबिल है जितना कि इनफ़िरादी ज़िन्दगी के हुक्म और क़ानून और अख़लाक़ी निज़ाम की ख़िलाफ़वर्ज़ी करनेवाला हो सकता है। क्योंकि जो शख़्स अपनी इजतिमाई ज़िन्दगी के दायरे में कोई कोताही या ग़लती या नाफ़रमानी करता है उसका नुक़्सान इससे कहीं ज़्यादा बड़ा और देर तक रहनेवाला होता है जितना कि किसी इनफ़िरादी (व्यक्तिगत) ज़िन्दगी के दायरे में ग़लती करनेवाले शख़्स का हो सकता है। यही वजह है कि जमाअती निज़ाम में ख़राबियाँ पैदा करनेवालों के लिए इस्लाम ने जो सज़ाएँ रखी हैं वह उससे कहीं ज़्यादा सख़्त हैं जो इनफ़िरादी ज़िन्दगी के आदाब और क़ानूनों में ख़राबियाँ पैदा करनेवालों के लिए रखी हैं। लेकिन एक ज़माने तक इजतिमाई ज़िन्दगी से अनजान रहने की वजह से आज हिन्दुस्तान के मुसलमान जमाअती अख़लाक़ और किरदार की अहमियत से इतना बेपरवाह हो गए हैं कि सिरे से उनकी नज़र में इसकी कोई मज़हबी हैसियत ही बाक़ी नहीं रह गई है और इस तरह की कोई ज़िम्मेदारी उनपर डाली जाती है तो वह इसको एक बोझ महसूस करते हैं, यहाँ तक कि कुछ ज़िम्मेदारियाँ अपने सिर लेकर फिर उनसे कतरा जाने को भी कोई ऐब नहीं महसूस करते। ज़ाहिर है कि जब तक हमारा यह हाल रहेगा उस वक़्त तक हमारी हैसियत फ़र्द-फ़र्द की है न कि जमाअत की, और इस सूरत में हमें बिल्कुल यह हक़ हासिल नहीं है कि हम अल्लाह तआला की उन नेमतों और बरकतों के उम्मीदवार हों जिनका वादा उस जमाअत से किया गया है जिसके अफ़राद अपने अन्दर बेहतरीन जमाअती सीरत और बेहतरीन

जमाअती अख़लाक़ रखते हों। आप अगर मुसलमानों को यह भूला हुआ सबक़ याद दिलाना चाहते हैं, उनको इनफ़िरादियत की इस ज़िल्लत से निकालकर वहदत और इजतिमाइयत की बुलन्दियों पर ले जाना चाहते हैं तो इसका सिर्फ़ एक तरीक़ा यही है कि हर जगह, हर वक़्त, हर आन आपकी जमाअती हैसियत नुमायाँ हो। आपके अफ़राद के अन्दर से ग़ुरूर, ख़ुदग़र्ज़ी, ख़ुदराई, ख़ुदपरस्ती और इस तरह की सारी बीमारियाँ निकल जाएँ और उनकी जगह क़ुरबानी, इख़लास, ख़ैरख़ाही और हमदर्दी के जज़्बात ले लें। सिर्फ़ यही रास्ता है जिसपर चलकर आप दुनिया और आख़िरत में इज़्ज़त हासिल कर सकते हैं और सिर्फ़ यही एक चीज़ है जिसके बल-बूते पर आप दुनिया की झूठी ताक़तों को हरा सकते हैं।

मैं इस सिलसिले में यह बात भी वाज़ेह कर देना चाहता हूँ कि जमाअती सीरत और जमाअती अख़लाक़ के जो अलफ़ाज़ मैं बार-बार बोल रहा हूँ उससे मेरी मुराद सिर्फ़ क़ौमी क़िरदार (National Character) नहीं है। बेशक इस चीज़ की भी एक ख़ास अहमियत है और कोई क़ौम इसके बिना अपनी जमाअती हस्ती बाक़ी नहीं रख सकती। लेकिन हम इससे कहीं ज़्यादा बुलंद और बेहतर चीज़ के लिए जिद्दोजुहद कर रहे हैं । हम उस जमाअती किरदार का आपसे मुतालबा कर रहे हैं जो इस्लाम ने उस शरई जमाअत के लिए ज़रूरी क़रार दिया है जिसको इस्लामी इस्तिलाह (परिभाषा) में 'अल-जमाअत' से ताबीर किया जाता है। यह चीज़ क़ौमी किरदार (National Character) से बहुत ऊँची है। क़ौमी किरदार से अगर एक महदूद (सीमित) सीमा के अन्दर कुछ भलाइयाँ और ख़ूबियाँ नज़र आती हैं तो एक वसीअ (फैली हुई) सीमा के अन्दर उसी से बहुत-सी ख़राबियाँ भी पैदा होती हैं। लेकिन हम जिस इजतिमाई सीरत को पैदा करने की कोशिश कर रहे हैं उससे सारे आलम के इनसानों के लिए सिर्फ़ भलाई ही भलाई पैदा हो सकती है।

इस फ़ितना व फ़साद से भरे ज़माने में जबकि कन्याकुमारी से लेकर कशमीर तक और बंगाल से लेकर सरहद तक हर जगह आग लगी हुई है, लोगों की इज़्ज़त व आबरू और जान व माल पर गुण्डों का राज है, हम सिर्फ़ इकट्ठा होने के लिए नहीं इकट्ठा हुए हैं, बल्कि हमारे सामने बहुत अहम मक़सद हैं जिनके लिए हमने ख़ुद भी यह तकलीफ़ उठाई है और आपको भी यह तकलीफ़ दी है। इस वजह से बहुत ज़रूरी है कि आप इस वक़्त की क़द्रो-क़ीमत को पहचानें और

अपनी सारी तवज्जोह असल मक़सद पर मरकूज़ (केन्द्रित) रखें।

इस वक़्त इस देश में जो हालात पैदा हैं उनपर आपको ग़ौर करके फ़ैसला करना है कि इन हालात में आपका रवैया क्या होना चाहिए। यह आपको मालूम है कि जो नाज़ुक हालात इस वक़्त पैदा हो गए हैं ये सरसरी और मामूली नहीं हैं, बल्कि इनके असबाब बहुत ही गहरे हैं। जो लोग यह समझते हैं कि ये गुण्डे और बदमाशों के पैदा किए हुए हैं और देर या सवेर ठीक हो जाएँगे, वे बहुत बड़ी ग़लतफ़हमी में पड़े हुए हैं। हमारे नज़दीक ये सारे हालात उस क़ौमियत की तालीम का फल हैं जिसको पैदा करने के लिए इस मुल्क के लीडरों ने जिद्दोजुहद की है, जिसके मानी ये हैं कि यह क़ौमियत का शऊर जितना ही मज़बूत और ताक़तवर होता जाएगा, उतना ही इस मुल्क में फ़साद के असबाब मज़बूत होते जाएँगे। और अगर इस क़ौमियत के फ़ल्सफ़े पर इस मुल्क में कोई इजतिमाई निज़ाम क़ायम हो गया तो वह इस मुल्क के लिए भी और सारी दुनिया के लिए भी एक फ़साद-भरा (Sediciously) और शैतानी निज़ाम (Satanic System) होगा और भविष्य में इससे जो ख़राबियाँ वुजूद में आएँगी आज आप उनका तसव्वुर भी नहीं कर सकते। इस वजह से आपको सिर्फ़ मौजूदा हँगामों और मौजूदा फ़सादों पर ही ग़ौर नहीं करना है, बल्कि आनेवाले फ़सादों और बुराइयों पर भी ग़ौर करना है और एक सोची-समझी हुई स्कीम (Scheme) के मुताबिक़ आपको इस तरह काम करना है कि फ़साद की जो फ़सल हमारे लीडरों के हाथों इस देश में बोई गई है वह बढ़ने और फलने और पकने से पहले लोगों में उसके ज़हर से भरे होने का यक़ीन पैदा हो जाए और साथ ही लोगों के सामने वह निजात का रास्ता (मुक्ति-मार्ग) भी आ जाए जिसपर आप चलने की दावत दे रहे हैं, ताकि वे लोग एक बेहतरीन बदल की हैसियत से उसे क़बूल कर सकें। अब हमारे प्रोग्राम का मुसबत (रचनात्मक) पहलू लोगों के सामने अच्छी तरह साफ़ होकर आ जाना चाहिए, ताकि लोग उसको सामने रखकर अपने इख़्तियार किए हुए तरीक़ों की ग़लतियों के और हमारे बताए हुए तरीक़े की ख़ूबियों की तुलना कर सकें। इस मक़सद के लिए ज़रूरी है कि मौजूदा फ़सादात से आप मायूस और बद-दिल न हों, बल्कि पूरी हिम्मत से इन हालात का मुक़ाबला करें। लोगों को उनकी हक़ीक़ी वजहों की तरफ़ तवज्जोह दिलाएँ और उनके सही इलाज से लोगों को आगाह करें। इसमें शक नहीं है कि तास्सुबात (जातीय पक्षपातों) के इस हँगामे में लोगों को किसी सही बात की तरफ़ ध्यान दिलाना कोई आसान काम नहीं रहा है, लेकिन सुधारकों की हर जमाअत को

इसी तरह के हालात के अन्दर सुधार की जानतोड़ कोशिश करनी पड़ती है। इस वक़्त अगर आप कमज़ोर पड़ गए तो याद रखिए कि आपके लिए काम का कोई और मौक़ा मिलने की उम्मीद नहीं है और बहुत जल्द फ़साद का यह मादा इस मुल्क में ऐसी जड़ पकड़ लेगा कि उसका उखाड़ना नामुमकिन हो जाएगा और साथ ही साथ आपके लिए भी अपने उसूलों के साथ ज़िन्दगी गुज़ारने का कोई मौक़ा बाक़ी नहीं रह जाएगा।

बहरहाल, यह वक़्त आपके लिए एक फ़ैसलाकुन वक़्त है। या तो आप हालात के आगे हथियार डाल दें और इस दावत से, जिसको लेकर आप उठे थे, अलग हो जाएँ या फिर अपनी पूरी ताक़त के साथ मैदान में आ जाएँ और एक-एक शख़्स के सामने उस फ़िक्र और फ़ल्सफ़े की ग़लतियाँ ज़ाहिर कर दें जिसकी दावत हमारे इस मुल्क के लीडर अब तक देते रहे हैं और जिसके नतीजे अब सामने आ चुके हैं।

मैं इस मौक़े पर यह बात साफ़ कर देना चाहता हूँ कि इस वक़्त इस काम के सिलसिले में आपको सिर्फ़ अल्लाह की मदद और अपनी सीमित ताक़त और सकत ही पर भरोसा करना है। इस मुल्क की जमाअतों में से कोई जमाअत भी ऐसी नहीं है जिससे इस मक़सद के लिए कोई मदद मिलने की उम्मीद हो। सबसे ज़्यादा जिस क़ौम से मदद मिलने की उम्मीद हो सकती थी वह मुसलमानों की क़ौम थी। लेकिन मैं बहुत ही सफ़ाई के साथ यह वाज़ेह कर देना चाहता हूँ कि मुसलमानों से न सिर्फ़ यह कि किसी मदद की आपको उम्मीद नहीं रखनी चाहिए, बल्कि उनकी तरफ़ से सख़्त रुकावट और मुख़ालफ़त के लिए तैयार रहना चाहिए।

हालात का जो फ़ल्सफ़ा आज इस मुल्क के ग़ैर-मुस्लिम क़ौमों पर छाया है, ठीक वही फ़ल्सफ़ा मुसलमानों पर भी हावी है और प्रोपगण्डा की ताक़त से इस जाहिली फ़ल्सफ़ा को जनता के अन्दर एक दीन (धर्म) बना दिया गया है जिसके ख़िलाफ़ कुछ सुनने के लिए आपको मुश्किल ही से कोई आदमी तैयार नज़र आएगा। इस तवज्जोह से अपने फ़र्ज़ को पूरा करते हुए आपको ख़ुदा के सिवा और किसी दूसरे से उम्मीद नहीं रखनी चाहिए ताकि आपको मायूसी का ग़म न उठाना पड़े। लेकिन ख़ुदा की मदद सिर्फ़ एक ख़्याली चीज़ नहीं है, बल्कि एक हक़ीक़त है। अल्लाह तआला हर नेक मक़सद की मदद करता है और जब वह मदद करता है तो सारी मुश्किलें आसान हो जाती हैं। आपको भी उम्मीद

रखनी चाहिए कि उसकी मदद से आपकी मुश्किलें आसान होंगी और इस मुल्क के अन्दर ख़ुदा के ऐसे बन्दे मिलेंगे जो आपकी बात सुनेंगे और समझेंगे, और अगर यह सरज़मीन ऐसी ही बंजर हो चुकी है कि इसके अन्दर हक़ के बीज बोने की कोई सलाहियत बाक़ी न रह गई है तो आपके लिए कोई शर्मिन्दगी की वजह नहीं है, क्योंकि अगर आप ख़ुलूस और नेक नीयती के साथ अपने काम में लगे रहे और मुख़ालफ़तों और मुज़ाहमतों (अवरोधों) से मुतास्सिर न हुए तो क़ियामत के दिन अल्लाह तआला के सामने आपकी कामयाबी को कोई छीन नहीं सकता।

दुनिया में कुछ चीज़ें गज़ से नापी जाती हैं और कुछ चीज़ें पैमाने से नापी जाती हैं, लेकिन लोगों और जमाअतों को जाँचने की कसौटी वह अक़ीदा होता है जिसका वे एलान करती हैं। आपने भी एक वाज़ेह (स्पष्ट) अक़ीदा का दुनिया के सामने एलान किया है और दुनिया आपको इसी अक़ीदे से जाँचे और परखेगी। अब यह देखा जाएगा कि आपने इस अक़ीदा के लिए कितनी क़ुरबानियाँ की हैं, मुश्किलों में इसपर कितनी मज़बूती दिखाई है, इसके लिए कितने ख़तरों का मुक़ाबला किया है और इसके इश्क़ में क्या-क्या बाज़ियाँ खेली हैं। अगर इस एतिबार से आपका कोई वज़न हो तो दुनिया में भी आपका एक मक़ाम है और आख़िरत में भी आपका एक दर्जा है। लेकिन अगर इस लिहाज़ से आप बोदे और नाकाम साबित हुए तो न दुनिया में आपके लिए कोई जगह है और न आख़िरत में आपके लिए कोई दर्जा है। यह मुमकिन है कि आप अपने ही फ़रेब में पड़कर ख़ुद को कोई बड़ी चीज़ समझ बैठें और कुछ न करने के बावजूद यह समझने लगें कि आपने बहुत कुछ कर लिया है। लेकिन पूरी दुनिया को आप धोखा नहीं दे सकते। और अगर दुनिया को धोखा दे सकते हैं तो ख़ुदा को किसी हाल में धोखा नहीं दे सकते। दुनिया और ख़ुदा की तरफ़ से आपको वही बदला मिलेगा जिसके सही मानो में आप हक़दार होंगे, न कि जिसका दावा करेंगे। मुझे इस मौक़े पर इमाम अहमद बिन हम्बल (रह०) और मशहूर डाकू अबू अल-हशीम का वाक़िआ याद आ गया जो इतिहास में दर्ज है और जिसको आपने भी शायद पढ़ा हो। इमाम अहमद बिन हम्बल (रह०) जैसे बड़े और मशहूर मुहद्दिस ने चोर की अज़ीमत (मज़बूती) से सबक़ हासिल किया और इस सबक़ के लिए उसके ज़िन्दगी भर शुक्रगुज़ार रहे क्योंकि हक़ीक़त में आदमी का असली जौहर वह मज़बूती और जमाव है जो वह अपने पेशेनज़र मक़सद के लिए रुकावटों के मुक़ाबले में दिखाता है। अगर एक इनसान एक झूठे मक़सद के लिए सच्चा इरादा और हौसला रखता है तो वह भी उस आदमी के मुक़ाबले में क़द्र के

क़ाबिल है जो दावा तो एक सच्चे मक़सद का करता है लेकिन उसके लिए क़ुरबानी का कोई जज़्बा नहीं रखता।

वफ़ादारी बशर्ते उस्तवारी ऐन ईमाँ है
मरे बुतख़ाने में तो काबा में गाड़ो ब्रह्मण को

अब मैं अपनी इस इफ़तिताही तक़रीर को ख़त्म करता हूँ और आपको दावत देता हूँ कि इन कामों को सामने रखकर इस इजतिमा की कार्रवाई शुरू कीजिए। अल्लाह तआला हमारी मदद फ़रमाए और हमें सीधे रास्ते पर चलने की हिदायत दे।

अब आपको सैयद मुहम्मद हाशिम साहब, नायब क़ैय्यिम, जमाअत की सालाना रिपोर्ट सुनाएँगे। इसे आप पूरे ध्यान से सुनिए ताकि आपको जमाअत के सालभर के काम की तफ़सील मालूम हो और आइन्दा हमारे काम के तरीक़े और रफ़तार का सही अन्दाज़ा करने में आसानी हो।

इसके बाद सैयद मुहम्मद हाशिम साहब ने जमाअत की सालाना रिपोर्ट पेश की जो टोंक के इजतिमा में पेश की जानेवाली रिपोर्ट की नक़ल थी और चूँकि टोंक की रूदाद में वह ऊपर दर्ज हो चुकी है इसलिए उसे यहाँ दोबारा दर्ज करने की ज़रूरत नहीं।

रिपोर्ट के बाद यह इजलास तक़रीबन साढ़े ग्यारह बजे दोपहर ख़त्म हुआ।

दूसरा इजलास (बैठक)

25 अप्रैल 1947 ई०, ज़ुह से अस्र तक

यह भी खुला इजलास था और हाज़िर लोगों की तादाद 400 (चार सौ) के क़रीब थी। इसमें पूर्वी हिन्दुस्तान के हलक़ावार क़ैय्यिम साहिबान ने अपने-अपने हल्क़े की सालाना रिपोर्ट नीचे लिखी तरतीब से पेश की—

1. रिपोर्ट हल्क़ा शाहजहाँपुर (उत्तर-पश्चिमी यू०पी०)	मौलवी हामिद अली साहब क़ैय्यिम हल्क़ा
2. रिपोर्ट हल्क़ा अवध	चौधरी शफ़ी अहमद साहब क़ैय्यिम हल्क़ा
3. रिपोर्ट हल्क़ा इलाहाबाद (दक्षिण-पूर्वी यू०पी०)	हकीम मुहम्मद ख़ालिद साहब क़ैय्यिम हल्क़ा

4. रिपोर्ट हल्क़ा सूबा बंगाल	सैयद क़ुरअतुलऐन साहब क़ाइम मक़ाम क़ैय्यिम हल्क़ा
5. रिपोर्ट हल्क़ा सूबा बिहार	मुहम्मद हसनैन सैयद साहब क़ैय्यिम हल्क़ा

इन रिपोर्टों को सुनने के बाद मौलाना अमीन अहसन इस्लाही साहब ने उनपर तबसिरा किया जिसमें उन कामों मे मुताल्लिक़ ज़रूरी हिदायतें दीं जो उन रिपोर्टों से सामने आए थे।

मौलाना की यह तक़रीर इस तरह है—

जमाअत के साथियो! अलग-अलग हल्क़े के क़ैय्यिम साहिबान ने जो रिपोर्ट पेश की हैं वह आप सुन चुके हैं। अब मुझे मुख़्तसर तौर पर इन रिपोर्टों पर कुछ तबसिरा (टिप्पणी) करना है। ख़ुदा का शुक्र है कि ये रिपोर्टें फालतू और ग़ैर-ज़रूरी बातों से एक हद तक पाक होने लगी हैं और इनमें सिर्फ़ वही बातें बयान की जाती हैं जिनको हम मालूम करना चाहते हैं। यह कोशिश अभी जारी रहनी चाहिए यहाँ तक कि इन रिपोर्टों में एक लफ़्ज़ भी ऐसा न हो कि जिसको हम ग़ैर-ज़रूरी और बेकार कह सकें।

जिन हालात व मुश्किलात की तरफ़ क़ैय्यिम साहिबान ने तवज्जोह दिलाई है, उनमें कोई बात भी नई नहीं है जिसपर इस वक़्त कुछ कहने की ज़रूरत हो। पिछले इजतिमाआत में ये बातें बार-बार आ चुकी हैं और उनके बारे में ज़रूरी मशविरे भी दिए जा चुके हैं। सिर्फ़ कुछ बातें मुझे आपके सामने अर्ज़ करनी हैं।

हमदर्दों से ख़िताब

आपमें से जो हज़रात इलाहाबाद के इजतिमा के मौक़े पर मौजूद रहे होंगे उन्हें याद होगा कि मैंने वहाँ जमाअत के हमदर्दों के सामने कुछ बातें रखी थीं। इस वक़्त मैं फिर उनको ध्यान दिलाने की ज़रूरत समझता हूँ और उनसे दरख़ास्त करता हूँ कि वे सिर्फ़ हमदर्दों के हल्क़े पर मुत्मइन होकर न रह जाएँ। मैं देख रहा हूँ कि दिन-ब-दिन यह हल्क़ा फैलता जा रहा है और इसमें नई-नई इस्तिलाहें पैदा होती चली जा रही हैं, जैसे—हमदर्दे ख़ास और हमदर्दे आम और क़रीबी हमदर्द वग़ैरह— मैं इस चीज़ को पसन्द नहीं करता कि यह हल्क़ा ज़्यादा फैले और लोग इसको जमाअत के तहत एक निज़ाम (System) समझकर दावत की असली ज़िम्मेदारियों से बचने के लिए एक पनाहगाह बना लें। हमारे निज़ाम

में कुछ मस्लिहतों की वजह से यह शोबा (Department) मौजूद ज़रूर है लेकिन इसको उन्हीं लोगों को पनाहगाह बनाना चाहिए जो लोग सही मानो में अपने सामने कोई बड़ी मजबूरी रखते हैं, न कि वे लोग इसकी आड़ में छिपने की कोशिश करें जिनकी मुश्किलें मामूली अज़्म और हिम्मत से दूर हो सकती हैं।

आज सुबह की इफ़तिताही तक़रीर (Inaugural Speech) में मैं साफ़ कर चुका हूँ कि हमारे और आपके लिए एक फ़ैसले की घड़ी आ गई है, अब हमें या तो हालात के सामने झुकना पड़ेगा या उनका मुक़ाबला करना होगा। इस फ़ैसले में अब हमारे लिए ज़्यादा इन्तिज़ार की गुंजाइश नहीं है। हालात जिस तेज़ी के साथ बदल रहे हैं उसका तक़ाज़ा है कि हम जल्द से जल्द यकसू होकर एक राह इख़तियार कर लें। अगर हमने इसमें देर लगाई तो डर है कि बजाय इसके कि हालात पर हम क़ाबू पाएँ, हालात हम पर क़ाबू पा लेंगे। इस फ़ैसलाकुन घड़ी में जिस तरह हम अपने तमाम ज़रिये और साधनों का जाइज़ा ले रहे हैं उसी तरह हम अपने हमदर्दों का भी जाइज़ा ले रहे हैं कि उनकी हमदर्दियाँ किस तरह की हैं और वह पेश आनेवाले हालात के अन्दर किस हद तक हमारा साथ दे सकेंगे। इस वजह से ज़रूरी है कि हमारे सारे हमदर्द अपने आपको एक बार और तौलकर देख लें कि इन राह की मुश्किलों के लिए उनकी हिम्मतों का क्या हाल है।

मेरे इन अलफ़ाज़ से आपको यह बदगुमानी न हो कि अब हम जमाअत के अरकान की तादाद बढ़ाने की फ़िक्र में पड़ गए हैं। हमें अपने आस-पास कोई भीड़ इकट्ठा करने की ख़ाहिश नहीं है। हम उन तरीक़ों से अनजान नहीं हैं जिन तरीक़ों से भीड़ इकट्ठी की जा सकती है, लेकिन हम उन तरीक़ों में से कोई तरीक़ा नहीं अपनाएँगे। हमें सिर्फ़ उन नेक लोगों की ज़रूरत है जो हमारे पेशे-नज़र मक़सद के लिए सही तौर पर जिद्दोजुहद कर सकें। इस वजह से हम यह नहीं चाहते कि हमारे इस ध्यान दिलाने से आप भागकर जमाअत में दाख़िल ही हो जाएँ। बल्कि अपनी हिम्मत और अपने इरादे को अच्छी तरह तौलकर आएँ, और अगर दिल गवाही न दे तो ख़ामख़ाह जमाअत में आने की कोशिश न करें।

हमारे क़ैय्यिम साहिबान का फ़र्ज़ है कि वे अपने-अपने हलक़े के हमदर्दों को टटोलकर अच्छी तरह देखें। अगर उनमें से ऐसे लोग मौजूद हों जो जमाअत के काम को अरकान की तरह पूरा कर रहे हों या अरकान से भी ज़्यादा जोश व सरगर्मी अपने अन्दर रखते हों और सिर्फ़ बिना ज़रूरत इंकिसारी (विनम्रता)

की वजह से जमाअत के निज़ाम से अलग हों, उनको जमाअत में दाख़िल होने का मशविरा दें ताकि जमाअत की ताक़त बढ़े और वे काम शुरू हो सकें जो जमाअत की ताक़त कम होने की वजह से अब तक शुरू नहीं हो सके हैं। हमारे हमदर्दों को यह बात भूलनी नहीं चाहिए कि न तो हम उनपर कोई ज़िम्मेदारी डाल सकते हैं और न बड़े इक़दाम के सिलसिले में उनपर भरोसा कर सकते हैं। इस वजह से नहीं कि उनकी हमदर्दी या ख़ैरख़ाही में हमें कोई शक है, बल्कि इस वजह से कि यह चीज़ हमारे जमाअत के नज़्म के ख़िलाफ़ है। फिर यह बात भी कुछ अच्छी नहीं मालूम होती कि जिस दीने हक़ के साथ हमारा ताल्लुक़ ख़िदमत, इताअत और जाँबाज़ी का होना चाहिए उसके साथ हमारा ताल्लुक़ सिर्फ़ हमदर्दी का हो। मुझे तो इस लफ़्ज़ के अन्दर से कुछ कराहत (नापसन्दीदगी) की बू नज़र आती है। ख़ुदा करे कि आप भी इस बू को महसूस करने लगें।

अवामी लिट्रेचर की ज़रूरत

कुछ रिपोर्टों में अवामी लिट्रेचर की ज़रूरत पर बहुत ज़्यादा ध्यान दिलाया गया है और मर्कज़ से माँग की गई है कि अवामी लिट्रेचर तैयार करें। इसमें शक नहीं है कि इस चीज़ की हमारे यहाँ एक हद तक कमी है जिसको पूरा करने की बहुत ज़रूरत है। लेकिन आपको सारा भरोसा लिट्रेचर पर ही नहीं करना चाहिए। लिट्रेचर की तैयारी का काम हो रहा है और धीरे-धीरे होता रहेगा। इसके इन्तिज़ार में आपको दावत का काम रोकना नहीं चाहिए। आपको देहातों और शहरों में लोगों के पास ख़ुद जाना चाहिए। उनके साथ अपने ताल्लुक़ात बढ़ाइए, उनसे बात-चीत कीजिए और अपनी दावत उनके कानों तक ख़ुद पहुँचाइए। लोगों के अन्दर काम करने के लिए जिस चीज़ की सबसे ज़्यादा ज़रूरत थी वह यह कि समझदार और नेक लोगों की एक जमाअत तैयार हो जाए। ख़ुदा के फ़ज़्ल से यह जमाअत अब तैयार हो गई है। हालाँकि इसकी तादाद अभी कम है लेकिन फिर भी आपके अरकान और हमदर्द इतनी तादाद में मौजूद हैं कि अगर आप अवाम के अन्दर घुसना चाहें तो घुस सकते हैं और लिट्रेचर की मदद के बग़ैर इस दावत को फैला सकते हैं।

अवाम के लिए जिस तरह के आसान और सरल लिट्रेचर का आप मुतालबा करते हैं उनकी तैयारी में देर लगेगी और उसके बावजूद भी शायद वह लिट्रेचर अवाम के अन्दर दावत के लिए काफ़ी न हो सके । यह काम तो बस आपके मिलने-जुलने और बातचीत और तक़रीरों से होगा। इस वजह से बहुत ज़रूरी है

कि अपने अन्दर मिशनरी स्प्रिट (Missionary Sprit) पैदा कीजिए और देहातों में निकलकर और तकलीफ़ें उठाकर इस काम को शुरू कीजिए। अब वक़्त तो वह आ गया है कि हममें से हर शख़्स को सिर्फ़ इसी काम का इश्क़ और सौदा हो, बाक़ी ज़िन्दगी के सारे काम ज़िमनी होकर रह जाएँ। हर जगह, हर वक़्त और हर मजलिस में इसी चीज़ का चर्चा और इसी बात की दावत हो। यहाँ तक कि थोड़े दिनों के अन्दर इस मुल्क का कोई कोना इस दावत से अनजान न रह जाए।

तालीमे बालिग़ान (प्रौढ़ शिक्षा)

तालीमे बालिग़ान के सिलसिले में तक़रीबन हर रिपोर्ट में मायूसी का इज़हार किया गया है। पहले तो इस सिलसिले में काम ही बहुत कम हो रहा है। दूसरे जो कुछ हो रहा है वह इतमीनान के क़ाबिल नहीं है। यह शिकायत आम तौर पर की गई है कि ख़ुश्क और बे-मज़ा होने की वजह से न तो कारकुनों का इसमें जी लगता है और न पढ़नेवाले ही इसकी तरफ़ कुछ आगे बढ़ते हैं। जहाँ तक इस काम के ख़ुश्क और बे-मज़ा होने का ताल्लुक़ है इसे हम भी मानते हैं, यह बड़ी पित्तामारी का काम है, लेकिन इसके फ़ायदों और नतीजों को ग़ैर-मामूली अहमियत की वजह से इसको इख़्तियार किया गया है। यह काम इस वजह से नहीं करना है कि यह मज़ेदार और दिलचस्प है, बल्कि इसलिए करना है कि हमारी दावत के लिहाज़ से बहुत ज़रूरी है।

तालीमे बालिग़ान से हमारा मक़सद सिर्फ़ यह नहीं है कि हर शख़्स कुछ पढ़ना-लिखना, कुछ हिसाब व जुग़राफ़िया (Geography)जान ले, बल्कि अनपढ़ लोगों के अन्दर सही फ़िक्र, सही तालीम और दीन की सही समझ व शऊर पैदा करना है। यह चीज़ पैदा करने की कोशिश कीजिए। जिन लोगों के अन्दर दीन की तलब एक हद तक पैदा हो जाएगी, उनके अन्दर कुछ पढ़ने-लिखने का शौक़ भी पैदा हो जाएगा। मेरा ख़्याल है कि अब आप लोगों को इस रास्ते से पढ़ने-लिखने की तरफ़ माइल करने की कोशिश करें। इस सिलसिले में किसी एक क़ायदे और तरीक़े पर जम जाना ग़लत होगा। आपमें हर शख़्स अपने हालात और अपने माहौल के लिहाज़ से कोई उचित तरीक़ा अपना सकता है। मैंने जो मशविरा आपको दिया है उसपर अमल करने से इनशा-अल्लाह बहुत-से लोगों को पढ़ने-लिखने की ख़ाहिश होगी और न भी हो जब भी यह बात कुछ कम नहीं है कि आप लोगों के अन्दर दीन का कुछ शऊर पैदा कर दें। आप लोगों

के अन्दर उस दीन का शऊर पैदा कीजिए जिस दीन को वह मानते हैं। यह शऊर जिस रफ़तार से पैदा होता जाएगा उसी रफ़तार से इनशा-अल्लाह लोगों में दीन के तफ़सीली इल्म का शौक़ भी पैदा होता जाएगा और वे ख़ुद आप से आप माँग करने लगेंगे कि आप उनको पढ़ने-लिखने का तरीक़ा बताएँ ताकि दीन को जानने का रास्ता वे अपने लिए ख़ुद खोल लें।

अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करना

रिपोर्टों में ख़र्च करने के जज़्बे की कमी की भी एक आम शिकायत है। इसमें शक नहीं है कि इस जज़्बे की हमारे अरकान के अन्दर कमी है, लेकिन अलहम्दुलिल्लाह, मायूसी की कोई वजह नहीं है। हमारे अरकान को यह बात याद रखनी चाहिए कि इस वक़्त हमारे सामने बहुत ज़रूरी और अहम काम हैं और उन सारे कामों को हमें अपने ही सरमाये से अंजाम देना है। हम अपने किसी काम के लिए भी कोई आम अपील नहीं कर सकते। अभी-अभी बिहार के सिलसिले में आपने तक़रीबन 30 हज़ार की रक़म जमा की है जिसके लिए हमने अपनी तमाम शाखों और हमदर्दों को ख़त भेज दिए थे। यही तरीक़ा हम अपने सारे कामों के लिए पसन्द करते हैं। आगे हमारे सामने मर्कज़ की तामीर (Construction) का मसला है। इसी तरह पंजाब में भी हमें रिलीफ़ का काम करना है। इन सारे कामों के लिए पैसों की ज़रूरत है, और ये पैसे हमें आप ही से हासिल करना है। इसी तरह तालीमगाह (School) के लिए भी एक बड़ी रक़म की ज़रूरत है। अब आप ख़ुद फ़ैसला कर सकते हैं कि इन सारे कामों को पूरा करने के लिए कितनी हिम्मत और कितनी फ़ैयाज़ी (दानशीलता) की ज़रूरत है। आपमें से हर आदमी को अपनी कमाई का एक हिस्सा ख़ास करना चाहिए और दूसरे हमदर्दों और साथियों को भी इसके लिए उभारना चाहिए। अगरचे आपकी तादाद थोड़ी है और आपकी माली हालत भी बहुत कमज़ोर है, लेकिन अगर आप सच्चे जोश और जज़्बा के साथ ख़ुदा के दीन की मदद करेंगे तो आपके माल में भी बरकत होगी और उस काम में भी बरकत होगी जो इस माल से पूरा होगा, और यही इनफ़ाक़ है जो आपके अन्दर अल्लाह के एतिमाद को भी मज़बूत करेगा जिसकी मदद से आप आइन्दा दीन के बड़े-बड़े काम पूरे कर सकेंगे। यह बात याद रखिए कि जो लोग किसी सच्चे मक़सद का दावा करते हैं और फिर उसके लिए माल ख़र्च नहीं करते वह लाज़िमन मुनाफ़क़त में पड़े जाते हैं। मैं अल्लाह तआला से दुआ करता हूँ कि वह हममें से हर आदमी को इस

बीमारी से बचाए रखे।

मैं इस वक़्त ये बातें कहते हुए किसी क़द्र दिल पर बोझ महसूस कर रहा हूँ कि ऐसा न हो कि कहीं आपको ख़्याल हो कि मैं कोई अपील कर रहा हूँ। इस गुज़ारिश का मक़सद कोई अपील नहीं है, बल्कि यह है कि आपमें अपने जमाअती मक़सदों का ऐसा पक्का और मज़बूत एहसास पैदा हो जाए कि आगे फिर किसी अपील की ज़रूरत ही बाक़ी न रहे और आपके क़ैय्यिम साहिबान को इस मामले में आपसे कोई शिकायत पैदा न हो।

दूसरों के क़ायम किए हुए इदारों (संगठनों) से हमारा ताल्लुक़

दूसरों के क़ायम किए हुए इदारों से ताल्लुक़ पैदा करने में हमारे अरकान को उतावले नहीं होना चाहिए। जहाँ हमें बिना किसी रुकावट के अपने मक़सद को पूरा करने का मौक़ा मिल रहा हो वहाँ हमें फ़ायदा उठाने से परहेज़ नहीं करना चाहिए, लेकिन जहाँ इस बात का डर हो कि हम आज़ादी से काम नहीं कर सकेंगे, वहाँ कोई ज़िम्मेदारी क़बूल करने से बचना चाहिए। अगर कोई इदारा खुले दिल से बिना किसी क़ैद और शर्त के आपके हवाले न किया गया हो तो वहाँ न आप अपना काम कर सकेंगे और न दूसरों का काम होगा। इस वजह से अच्छा यही है कि आप ऐसे इदारों की ज़िम्मेदारियाँ क़बूल न करें। अब हमारी तहरीक (Movement) इस स्टेज (Stage) पर पहुँच गई है कि वहाँ हमारे सामने बहुत-से इदारों और औक़ाफ़ की तरफ़ से पेशकश होंगी लेकिन हमें उनको क़बूल करने में जल्दबाज़ नहीं होना चाहिए, बल्कि पूरी एहतियात के साथ अपने मक़सद को ध्यान में रखकर उनको क़बूल करना चाहिए या रद्द करना चाहिए। हमें हर शख़्स के सामने साफ़-साफ़ यह बता देना चाहिए कि हम उन्हीं लोगों की पेशकश क़बूल करते हैं जो हमारे ऊपर पूरा भरोसा रखते हों और उस मक़सद को सही समझते हों जिसके लिए हम जिद्दोजुहद कर रहे हैं। इसके अलावा हम कोई पेशकश न क़बूल करते और न उसके लिए अपने दिल के किसी कोने में कोई लालच रखते हैं। हमें इतमीनान है कि अल्लाह तआला इस काम की, जिसे हम कर रहे हैं, ख़ुद मदद करेगा और हमारे लिए उसकी मदद काफ़ी है।

इस तक़रीर के बाद यह इजलास अस्र की नमाज़ के लिए बरख़ास्त हुआ और फिर मग़रिब तक वक़्फ़ा (विराम) रहा।

तीसरा इजलास

25 अप्रैल, बाद नमाज़ मग़रिब

यह इजलास आम ख़िताब के लिए रखा गया था। अगरचे एलान न हो सकने की वजह से बहुत कम लोगों को इसकी ख़बर हो सकी लेकिन फिर भी आनेवालों की तादाद एक हज़ार के क़रीब पहुँच गई। इस इजलास में मलिक नसरुल्लाह ख़ाँ साहब ने ख़िताब किया। तक़रीर का ख़ुलासा यह है—

1. अल्लाह तआला का लाख-लाख शुक्र है कि उसने हमें मुसलमान पैदा किया और ऐसे वक़्त में दुनिया में भेजा जबकि दीन क़ायम करने की दावत उठ चुकी है और हमें उसपर लब-बैक कहने की तौफ़ीक़ बख़्शी। अल्लाह तआला की इस बेहिसाब नेमत का शुक्रिया हमपर लाज़िम है और हमपर यह ज़िम्मेदारी आती है कि अपनी सारी ताक़तें और क़ाबिलियतें, ज़रिये और वसीले (साधनों), जो भी हमें हासिल हैं उसके दीन की इक़ामत और सरबुलन्दी के लिए वक़्फ़ कर दें।

2. कायनात (सृष्टि) की सारी गवाहियाँ, दुनिया की दलीलें और ज़मीन और आसमान की सारी चीज़ें और क़ौमों की आपसी अनुकूलता और व्यवहार और आपसी तालमेल व सहयोग और मदद यह साफ़ तौर पर बता रहे हैं कि इन सबका एक पैदा करनेवाला और इन्तिज़ाम चलानेवाला है और ये सब एक ही निज़ाम और एक ही फ़रमाँरवा के हुक्म के तहत चल रहे हैं।

सारे इनसान एक ही ख़ानदान और बिरादरी के लोग हैं। यह ज़ात-पात की बिना पर ऊँच-नीच ग़लत और ग़ैर-फ़ितरी है और इसके लिए कोई अक़्ली दलील मौजूद नहीं।

और हर मुल्क और हर क़ौम और हर ज़माने में बुनियादी अख़लाक़ की बराबरी इस बात पर गवाह है की हिदायत (मार्गदर्शन) का स्रोत (सरचश्मा) हर जगह और हर ज़माने में एक ही रहा है और उसने सारे लोगों को एक ही तालीम दी है।

इनसानों के लिए सही रास्ता यही है कि वे अपने निज़ामे ज़िन्दगी (जीवन-व्यवस्था) को कायनात (सृष्टि) के मजमूई (सामूहिक) निज़ाम के साथ मिलाने की कोशिश करें, इनसान और इनसान की रंग, नस्ल और ज़ात-पात की बिना पर ऊँच-नीच को ख़त्म करके एक आलमगीर इनसानी बिरादरी बनाएँ और

उसी स्रोत की तरफ़ हिदायत और रहनुमाई के लिए रुजूअ करें जो सबके लिए एक ही आलमगीर तालीम और निज़ामे ज़िन्दगी (जीवन-व्यवस्था) रखता है।

इतिहास गवाह है कि जब भी इनसानों के किसी गिरोह ने ख़ुद ज़िन्दगी का रास्ता अपनाया और अल्लाह के बन्दों को इस तरफ़ बुलाया, यह दुनिया जन्नत बन गई। सारे नबी (अलैहि०) यही मिशन लेकर दुनिया में आते रहे और मुस्लिम उम्मत के दुनिया में भी भेजे जाने का यही मक़सद है, और अगर इस उम्मत से ताल्लुक़ रखनेवाले लोग इस मिशन (इक़ामते दीन) से ग़फ़लत और बेपरवाही बरतें तो यह असल में ख़ुदा पर उनके ईमान के पक्के होने और उसके सामने जवाबदेही के एहसास की कमी का नतीजा है। इसलिए हमारा पहला फ़र्ज़ यही है कि अपने भाइयों को इस तरफ़ तवज्जोह दिलाएँ।

3. कुछ लोगों का ख़्याल है कि यह काम बहुत मुश्किल है और इस वक़्त इसके कामयाब होने की उम्मीद नहीं। सबसे पहले तो जो लोग इस दुनिया को दीने हक़ और इनसानी ज़िन्दगी के लिए एक ही सही रास्ता समझकर उसपर ईमान लाए हों उनके लिए इसका सवाल ही पैदा नहीं होता कि यह मुश्किल है या आसान, उनको तो हर हाल में इसपर चलना है। रहे वे लोग जो इसके आसान और मुश्किल होने की बहस में पड़े हुए हैं, उनके बारे में चाहे वे उसे कितना ही बुरा समझें, साफ़ बात यह है कि वे इस दीन से सिर्फ़ आबाई तास्सुब की वजह से चिपटे हुए हैं, वरना न यह उनका दीन है और न उसपर ईमान रखते हैं। ज़ाहिर है कि एक ऐसी बात को जिसपर अमल करना मुमकिन न हो जिहालत भी है और बेवक़ूफ़ी भी और अगर इन दोनों बातों में से कोई नहीं तो फिर यह खुली हुई मुनाफ़िक़त है।

वाक़िआ यह है कि दुनिया के फ़ज़ूल से फ़ज़ूल और ग़लत से ग़लत मसलक पर अमल मुमकिन और आसान हैं, शर्त यह है कि उसके पीछे कुछ इरादे के पक्के और बात के सच्चे लोगों की जमाअत मौजूद हो, और अगर यह चीज़ हासिल न हो सके तो दुनिया का अच्छे से अच्छा और सही से सही मसलक (a rule of conduct) पर भी अमल नामुमकिन और मुश्किल बन जाता है। यही दूसरी शक्ल इस वक़्त इस्लाम के सामने है। वरना आख़िर इस्लाम जो दीने फ़ितरत और दुनिया की सारी मुमकिन भलाइयों और ख़ूबियों का मजमूआ (समाहार) है, इसपर अमल नामुमकिन होने की कोई वजह हमारी समझ में नहीं आती। क्या लोग शराफ़त, सच्चाई, इमानदारी, अद्लो-इनसाफ़, रहम

और पाकदामनी और नफ़्स की पाकीज़गी के बजाय अपनी ज़िन्दगी के निज़ाम को बदमाशी, झूठ, फ़रेब, नाइनसाफ़ी, ज़ुल्म और बेहयाई की बिना पर तामीर करना चाहते हैं? अगर ऐसा नहीं और यक़ीनन नहीं है तो फिर दीने-हक़ का क़ियाम क्यों मुश्किल है? जो लोग ऐसा कहते हैं उनको इस्लाम को अपना कहने का कोई हक़ नहीं है। वे इस्लाम के जिस्म पर एक काला धब्बा हैं, उन्हें चाहिए कि अपनी राय बदलें या इस्लाम से अपना यह नाता तोड़ लें, क्योंकि ऐसा नाता न उन्हें दुनिया में कोई फ़ायदा दे रहा है और न आख़िरत में उससे कुछ हासिल होगा, बल्कि क़ुरआन के शब्दों में 'उन्हें दुनिया व आख़िरत के घाटे से दोचार करेगा।'

4. कुछ लोग यह कहते हैं कि दीन के क़ियाम के आग़ाज़ से पहले ज़मीन का एक टुकड़ा हासिल कर लेना ज़रूरी है जहाँ दीन को बरपा कर सकें। हैरत है कि यह चीज़ बड़े समझदार और ज़ाहिर में माक़ूल (योग्य) और आलिमे दीन लोगों तक की तरफ़ से कही जाती है। ऐसी बातें वही लोग कह सकते हैं जो या तो राजनीति और इजतिमा के फ़लसफ़े (समाज-दर्शन) से पूरी तरह नावाक़िफ़ हैं और सिर्फ़ इधर-उधर से कुछ बातें और नारे सुन-सुनाकर सियासी तहरीकों में शामिल हो गए हैं और कोई और समझदार आदमी मौजूद न होने की वजह से लीडरी के मक़ाम को पहुँच गए हैं, या फिर नफ़्सपरस्ती में पड़कर ख़ुदा के ख़ौफ़ से आज़ाद होने की वजह से अनपढ़ और सच्चाइयों और राजनीति से अंजान लोगों को बेवक़ूफ़ बनाते हैं ताकि वे उनके चंगुल से निकलने न पाएँ। वरना मोटी बात है कि हुकूमत के क़ियाम के लिए आपको ईंट और गारे की ज़रूरत नहीं कि आप ज़मीन के टुकड़े ताकते फिरें। इसके लिए आपको ज़मीन की ज़रूरत नहीं है बल्कि एक ऐसी मज़बूत और मुनज़्ज़म जमाअत की ज़रूरत है जो आपके पेशेनज़र हुकूमत को मानने और उसके लिए मर मिटनेवाली हो। अगर आपने ऐसी जमाअत पैदा कर ली तो जहाँ भी वह होगी वहीं वह उस नज़रिये की हुकूमत क़ायम कर लेगी और अगर आपके पास ऐसी जमाअत मौजूद नहीं तो आप एक टुकड़ा छोड़ मुल्कों के मुल्क भी हासिल कर लें तो यह मुमकिन नहीं कि आप अपने इस नज़रिये (दृष्टिकोण) को अमली तौर पर बरपा कर सकें जिसको न तो आप ख़ुद अमलन मानने के लिए तैयार हैं और न ही आपकी पैदा की हुई जमाअत में इसे मानने और बरपा करने की किसी तमन्ना के कोई आसार (लक्ष्य) पाए जाते हैं।

अगर आप सही मानो में इस्लामी निज़ाम के क़ियाम के ख़ाहिशमन्द हैं तो पहले अपने आपको और अपने लोगों के दिलों को बदलिए। वे दिल उन जिस्मों को बदलेंगे जिनमें वे धड़क रहे होंगे, फिर वे जिस्म अपने घरों और ख़ानदानों और बस्तियों और शहरों को बदलेंगे जिनमें वे रहते होंगे, उनकी सीरतें (Characters), उनकी सूरतें, उनके मामलात, ताल्लुक़ात, सियासत, तिजारत, मुआशरत (Society) और तमद्दुन (Culture), हर चीज़ बदलती चली जाएगी उस वक़्त तक कि वे एक ऐसी सोसायटी (Society) और ऐसी जमाअत बन जाएँगे कि उनके अन्दर कोई दूसरे ज़िन्दगी के नज़रिये का चलना अमली तौर पर दूभर और नामुमकिन हो जाएगा और वह इस्लामी निज़ाम वुजूद में आएगा जिसकी हर चीज़ इस्लामी और हर जुज़ ऊपर से नीचे तक इस्लाम होगा। इस्लामी निज़ाम हमेशा इसी तरीक़े (नियम) पर क़ायम हुआ है और आगे भी जब कभी क़ायम होगा, इसी तरह क़ायम होगा। जो लोग इसके अलावा किसी दूसरे नियम को भी इस्लामी निज़ाम के क़ियाम का ज़रिया समझते हैं, वे बड़े धोखे में हैं और हम कोशिश कर रहे हैं कि उनके धोखे को जल्द से जल्द दूर कर दें।

इस तक़रीर के बाद यह बैठक ख़त्म हुई।

चौथा इजलास

सनीचर (Saturday), 26 अप्रैल, 1947 ई०

यह ख़ास इजलास था जो 8 बजे सुबह से 11 बजे दोपहर तक जारी रहा। शामिल होनेवाले लोगों की तादाद 350 से ज़्यादा थी। इस बैठक में पहले जनाब मुहम्मद अब्दुल जब्बार ग़ाज़ी साहब ने, जो जमाअत इस्लामी के बिहार रिलीफ़ कैम्प (पटना) के इंचार्ज हैं, बिहार में जमाअत इस्लामी के इमदादी काम की रिपोर्ट पेश की। चूँकि इस काम की जो रिपोर्ट ग़ाज़ी साहब ने उत्तरी भारत के इजतिमा 9-10 मई 1947 ई० में पेश की वह ज़्यादा तफ़सीली थी इसलिए यह रिपोर्ट यहाँ इस इजतिमा की कारवाई में शामिल करने के बजाय उत्तरी हिन्दुस्तान के इजतिमा की कारवाई ही में शामिल की जाएगी।

इसके बाद वे तजवीज़ें और सवालात पेश हुए जो इस हल्क़े (क्षेत्र) की विभिन्न जमाअतों और अरकान (Members) की तरफ़ से आए हुए थे। तजवीज़ पेश करने के बाद तजवीज़ पेश करनेवाले और दूसरे हज़रात को मौक़ा दिया जाता कि वे इसके मुवाफ़िक़ (Favour) या मुख़ालिफ़ (Against) में जो

कुछ कहना चाहें कहें और फिर मौलाना अमीन अहसन साहब इसके मुताल्लिक़ अपने फ़ैसले या राय का इज़हार करते और हाज़िरीन (उपस्थित लोगों) को फिर मौक़ा दिया जाता कि अगर उनको इतमीनान न हुआ हो या कोई नई उलझन पैदा हो गई हो तो वे उसे बयान करें। लेकिन इसका कोई मौक़ा नहीं आया। चूँकि ज़्यादातर तजवीज़ें और सवालात बिल्कुल आम और वक़्ती अन्दाज़ के थे इसलिए उनमें से वही दर्ज किए जा रहे हैं जो किसी हद तक दूसरों के लिए फ़ायदेमन्द हो सकते हैं—

सवाल 1: हमदर्दों के ज़ेहन में यह ख़्याल बढ़ता जा रहा है कि दीन को क़ायम करने की तहरीक (आन्दोलन) से हमदर्दी काफ़ी है, रुकनियत (Membership) की ज़रूरत नहीं। इसलिए इस ज़ेहनियत (सोच) की फ़ौरी और पूरे तौर पर सुधार की ज़रूरत है।

मौलाना अमीन अहसन साहब : इस बारे में मैं कल रिपोर्टों पर तबसिरेवाली तक़रीर में वज़ाहत कर चुका हूँ। ऐसे हज़रात को यह बड़ी अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि दीने हक़ (सत्य-धर्म) के मग़लूब (पराधीन) हो जाने के बाद उसको क़ायम करने की कोशिश और उसके बरपा हो जाने के बाद उसे क़ायम रखने की इमकानी कोशिश दीन का बुनियादी और सबसे पहला मुतालबा है, इसके बिना न तो हमारे नज़दीक ईमान के कुछ मानी हैं और न इसका कोई वज़न। दीन क़ायम करने और उसके निज़ाम की पायदारी दोनों जमाअती तंज़ीम के लिए ज़रूरी हैं, इसलिए जो लोग इस ग़लतफ़हमी में हैं कि वे बिना जमाअती तंज़ीम के भी दीन में कोई हैसियत रखते हैं, बड़े धोखे में हैं और उन्हें इस धोखे से जल्द से जल्द निकलने की कोशिश करनी चाहिए। हाँ, यह ज़रूरी नहीं कि वे जमाअत इस्लामी में ही लाज़िमी तौर पर शामिल हों। अगर उन्हें हमपर या हमारी जमाअत के निज़ाम पर इतमीनान नहीं है तो उन्हें किसी दूसरी ऐसी जमाअत की तलाश करनी चाहिए जो इस्लामी मक़सद के लिए इस्लामी नियम पर कोशिश कर रही हो। अगर वे कोई ऐसी जमाअत पाएँ और उसके बारे में उनका दिल मुत्मइन हो जाए तो उसमें शामिल हो जाएँ, और अगर वे कोई ऐसी जमाअत न पाएँ या पाएँ और उनका दिल वहाँ भी इत्मीनान हासिल न कर सके तो फिर उन्हें ख़ुद अपने दूसरे हम-ख़्याल लोगों के साथ मिलकर इसी मक़सद के लिए अपना जमाअती निज़ाम बनाने के लिए कोशिश करनी चाहिए, लेकिन यह बात कि न वे किसी दूसरे इस्लामी निज़ामे जमाअत में शामिल हों

और न ख़ुद उसे क़ायम करने की कोशिश करें तो उसके लिए इस्लाम में कोई गुंजाइश नहीं है।

सवाल 2 : हल्क़े (क्षेत्रों) के क़ैय्यिम साहिबान को मआशी (आर्थिक) हैसियत से बेनियाज़ कर दिया जाए ताकि वे लगातार दौरे करके काम की रफ़्तार को तेज़ कर सकें और अपनी पूरी तवज्जोह और मेहनत इसी काम में लगाएँ।

मौलाना अमीन अहसन साहब : इस बारे में ठीक राय तो उसी हाल में क़ायम की जा सकती है कि सब क़ैय्यिम साहिबान से मशविरा कर लिया जाए, चूँकि न तो आम तौर पर अब तक इसकी ज़रूरत पेश आई है और न ही जमाअत के पास अभी इतनी गुंजाइश है। इसलिए यह तजवीज़ अभी वक़्त से पहले भी है और अमल के क़ाबिल भी नहीं।

इस वक़्त हमारा क़ायदा यह है कि अगर हमें किसी क़ैय्यिम के बारे में ऐसी कोई ज़रूरत पेश आई है तो हमने मुमकिन हद तक हल्क़ा की जमाअतों और अरकान की मदद और मशविरे से उसे हल करने की कोशिश की है और अपने मौजूदा हालात और वसाइल (साधनों) के लिहाज़ से अभी कोई दूसरी सूरत अपना भी नहीं सकते।

सवाल 3 : एक यतीमख़ाना खोला जाए जिसके ज़रिया से यतीमों की सही तौर पर देख-भाल हुआ करे। इससे शुरुआती दरसगाह की भी शुरुआत की जा सकती है। ख़र्चे ज़कात की मद से पूरे किए जा सकते हैं।

मौलाना अमीन अहसन साहब : यतीमख़ाने की ज़रूरत असल में उस सोसायटी (Society) में पेश आती है जहाँ इस्लामी ख़ूबियाँ, इनसानी हमदर्दी और ख़ुदातरसी की कमी अपनी इन्तिहा को पहुँच गई हो। लोग अपने पड़ोस में यतीम और बेकस बच्चों को बिलखते देखें मगर टस से मस न हों, बेवाएँ (विधवाएँ) दर-दर की ठोकरें खाती फिरें मगर उनकी बला से, आबादियों की आबादियाँ सूखे और फ़ाक़ों से साफ़ हो जाएँ मगर उन्हें उस वक़्त भी मरनेवालों का ख़ून चूसने की फ़िक्र हो। इस्लामी सोसायटी में ऐसे इदारों (संस्थाओं) की ज़रूरत न पहले कभी पेश आई थी और न इनशा-अल्लाह आगे कभी पेश आएगी, ज़ाहिर है कि जहाँ वक़्त के ख़लीफ़ा तक का यह हाल हो कि क़सम खा ले कि जब तक मुल्क के एक-एक आदमी को पेट भरकर खाना नहीं मिल जाता, ख़ुद पेट भरकर खाना नहीं खाऊँगा और हर मालदार जब तक इत्मीनान न कर ले कि पड़ोस और बस्ती में सब लोग खा-पीकर सो रहे हैं, उसे नींद न आए तो वहाँ

यतीमख़ानों की नौबत कब आएगी।

वाक़िआ यह है कि जिस मुल्क में करोड़ों की तादाद में मुसलमान रह रहे हों वहाँ यतीमख़ानों का पाया जाना मुसलमानों की बेइज़्ज़ती है और उनके लिए बहुत ही शर्म की बात है। यही ज़ेहनियत और ऐसी ही इस्लामी सोसायटी को दोबारा बहाल करने के लिए हम यह कोशिश कर रहे हैं, इसलिए सबसे पहले तो हमारा कोई यतीमख़ाना क़ायम करना ख़ुद अपने काम के ख़िलाफ़ सुबूत होगा और दूसरे यतीमख़ानों में रह और पलकर बच्चों में जो ज़ेहनियत और अख़लाक़ी गिरावट पैदा होती है उससे कहीं बेहतर है कि ख़ुद्दारी और शराफ़त की मौत मर जाएँ।

सवाल 4 : जो जमाअतें रिपोर्टें भेजने में बहुत देर करती हैं या कई-कई महीने भेजती ही नहीं, उनके बारे में कोई मुनासिब क़दम उठाया जाए। रिपोर्ट भेजने का एक वक़्त तय कर दिया जाए जिसके बाद या तो जमाअत तोड़ दी जाए या मक़ामी अमीर को बदल दिया जाए।

मौलाना अमीन अहसन साहब : इस मामले पर पहले ही से ग़ौर किया जा रहा है। इस इजतिमा के बाद, अल्लाह ने चाहा तो, इस बारे में साफ़-साफ़ हिदायतें जारी कर दी जाएँगी।

सवाल 5 : यू०पी० के तीन के बजाय पाँच हल्क़े (क्षेत्र) होने चाहिएँ क्योंकि काम बहुत ज़्यादा हो गया है और तीन हल्क़ों से अब काम नहीं चल रहा है।

मौलाना अमीन अहसन साहब : इस मामले पर भी पहले ही से ग़ौर किया जा रहा है। इस इजितिमा में इसपर यू०पी० के अरकान से मशविरा लिया जाएगा और इजतिमा के बाद सूबा (State) को तीन से ज़्यादा हल्क़ों में बाँटकर हर हल्क़े (क्षेत्र) के लिए अलग क़ैय्यिम मुक़र्रर कर दिया जाएगा।

इसके बाद मौलाना अमीन अहसन साहब ने जमाअत के अरकान (Members) और हमदर्दों के सामने इख़तितामी (अन्तिम) तक़रीर की और इसमें उन्हें ज़रूरी हिदायतें दीं। यह तक़रीर नीचे लिखी जा रही है।

इख़तितामी तक़रीर

रुफ़क़ा-ए-जमाअत!

हमारे इजतिमा की कारवाई, अल्लाह का शुक्र है, ख़ैरो-ख़ूबी के साथ इख़तिताम (अन्त) को पहुँच गई। अब तीसरे पहर हमारी ख़ास बैठक होगी जिसमें यू०पी० के क्षेत्रों की नए सिरे से तक़सीम करनी है और कुछ दूसरी ज़ाब्ते की कारवाइयाँ अंजाम देनी हैं। शाम को मग़रिब के बाद आम जलसा होगा जो हमारे इस इजतिमा के सिलसिले की आख़िरी चीज़ होगी।

कल जो बातें गुज़ारिश की गई हैं और आज जो कुछ कहा गया है वे सब आपके ज़ेहन में बिल्कुल ताज़ा हैं, इसे याद दिलाने की ज़रूरत नहीं है। अब बस मुझे आख़िरी तक़रीर में सिर्फ़ कुछ शक व शुब्हे दूर करने हैं जो मुख़्तलिफ़ वक़्तों में मुख़्तलिफ़ दोस्तों की तरफ़ से ज़ाहिर किए गए हैं।

मैंने कल की तक़रीर शुरू करते हुए अल्लाह के ज़िक्र की अहमियत वाज़ेह की थी और यह कहा था कि हमारे सारे कामों की रूह इसी चीज़ को होना चाहिए। कुछ क़ाबिल दोस्तों की तरफ़ से इसपर यह शक ज़ाहिर किया गया है कि जब हम अल्लाह के ज़िक्र की अहमियत और ज़रूरत इस दर्जा महसूस करते हैं तो आख़िर सूफ़िया-ए-किराम के इख़तियार किए हुए तरीक़ों से हमें क्यों इख़तिलाफ़ है और हम अपने लिट्रेचर में इसपर बार-बार मुख़ालिफ़ाना तंक़ीदें (विरोधात्मक आलोचनाएँ) क्यों करते हैं? जवाब में गुज़ारिश है कि हम सूफ़िया-ए-किराम की जिन चीज़ों की मुख़ालिफ़त करते हैं वे सिर्फ़ दो चीज़ें हैं जिनकी कुरआन और सुन्नत में कोई असल नहीं है, बल्कि उन्होंने अपनी तरफ़ से ईजाद कर ली हैं। बाक़ी रहे वे तरीक़े जिनका किताब और सुन्नत में ज़िक्र है और जो नबियों से साबित हैं, कोई मुसलमान उनसे इख़तिलाफ़ की हिम्मत कैसे कर सकता है और जो लोग हमें उनका मुख़ालिफ़ (विरोधी) समझते हैं वे हक़ीक़त में हमपर एक तोहमत लगाते हैं, जिससे हम बिल्कुल आज़ाद हैं।

हमारे नज़दीक नबी (सल्ल०) की तालीम हर पहलू से क़ामिल (पूर्ण) है।

आप (सल्ल०) ने जिस तरह हमारी ज़िन्दगी के सारे पहलुओं (विभागों) से मुताल्लिक़ ज़रूरी हिदायतें दी हैं उसी तरह तज़किया (शुद्धि) के मुताल्लिक़ भी वे सारी बातें बता दी हैं जो ज़रूरी हैं। तज़किया आप (सल्ल०) की पैग़म्बरी के अव्वलीन मक़सदों में से है। इस वजह से यह ख़्याल करना बड़ी ग़लती है कि नबी (सल्ल०) ने इसके किसी बाब (अध्याय) को भी अधूरा छोड़ा है और इसमें दूसरों की बातें और मशविरे या राय के लिए कोई गुंजाइश है। जो लोग ऐसा ख़्याल करते हैं हमें उनके दुस्साहस पर सख़्त हैरत है। हम इस बारे में किसी बड़े से बड़े शैख़े-वक़्त के तजुर्बे को कोई अहमियत नहीं देते हैं और न किसी बड़े से बड़े पीर के इजतिहादों को कोई अहमियत देते हैं जब तक कि उन तजुर्बों और इजतिहादों की बुनियाद किताब और सुन्नत की किसी असल पर न हो। जो चीज़ें किताब और सुन्नत से साबित हैं आप उनको अपने ऊपर लाज़िम कीजिए, उनके भलाई और बरकत होने में किसी शक और शुब्हे की गुंजाइश नहीं है। बाक़ी जो चीज़ें लोगों ने बिना दलील के गढ़ ली हैं उनमें कोई भलाई और बरकत नहीं है। वे सिर्फ़ दीन के असली मुतालबों से दूर करनेवाली और तज़किया के असल रास्ते से हटा देनेवाली हैं। जहाँ तक बड़े-बड़े सूफ़िया-ए-किराम का ताल्लुक़ है, उनका तरीक़ा किताब व सुन्नत ही का तरीक़ा था। बाद में लोगों ने इस सिलसिले में बहुत-सी चीज़ें गढ़ लीं और उन बुज़ुर्गों की तरफ़ मंसूब कर दीं, हालाँकि उनका दामन इन बिदअतों से बिल्कुल पाक है। जो लोग अंबिया और नेक लोगों के तरीक़े पर ज़िक्र करते हैं, उनके दिल और दिमाग़ हमेशा रौशन रहते हैं और वही लोग किसी जमाअत के अन्दर सबसे अच्छे फूल की हैसियत रखते हैं। इसलिए मैं आपमें से हर शख़्स को इसी मैदान में आगे बढ़ने की दावत देता हूँ। आज जो लोग आपमें से पीछे हैं वे इस चीज़ को अपनाकर आगे हो सकते हैं और जो लोग आगे हैं वे इस चीज़ से मुँह मोड़कर पीछे हट जाएँगे।

इस सिलसिले में एक बात पर तंबीह (चेतावनी) ज़रूरी समझता हूँ वह यह कि क़ुरआन और हदीस और उलमा-ए-हक़ की तसरीहात (व्याख्याओं) से जहाँ तक मैं समझता हूँ वह यह है कि ज़िक्र फ़िक्र के साथ होना चाहिए। सिर्फ़ ज़िक्र जिसके साथ फ़िक्र न हो बिल्कुल फ़ायदेमन्द नहीं है, बल्कि ज़्यादातर हालतों में यह ज़बान का मश्ग़ला बनकर रह जाता है। ज़िक्र के लिए सबसे ज़्यादा अच्छी चीज़ तदब्बुरे क़ुरआन (क़ुरआन पर ग़ौर करना) है और क़ुरआन शरीफ़ पढ़ने के लिए सबसे अच्छा मुनासिब वक़्त तहज्जुद का वक़्त है, वैसे

क़ुरआन पर ग़ौर करना हमेशा फ़ायदेमन्द है। कोई दूसरी चीज़ इसका बदल नहीं हो सकती।

एक दोस्त ने सवाल किया है कि क़ुरआन और हदीस में जो ज़िक्र के कलिमात आए हैं उनके विर्द के मुताल्लिक़ हमारा क्या ख़्याल है। मैं उनके विर्द को सही समझता हूँ और जिन वक़्तों में आदमी के लिए क़ुरआन पर ग़ौर व फ़िक्र करने का मौक़ा न हो उन वक़्तों में उनकी पाबन्दी मुफ़ीद है। इस सिलसिले में असली चीज़ यह है कि आदमी का दिल किसी वक़्त भी ख़ुदा की याद से ग़ाफ़िल न हो। हमेशा ख़ुदा का काम कीजिए। अपने नफ़्स के हुक़ूक़, ख़ानदान के हुक़ूक़, बीवी-बच्चों के हुक़ूक़ और मुल्क और क़ौम के हुक़ूक़ अदा कीजिए और ख़ुदा की ख़ुशनूदी (प्रसन्नता) और उसकी रज़ाजूई के लिए कीजिए, आपका एक-एक पल अल्लाह की याद में गिना जाएगा।

कुछ दोस्त यह कहते हैं कि जमाअत के अन्दर तज़किया की कमी है। हमको इस बात का पूरी सफ़ाई के साथ ख़ुद इक़रार है। हम कोई मुज़क्की जमाअत लेकर नहीं उठे हैं, बल्कि अपने तज़किया की तकमील के लिए उठे हैं। हमारे नज़दीक तज़किया का रास्ता यही है कि हम ख़ुदा के काम करें और उसकी राहों पर चलें। अगर हमारा तज़किया पूरा नहीं है तो इसके मानी यह कभी नहीं हैं कि हमारे सारे काम ग़लत हो गए और हमें दीन का कोई काम करने का हक़ ही बाक़ी नहीं रहा। हम तो यह समझते हैं कि इन कामों के करने की कोशिश ही से हमारा तज़किया होगा न कि उनसे अलग रहकर ख़ानक़ाही तरीक़े पर मुराक़बे और रियाज़तें (तपस्याएँ) करने से। दूसरों के नज़दीक तज़किया का तरीक़ा यह है कि ज़िन्दगी के सारे मामले से अलग होकर अल्लाह का ज़िक्र किया जाए और उसकी तपस्याएँ की जाएँ जो सूफ़िया के तजुर्बे में फ़ायदेमन्द साबित हुई हैं। हमारे नज़दीक तज़किया के लिए इस कोर्स से गुज़रने की ज़रूरत नहीं है। हमने इस चीज़ को नबियों के तरीक़े में नहीं पाया है। नबियों का तरीक़ा तो यह था कि वे अपने वक़्त के आमाल और अक़ाइद का जाइज़ा लेकर उनको ग़लतियों और ख़राबियों से पाक करते थे और उनकी जगह पर लोगों को सही आमाल और अक़ीदे की तालीम देते थे। हमारे नज़दीक तज़किया का यह तरीक़ा सही है और चूँकि हम नबियों के तरीक़े से हटकर कोई काम करना सही नहीं समझते इस वजह से हमने इस तरीक़े को अपनाया है। हम लोगों के अक़ीदे, आमाल और अख़लाक़ की ग़लतियों को क़ुरआन की रौशनी

में वाज़ेह कर रहे हैं और लोगों को इस बात की दावत दे रहे हैं कि जिस दीन को वे मानते हैं उसके मुतालबे और तक़ाज़ों को पूरा करें। जो नेक लोग हमारी इस दावत को क़बूल कर लेते हैं हम उन्हें मुनज़्ज़म कर रहे हैं, ताकि उनकी इजतिमाई (सामूहिक) कोशिश से सोसायटी को बहैसियत मजमूई ग़ैरुल्लाह की इताअत से आज़ाद कराया जाए।

जो लोग यह कहते हैं कि हमारे दावत और तबलीग़ के तरीक़ों में कुछ नयापन है और नबियों का तरीक़ा वह है जो उन्होंने अपनाया है, हमें उनके ख़्याल से इत्तिफ़ाक़ है। हमारे नज़दीक नबियों का तरीक़ा हर पहलू से ज़माने के मेआर से बहुत तरक़्क़ीयाफ़ता होता था। वे अपनी दावत को लोगों तक पहुँचाने के सिलसिले में वही तरीक़े अपनाते थे जो वक़्त की इल्मी तरक़्क़ियों के लिहाज़ से मेआरी होते थे। सिर्फ़ इतना ही उनमें सुधार करते थे जहाँ तक कि उनमें कोई पहलू अख़लाक़ी ऐतिबार से एतिराज़ के क़ाबिल हो। इस वजह से हमारे नज़दीक दावत और तबलीग़ के काम के लिए यह ज़रूरी नहीं है कि आदमी पुराने ही तरीक़ों पर अड़ा रहे, चाहे वे कितने ही नुक़्सानदेह और बेअसर हो चुके हों। इसी तरह हम इस बात को भी सही नहीं समझते कि आदमी दावत के काम में अपने और दावत के वक़ार का लिहाज़ न रखे। अल्लाह तआला का दीन एक बहुत बड़ी नेमत है और इसको दुनिया के लोगों के सामने पेश करना एक बड़ा अज़ीमुश्शान काम है। इस वजह से ज़रूरी है कि इसको उसी तरीक़े पर किया जाए जिस तरीक़े पर बड़े और ऊँचे दर्जे के काम किए जाते हैं। जो लोग यह ख़्याल करते हैं कि दीन की दावत के लिए जोश और जज़्बे का इज़हार सिर्फ़ इसी तरह मुमकिन है कि भिखारियों की तरह हर राह चलते का पीछा किया जाए और उसका पीछा उस वक़्त तक न छोड़ा जाए जब तक कि उसे कुछ सुना न लिया जाए या उससे कुछ सुन न लिया जाए, हमारे नज़दीक उनका ख़्याल ग़लत है। हम इस तरीक़े को दीन और इसकी दावत देनेवाले दोनों की शान के ख़िलाफ़ समझते हैं। आपको मालूम है कि नबी (सल्ल०) ने इस्लाम के शुरू के दौर में अपने ख़ानदान के लोगों को दीन की दावत देने के लिए बाक़ायदा उनको खाने पर बुलाया और जब सब लोग खाना खा चुके तो बाज़ाब्ता उनके सामने आपने एक तक़रीर की। क्या इससे इस बात का सुबूत नहीं मिलता कि दावत के जोश और सरगर्मी के बावजूद नबी (सल्ल०) ने उसी तरीक़े को अपनाया जो आपके ज़माने में इजतिमाई नुक़्त-ए-नज़र (सामाजिक दृष्टि) से एक सबसे

अच्छा तरीक़ा था।

अब मैं अपनी इस तक़रीर को ख़त्म करता हूँ और आख़िर में कल वाली वह बात फिर से याद दिलाता हूँ कि यह वक़्त हमारे लिए फ़ैसले का वक़्त है। अगर आप हालात के मुक़ाबले के लिए तैयार हैं तो इस इजतिमा से पक्के इरादे और हिम्मत की ज़िन्दा रूह लेकर वापस जाइए और जो आदमी जिस जगह है तन-मन-धन से दीने हक़ की कोशिश में लग जाए और इस रास्ते में जो मुशकिल भी पेश आए उसका मुक़ाबला कीजिए। मैं दुआ करता हूँ कि अल्लाह तआला आपकी मदद करे और सीधे रास्ते पर आपको जमाए रखे।

व आख़िरुद्दावाना अनिल हमदु लिल्लाहि रब्बिल आलमीन।

(हमारी आख़िरी दुआ यही है कि हम्द अल्लाह रब्बुल आलमीन के लिए है।)

इस तक़रीर के बाद यह इंजलास ख़त्म हुआ।

पाँचवाँ इजलास

दिन सनीचर (Saturday), 26 अप्रैल, 1947 ई०

यह भी ख़ास इजलास था जो ज़ुह्र की नमाज़ के बाद शुरू हुआ और अस्र तक चलता रहा। इसमें सिर्फ़ जमाअत के अरकान (Members) शामिल हुए और हाज़िर लोगों की तादाद एक सौ के क़रीब थी। इस बैठक में नीचे लिखी बातों पर ग़ौर किया गया—

1. रिपोर्टें (Reports) भेजने का तरीक़ा,
2. रुकनियत की दरख़ास्तें (Membership Applications) भेजने का तरीक़ा,

3. यू०पी० की नई हल्क़ाबन्दी और कुछ और क़ैय्यिमों की नियुक्ति। नम्बर एक और दो के बारे में काफ़ी बात-चीत के बाद बहुत-सी ग़लत-फ़हमियाँ साफ़ कर ली गईं और अरकान को बता दिया गया कि इस बारे में और दूसरे ज़रूरी कामों के मुताल्लिक़ जल्द ही मर्कज़ से तफ़सीली हिदायतें[1] जारी की जाएँगी।

---

1. ये हिदायतें तैयार कर ली गई हैं। अल्लाह ने चाहा तो एक महीने के अन्दर-अन्दर छपवाकर सारी मक़ामी जमाअतों और मुन्फ़रिद अरकान और हल्क़ों के हमदर्दों के पास भेज दी जाएँगी। (हिदायतों का मसविदा पूर्वी पंजाब के फ़साद में नष्ट हो चुका है।)

नम्बर तीन के बारे में काफ़ी ग़ौर व फ़िक्र, बहस और बातचीत के बाद यू०पी० को निम्नलिखित छः हलक़ों में बाँटने पर इत्तिफ़ाक़ हुआ।

(1) हल्क़ा दिल्ली जो सूबा दिल्ली और यू०पी० में से ज़िला आगरा, मथुरा, अलीगढ़, बुलन्दशहर, मेरठ, सहारनपुर, मुज़फ़्फ़र नगर और देहरादून पर मुश्तमिल होगा।

(2) हल्क़ा शाहजहाँपुर जो ज़िला शाहजहाँपुर, पीलीभीत, बरेली, बदायूँ, मुरादाबाद, नैनीताल, बिजनौर, अलमोड़ा और रायपुर की रियासत गढ़वाल पर मुश्तमिल होगा।

(3) हल्क़ा अवध जो अवध यानी ज़िला लखनऊ, बाराबंकी, बहराइच, गोंडा, फ़ैज़ाबाद, सुल्तानपुर, प्रतापगढ़, राय बरेली, उन्नाव, हरदोई, सीतापुर और खीरी पर मुश्तमिल होगा।

(4) हल्क़ा कानपुर जो ज़िला कानपुर, फ़र्रुख़ाबाद, ऐटा, मैनपुरी और इटावा पर मुश्तमिल होगा।

(5) हल्क़ा इलाहाबाद जो ज़िला इलाहाबाद, फ़तहपुर, बान्दा, हमीरपुर और ज़िला जालोन पर मुश्तमिल होगा।

(6) हल्क़ा बनारस जो ज़िला बनारस, जौनपुर, ग़ाज़ीपुर, मिर्ज़ापुर, आज़मगढ़, बलिया, बस्ती और गोरखपुर पर मुश्तमिल होता।

इनमें से—

1. हल्क़ा दिल्ली के लिए ख़ाजा मुहम्मद सिद्दीक़ साहब, कूचा ताराचन्द तिराहा बैरम ख़ाँ, दिल्ली।

2. हल्क़ा शाहजहाँपुर के लिए मौलवी हामिद अली साहब, अरबिक टीचर, इस्लामिया इन्टर कॉलेज, शाहजहाँपुर।

3. हल्क़ा अवध के लिए चौधरी शफ़ी अहमद साहब, ग्राम थलबाड़ा, पोस्ट-कमीला, ज़िला बाराबंकी।

वहीं इजतिमा के मौक़े पर हल्क़ावार क़ैय्यिम मुक़र्रर कर दिए गए, लेकिन हल्क़ा इलाहाबाद और बनारस का मामला वहाँ तय न हो सका इसलिए उनके मुताल्लिक़ यह बता दिया गया कि उनका फ़ैसला मर्कज़ पहुँचकर कर दिया

जाएगा।[1]

इसके बाद यह इजलास अस्र की नमाज़ के लिए बरख़ास्त कर दिया गया और अस्र से मग़रिब तक वक़्फ़ा था।

छठा इजलास

दिन सनीचर (Saturday), 26 अप्रैल, 1947 ई०

यह इजलास आम जलसा के लिए था और इसलिए रखा गया था कि अरकान और हमदर्दों के अलावा आम मुसलमानों, हिन्दुओं और दूसरे ग़ैर-मुस्लिमों को इसमें शरीक होने की दावत दी जाए और उनके सामने इस्लाम की दावत को पेश किया जाए। चुनांचे इस ग़रज़ के लिए कुछ मक़ामी अख़बारों में इजलास का एलान भी छपवाया गया और हर क़ौम के ख़ास-ख़ास लोगों को ख़ास तौर पर भी दावत दी गई। यह इजलास ठीक सात बजे शाम शुरू हुआ और आनेवाले लोगों की तादाद हमारे अन्दाज़े के मुताबिक़ तीन हज़ार के क़रीब थी। जबकि कुछ अख़बारवालों ने इसका अन्दाज़ा पाँच हज़ार और इससे भी ज़्यादा लगाया। इस इजलास में मौलाना अमीन अहसन साहब ने एक छोटी-सी तक़रीर के ज़रिये अपनी दावत को लोगों के सामने पेश किया और साफ़ तौर पर समझाया कि हम क्या चाहते हैं, क्यों चाहते हैं और अपने इस मक़सद को किस तरह हासिल करना चाहते हैं। पूरी तक़रीर बेमिसाल ख़ामोशी में हुई। मौलाना की यह तक़रीर नीचे दर्ज है।

ख़िताबे आम

हम्द व सना के बाद

हाज़िरीन और ख़्वातीन!

इस वक़्त मैं आपके सामने यह बताने की कोशिश करूँगा कि हम इस मुल्क के रहनेवालों और दुनिया के दूसरे इलाक़ों के इनसानों से क्या चाहते हैं, क्यों चाहते हैं और किस तरह चाहते हैं? इन तीनों सवालों के जवाब से वह चीज़ अपने आप बिल्कुल साफ़ होकर सामने आ जाएगी जिसके लिए जमाअत इस्लामी

---

1. इन हल्क़ों के अरकान से दोबारा मशविरा करके उनके चुनाव के मुताबिक़ बनारस हल्के के लिए हाफ़िज़ अबू मुहम्मद इमामुद्दीन साहब, रामनगर, बनारस स्टेट को और हल्क़ा कानपुर के लिए मास्टर जाफ़र अली साहब, 88/431, हुमायूँ बाग़, कानपुर को क़ैय्यिम हल्क़ा मुक़र्रर कर दिया गया।

कोशिश कर रही है और जिसकी दावत लेकर हम आपके इस शहर में जमा हुए हैं।

मैं सबसे पहले इस सवाल का जवाब दूँगा कि हम क्या चाहते हैं? इसका साफ़ और मुख़्तसर जवाब हमारी तरफ़ से यह है कि हम चाहते हैं कि अल्लाह के बन्दे सिर्फ़ अल्लाह ही की बन्दगी करें, उसके सिवा और किसी की बन्दगी न करें। जब हम ख़ालिक़ (पैदा करनेवाले) नहीं बल्कि मख़लूक़ (पैदा किए गए) हैं, रब नहीं बल्कि बन्दे हैं तो हमारे लिए लाज़िम है कि हम अपने पैदा करनेवाले और रब ही की बन्दगी करें और इस बन्दगी में किसी को उसका साझीदार न ठहराएँ। यह एक ऐसी हक़ीक़त है जिसमें किसी शक और इख़्तिलाफ़ की गुंजाइश नहीं है। बन्दगी का मतलब हमारे नज़दीक सिर्फ़ पूजा नहीं है, बल्कि फ़रमाँबरदारी भी लाज़िमी तौर पर इसके अन्दर दाख़िल है। हम सिर्फ़ इस बात की माँग नहीं कर रहे हैं कि आप किसी मस्जिद या मंदिर में जाकर कुछ मन्त्र और श्लोक या कुछ अरबी के कलिमे पढ़कर ख़ुदा को ख़ुश करने की कोशिश करें, बल्कि बन्दगी के मानी ये हैं कि ख़ुदा ही की पूजा भी कीजिए और उसी की इताअत (आज्ञापालन) भी कीजिए, उसी के आगे दण्डवत भी कीजिए और उसी के हुक्म भी मानिए और उसी की इताअत (फ़रमाँबरदारी) के लिए यह भी शर्त है कि आदमी की पूरी ज़िन्दगी बिना किसी फ़र्क़ और तक़सीम के अल्लाह तआला के हुक्मों के मातहत हो, यह नहीं है कि आप ज़िन्दगी के किसी पहलू में तो उसकी आज्ञा का पालन करें और किसी पहलू में उसकी आज्ञापालन से आज़ाद हो जाएँ। मन्दिर और मस्जिद में जाकर तो उसके बन्दे बन जाएँ लेकिन अपने कारोबार में, आर्थिक और राजनैतिक मामलों में उससे बिल्कुल बेताल्लुक़ हो जाएँ। शादी, ब्याह और कफ़न-दफ़न तो ख़ुदा के हुक्मों के मुताबिक़ करें लेकिन ज़िन्दगी के और सारे मामलात अपनी आज़ाद मर्ज़ी से जिस तरह चाहें अंजाम दें। हम इस तरह की इताअत (आज्ञापालन) को इताअत नहीं समझते। हमारे नज़दीक ख़ुदा की फ़रमाँबरदारी के लिए ज़रूरी है कि उसके भेजे हुए नबियों और रसूलों के सभी हुक्मों को पूरा करें और ज़िन्दगी के किसी हिस्से में भी उनके हुक्मों को मानने से इनकार न किया जाए। उन रसूलों के बीच कोई फ़र्क़ भी न किया जाए बल्कि सबको सच्चा माना जाए और सबपर ईमान लाया जाए और अल्लाह के आख़िरी नबी हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) पर इस हैसियत से ईमान लाया जाए कि आप (सल्ल०) अल्लाह के सारे सच्चे नबियों और रसूलों

की तालीमात पूरी करने और उनको दुनिया में फिर से ताज़ा करने के लिए आए हैं।

यह तो वह चीज़ है जो हम चाहते हैं। अब मैं मुख़्तसर तौर पर आपको यह बताऊँगा कि यह हम क्यों चाहते हैं? इसका जवाब, जहाँ तक मुसलमानों का ताल्लुक़ है, यह है कि ये सारी बातें उनके ईमान और इस्लाम के तक़ाज़ों में से हैं। वे जिस शरीअत को मानते हैं उस शरीअत में बन्दगी का मतलब सिर्फ़ पूजा-पाठ ही नहीं है बल्कि लाज़िमी तौर पर इताअत (आज्ञापालन) भी उसमें दाख़िल है। वे जिस क़ुरआन को मानते हैं उसमें ज़िन्दगी के किसी एक ही हिस्से से मुताल्लिक़ हुक्म और हिदायतें नहीं हैं, बल्कि उसके हुक्म और क़ानून हमारी इनफ़िरादी (व्यक्तिगत) और इजतिमाई (सामाजिक) ज़िन्दगी के सारे पहलुओं को घेरे हुए हैं। हम जिस रसूल को मानते हैं उसके मानने के मानी सिर्फ़ ये नहीं हैं कि सिर्फ़ उसका इक़रार कर लिया जाए, बल्कि उसको ऐसा हिदायत देनेवाला जानना जिसकी इताअत वाजिब है, हमारे ईमान का लाज़िमी हिस्सा है। यह माने बिना हममें से कोई आदमी रसूल पर ईमानवाला नहीं हो सकता। इसी तरह हमारे ईमान का यह भी तक़ाज़ा है कि हम सारे नबियों पर ईमान लाएँ और नबी (सल्ल0) को इस हैसियत से मानें कि आप सारे नबियों को सच्चा बतानेवाले और अल्लाह के दीन को पूरा करनेवाले हैं।

इन सच्चाइयों की मौजूदगी में मुसलमानों के लिए तो इस बात की कोई गुंजाइश नहीं कि वे हमारी दावत से मुँह फेर लें। इसके किसी हिस्से से भी मुँह फेरने के मानी ये हैं कि वे अपने दीन की बुनियादों में से किसी बुनियाद से मुँह फेरना चाहते हैं जिसको कोई मुसलमान भी एक पल के लिए जान-बूझकर गवारा नहीं करेगा। अगर मुसलमान आज हमारी बातों पर नाक-भौं चढ़ाते हैं तो इसकी दो ही वजहें हो सकती हैं — या तो वे अपने दीन से बिल्कुल ही जाहिल और बेख़बर हैं, उन्हें सिरे से इस बात का पता ही नहीं है कि उनका दीन उनसे क्या चाहता है और ईमान और इस्लाम के क्या तक़ाज़े हैं, या यह बात है कि वे इन बातों का दीन का हिस्सा होना तो जानते हैं लेकिन अपनी ख़ाहिशों के ऐसे गुलाम हैं कि हक़ को तो छोड़ सकते हैं लेकिन उन ख़ाहिशों को नहीं छोड़ सकते। अगर पहली शक्ल है तो हमारी इस दावत के बाद उनपर हुज्जत पूरी हो जाती है और उनका फ़र्ज़ हो जाता है कि वे या तो इन बातों को मानें या इनके ग़लत होने पर कोई दलील क़ायम करें और अगर दूसरी शक्ल है तो हम उनसे

दरख़ास्त करेंगे कि वे इस्लाम के साथ इस तरह के मुनाफ़िक़ाना ताल्लुक़ से बाज़ आ जाएँ और आख़िरत की पकड़ से बचें। यह तरीक़ा उनको दुनिया में भी ज़लील करेगा और आख़िरत में भी ज़लील करेगा।

रहा दूसरी क़ौमों का मामला तो उनसे हम यह माँग इस वजह से करते हैं कि उनमें से तक़रीबन हर क़ौम को ख़ुदा की ख़ुदाई और उसकी तरफ़ से पैग़म्बरों और रसूलों के आने का इक़रार है। ख़ुदा और रसूल का इनकार करनेवाले कुछ लोग हों तो हों, लेकिन दुनिया ख़ास तौर से हिन्दुस्तान की क़ौमों में से कोई क़ौम भी ख़ुदा या पैग़म्बरों की इनकारी नहीं है। साथ ही इन क़ौमों में ख़ुदा की बन्दगी भी अमली तौर पर मौजूद है। फ़र्क़ जो कुछ है वह यह है कि ख़ुदा, पैग़म्बर और बन्दगी के बारे में उनके विचार इस्लाम के विचारों से कुछ अलग हैं। यह इख़तिलाफ़ अगरचे बहुत अहम है लेकिन इसको ख़ालिस अक़्ली और अमली बुनियादों पर तय किया जा सकता है, शर्त यह है कि इसके लिए सही तौर पर कोशिश की जाए। हमारे ग़ैर-मुस्लिम भाई अगर दीन के मामले को बहुत आसान न समझें, बल्कि ज़िन्दगी के अन्दर उसको वाक़ई अहमियत दें जो हक़ीक़त में उसको हासिल है और उनके अन्दर हक़ पाने का जज़्बा भी हो जो क़ौमी तास्सुबात पर ग़ालिब आ जाए तो हमें उम्मीद है कि वे इस दावत को बिल्कुल अक़्ल और फ़ितरत के मुताबिक़ पाएँगे जिसको हम पेश कर रहे हैं। हमें अच्छी तरह मालूम है कि क़ौमी तास्सुबात की शिद्दत की वजह से हमारे ग़ैर-मुस्लिम भाइयों ने कभी खुले दिल से इस्लाम की दावत पर ग़ौर करने की कोशिश नहीं की जिसका नतीजा यह हुआ कि वे ख़ुदा, पैग़म्बर और बन्दगी के इक़रार के बावजूद भी उन चीज़ों की हक़ीक़त से बहुत दूर हो गए हैं और उनके बिल्कुल अवास्तविक और रस्मी मानी पर मुत्मइन हो गए हैं। आज ख़ुदा की पूजा करने के बावजूद हमारे ग़ैर-मुस्लिम भाई हर क़दम पर ख़ुदा के अलावा दूसरों की बन्दगी और इताअत (आज्ञापालन) में लिप्त हैं। इसकी वजह सिर्फ़ यह है कि ख़ुदा ने अपने नबियों और रसूलों के ज़रिया जो दीन उनपर नाज़िल किया था उस दीन को उन्होंने या तो भुला दिया या बिगाड़ दिया और फिर इसी बिगड़े हुए दीन के साथ उनको ऐसा तास्सुब हो गया है कि अल्लाह के सही दीन को मालूम करने के लिए उन्होंने सिरे से कोई कोशिश ही नहीं की वरना इस ज़ीमन पर दीने-हक़ (सत्य-धर्म) मौजूद है और वह तमाम इनसानों के लिए समान रूप से ख़ुदा का उतारा हुआ और पूरी दुनिया के नबियों और रसूलों का लाया

हुआ दीन है। लेकिन हमारे ग़ैर-मुस्लिम भाइयों ने इसकी क़द्र न पहचानी। हम उसी दीन को उनके सामने उसके असली रूप में पेश करने की कोशिश कर रहे हैं। यह, जैसा कि मैंने कहा, ख़ुदा के भेजे हुए सारे रसूलों का तस्दीक़ करनेवाला और हर नबी के लाए हुए दीन को बिना किसी मिलावट के पेश करनेवाला और ख़ुदाई शरीअत (क़ानून) को पूरा करनेवाला है। यह किसी ख़ास क़ौम का दीन नहीं है, बल्कि तमाम इनसानों का दीन है और हमारे ग़ैर-मुस्लिम भाइयों की यह बड़ी ही बद-क़िस्मती होगी अगर वे मुसलमानों के साथ किसी तास्सुब की वजह से एक ऐसी नेमत की क़द्र करने से इनकार कर दें जिसको ख़ुदा ने उनके लिए भी उसी तरह उतारा है जिस तरह मुसलमानों के लिए उतारा है। यह दीन किसी क़ौम की जायदाद नहीं कि उसके सिवा किसी और का उसमें कोई हिस्सा ही न हो। दुनिया की क़ौमों में से जो क़ौम भी चाहे इसको अपनाकर इसकी दावेदार बन सकती है और इसके साथ ताल्लुक़ का सच्चा वादा असल में उन्हीं लोगों का दावा हो सकता है जो इसको अमली तौर पर अपनाए हुए हों, चाहे वे किसी क़ौम और नस्ल से ताल्लुक़ रखते हों, न कि उन लोगों का जो इसके साथ नाम का रिश्ता तो रखते हों लेकिन इसकी तालीमात से उनका कोई ताल्लुक़ न हो।

हमारे सभी ग़ैर-मुस्लिम भाइयों को इस बात पर ठण्डे दिल से सोचना चाहिए कि अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) का सच्चा और हक़ पर होना ख़ुद उनके इल्म और नज़रवालों के नज़दीक तस्लीम शुदा है। इसी तरह क़ुरआन मजीद का हर तरह रद्दो-बदल से महफ़ूज़ (सुरक्षित) होना भी बिल्कुल साबित शुदा है। इल्मी तहक़ीक़ात चाहे कितनी ही मुख़ालिफ़ाना रंग में की गई हों, इसके ख़िलाफ़ अब तक कोई सुबूत पेश नहीं कर सकी हैं। इन दो क़तई हक़ीक़तों के बाद तो हर मुंसिफ़ मिज़ाज और हक़-परस्त ग़ैर-मुस्लिम का फ़र्ज़ हो जाता है कि वह क़ुरआन और हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की दावत पर ग़ौर करे। हमें यक़ीन है कि अगर किसी व्यक्ति के अन्दर हक़-तल्बी का जज़्बा इतना मज़बूत है कि क़ौमी और नस्ली तास्सुबात उसपर हावी नहीं हो सकते तो वह राहे-हक़ (सत्य-मार्ग) ज़रूर पा लेगा। इसी चीज़ को आम करने और अपने ग़ैर-मुस्लिम भाइयों को हिदायत के इस सरचश्मे (प्रमुख-स्रोत) के क़रीब लाने के लिए हम इस्लाम की तालीम को बिल्कुल सादा और आसान ज़बान में पेश करने की कोशिश कर रहे हैं और अगर उनमें से हक़ का कोई तालिब इस

सिलसिले में हमसे और ज़्यादा मदद चाहेगा तो हमें उसकी मदद करने में बेहद ख़ुशी होगी।

इस मक़सद को हासिल करने के लिए हमारे काम का तरीक़ा यह है कि जो लोग इस दीने हक़ को मानते हैं हम उनको दावत देते हैं कि वे अपना सारा ताल्लुक़ इसी दीन के साथ रखें, इसमें दूसरी चीज़ों को गड्ड-मड्ड न करें। यही दीन उनकी क़ौमियत की बुनियाद हो, यही दीन उनके निज़ामे मआशरत (सामाजिक व्यवस्था) की बुनियाद हो, और यही दीन उनकी राजनैतिक व्यवस्था का केन्द्र हो, इसके सिवा दूसरे सारे क़ौमी और नस्ली सम्बन्ध वे बिल्कुल ख़त्म कर दें और उन तमाम मुतालबों को भी फ़ौरन छोड़ दें जो उन नस्ली और क़ौमी सम्बन्धों से पैदा हुए हैं। हमारी कोशिश इस बात के लिए है कि इस देश में एक ऐसा इंक़िलाब लाया जाए जो ज़िन्दगी के सारे निज़ाम (व्यवस्था) को तौहीद (एकेश्वरवाद), मानव एकता और आख़िरत पर ईमान की बुनियाद पर खड़ा करे और ये सारे नस्ली और क़ौमी हँगामे जो आज इस देश में बरपा हैं और जिनकी मचाई हुई तबाहियाँ नवाखाली, बिहार और पंजाब के चप्पे-चप्पे में हम देख रहे हैं, बिल्कुल मिट जाएँ। अगर इस देश में अलग-अलग क़ौमें हैं और उनमें से हर क़ौम की क़ौमियत को उभारने की कोशिश की गई, जैसा कि जारी है, तो इसका लाज़िमी नतीजा इसी तरह के ख़ूनी दंगे और फ़साद हैं जो आज इस देश में हो रहे हैं। और अगर इन मुख़्तलिफ़ क़ौमों को एक ही देश के वासी होने की बुनियाद पर एक क़ौम बना दिया गया जिसकी कोशिश भी इस देश के बहुत-से लीडर कर रहे हैं तो इसका फल भी इसके सिवा कुछ न होगा कि आप दुनिया की फ़सादी ताक़तों में एक और फ़सादी ताक़त की बढ़ोत्तरी कर देंगे और फिर कभी जब इस दुनिया में कोई बड़ी लड़ाई लड़ी जाएगी तो इस लड़ाई में इंग्लैण्ड, रूस और अमेरिका की तरह आपका यह देश भी दुनिया को बरबाद करने में भाग लेगा। मैं नहीं समझता कि कोई भी नेक-नीयत और इनसाफ़ पसन्द हिन्दू या मुसलमान धरती में इस प्रकार के किसी फ़साद में हिस्सा लेने की कोशिश करेगा। इन सारी मुश्किलों का हल अगर कोई है तो सिर्फ़ इस्लाम की दावत में है जो राजनीति की बुनियाद न तो नस्ली क़ौमियत पर रखता है न वतनी क़ौमियत पर, बल्कि रब की बन्दगी और उसके आज्ञापालन पर रखता है। तमाम इनसानों को एक घराना क़रार देता है और सबको बिना फ़र्क़ और भेद-भाव के ख़ुदा के क़ानून की पैरवी की ओर बुलाता

है। इसलिए हमारे नज़दीक दुनिया में अमन और इनसाफ़ को क़ायम करने की सिर्फ़ एक ही शक्ल है कि इस पूरी ज़मीन के इनसान एक ही ख़ुदा के क़ानून पर अमल करें और एक ही आदम की औलाद की हैसियत से उनकी एक बिरादरी बने। इसी तरह दुनिया में वह निज़ामे हक़ क़ायम हुआ था जिसकी बागडोर हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) और हज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ि०) के हाथों में थी और जिसके बेहतरीन निज़ामे ज़िन्दगी (जीवन-व्यवस्था) होने का इक़रार हमारे बहुत-से नेक नीयत ग़ैर-मुस्लिम भाइयों को भी है। हमारी कोशिश यही है कि हम ख़ालिस इसी उसूल पर एक जमाअत बनाएँ। बिना फ़र्क़ और भेद-भाव के सारे इनसानों को इस जमाअत में शामिल होने की दावत दें और जब ख़ुदा के बन्दों की यह जमाअत इतनी मज़बूत हो जाए कि वह किसी सियासी (राजनैतिक) और इजतिमाई निज़ाम (सामाजिक व्यवस्था) को चला सके तो उस निज़ामे हक़ को अमली तौर पर दुनिया में जारी करें। हमारी इस जमाअत की दावत यह है कि इनसानों ने अपना क़ानून ख़ुद बनाकर जो सरकशी अपनाई है और इससे जो बिगाड़ पैदा हुआ है उससे वे बाज़ आ जाएँ और अमन व इनसाफ़ और रहम व इनसानियत का वह समाज क़ायम करें जिसके क़ायम करने का अल्लाह तआला ने हुक्म दिया है।

मुझे जो अर्ज़ करना था वह मैंने मुख़्तसर तौर पर आपके सामने अर्ज़ कर दिया है। अब यह तक़रीर ख़त्म करता हूँ और अल्लाह से दुआ करता हूँ कि वह हमें सीधा रास्ता दिखाए और उसपर चलने की हिम्मत दे।

इस तक़रीर के बाद यह इजलास ख़त्म हुआ और इजतिमा के ख़ातिमे का एलान कर दिया गया।

पटना के इजतिमा में गाँधीजी के शरीक होने से पैदा होनेवाली ग़लतफ़हमियाँ

हालाँकि हमारे नज़दीक गाँधीजी या किसी दूसरे आदमी का हमारे इजतिमा में आना कोई ख़ास अहमियत नहीं रखता और हम उसका अपनी रूदाद में कहीं ज़िक्र तक भी न करते, लेकिन उनकी इस शिरकत और मौलाना अमीन अहसन साहब इस्लाही की ऊपर बयान की गई तक़रीर की रिपोर्ट कांग्रेसी प्रेस ने ऐसे ग़लत तरीक़े पर की और बाद में मुस्लिम लीगी प्रेस ने सही बात मालूम किए बिना उसे ऐसा बढ़ा-चढ़ाकर बयान किया कि मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम दोनों हल्क़ों में हमारी पोज़ीशन और दावत के बारे में बहुत-सी ग़लतफ़हमियाँ पैदा हो गईं। इसलिए ज़रूरी हो गया कि हम इस सारे वाक़िआ को ठीक-ठीक और बिना किसी काट-छाँट के बयान कर दें ताकि जो लोग सही हालात मालूम न होने की वजह से ग़लतफ़हमी में पड़ गए हैं, उन्हें सही बात मालूम हो जाए और किसी के लिए तहरीक इस्लामी और उसके कारकुनों के बारे में बे-वजह बदगुमानी में पड़े रहने का मौक़ा न रहे। असल वाक़िआत इस तरह हैं—

हमारे सालाना और हलक़ावार इजतिमाआत में आम तौर पर आख़िरी इजलास को आम ख़िताब की ग़रज़ से आम जलसे का रूप दे दिया जाता है और अरकान और हमदर्दों और प्रभावित लोगों के अलावा दूसरे मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम, ख़ास और आम को भी इसमें शरीक होने की दावत दी जाती है, ताकि वे भी हमारी दावत को जानें और अगर ख़ुदा के किसी बन्दे के दिल और दिमाग़ को यह अपील करे तो वह इसपर ग़ौर करे और उसे हक़ जान लेने के बाद उसको क़ायम करने में हमारा साथ दे। चुनांचे पटना के इजतिमा का आख़िरी इजलास भी इसी मक़सद के लिए ख़ास किया गया और आम मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम जनता को अख़बारों के ज़रिये से और मुस्लिम लीग, ख़ाकसार, जमीअतुल-उलमा और काँग्रेस के ज़िम्मेदार लोगों को ख़ास दावतनामे के ज़रिये से इजलास में शरीक होने की दावत दी गई। चूँकि इन दिनों बिहार के दंगों के सिलसिले में

गाँधीजी भी पटना आए हुए थे, इसलिए उनको भी दावतनामा भेजा गया। मगर यह बिल्कुल ग़लत है कि यह रस्मी दावतनामा भेजने के अलावा जमाअत इस्लामी की तरफ़ से गाँधीजी को जलसे में लाने की कोई और कोशिश भी की गई थी, जैसाकि काँग्रेसी अख़बारों का बयान है। फिर जब हमें यह मालूम हुआ कि गाँधीजी जलसे में आना चाहते हैं तो उनको ख़बर कर दी गई— अगरचे यह ख़बर देना उनके मुसलमान साथियों को पसन्द न था—कि आप हमारी दावत क़बूल करें तो हम आपके शुक्रगुज़ार होंगे, लेकिन आने की स्थिति में आपको नीचे लिखी बातों को ध्यान में रखना होगा—

1. अपने लिए इजतिमा में किसी ख़ास बरताव (विशिष्ट व्यवहार) की उम्मीद न रखें क्योंकि हमारे यहाँ का यह तरीक़ा नहीं है।

2. इजतिमा में आपके लिए तक़रीर का कोई मौक़ा न होगा सिवाय इसके कि आप हमारी दावत के बारे में किसी बात की वज़ाहत (स्पष्टीकरण) या तशरीह चाहें।

3. अगर आपके साथ औरतें आएँ जैसा कि अकसर होता है तो उन्हें हमारे क़ायदे के मुताबिक़ परदे में औरतों के साथ बैठना होगा।

4. इजतिमा की कार्रवाई हर हाल में अपने ठीक वक़्त पर शुरू हो जाएगी।

गाँधीजी ने हमारी इन सब बातों को क़बूल कर लिया, और इसके लिए हम उनके शुक्रगुज़ार हैं।

आम जलसे की कार्रवाई मौलाना अमीन अहसन साहब की तक़रीर से ठीक सात बजे शाम शुरू हुई। हाज़िर लोगों की तादाद कोई तीन हज़ार होगी, हालाँकि कुछ पत्रकारों के अन्दाज़े और बयान के मुताबिक़ जलसे में शरीक होनेवाले लोग पाँच हज़ार बल्कि उससे भी ज़्यादा थे। बिहार रिलीफ़ कैम्प के इंचार्ज मुहम्मद अब्दुल जब्बार ग़ाज़ी साहब इजतिमागाह के दरवाज़े पर मौजूद थे और मेहमानों को इजतिमागाह में मुनासिब तरतीब से बिठाते जाते थे। कोई सात-सवा सात बजे के क़रीब गाँधीजी अपनी प्रार्थना की तक़रीर को स्थगित करके जलसे में आए। उनके साथ दो औरतें भी थीं। ग़ाज़ी साहब ने औरतों को औरतों की नशिस्तगाह (बैठक कक्ष) में भेज दिया और गाँधीजी को लाकर स्टेज के क़रीब दरी पर बिठा दिया। तक़रीर लगातार जारी रही और बहुत कम लोगों को मालूम हुआ कि गाँधीजी कब आए और कहाँ बैठे।

मौलाना की तक़रीर कोई 45 मिनट तक जारी रही। इसके बाद ग़ाज़ी

साहब ने लोगों के तशरीफ़ लाने और पूरे नज़्म व ज़ब्त से इजतिमा में शरीक होने और हमारी दावत को सुनने का शुक्रिया अदा किया और इजतिमा के ख़त्म होने का एलान कर दिया। मौलाना अमीन अहसन साहब स्टेज से उतर कर नीचे दरी पर आ गए। पास ही गाँधीजी बैठे थे। ग़ाज़ी साहब ने मौलाना का उनसे तआरुफ़ (परिचय) कराया। गाँधीजी ने मौलाना से कहा कि मैंने आपकी तक़रीर को बड़े ग़ौर से सुना और मुझे इसे सुनकर बड़ी ख़ुशी हुई। इसपर ग़ाज़ी साहब ने उनसे कहा कि गाँधीजी! एक तक़रीर से पूरी बात को समझ पाना बहुत मुश्किल है, इसलिए अगर आप कुछ वक़्त निकालें तो हम अपनी पूरी दावत को आपके सामने पेश करने और समझाने की कोशिश करें और अच्छा यह होगा कि आप हमारे कुछ लिट्रेचर को पढ़ें भी। गाँधीजी ने जवाब दिया कि अब तो मैं दिल्ली जा रहा हूँ, वहाँ कुछ ज़रूरी मामले सामने हैं। वापसी में मैं कुछ वक़्त निकालने की कोशिश करूँगा। इसके बाद उन्हें और उनकी महिला साथियों को उनकी मोटर में सवार कर दिया गया और वे वापस चले गए।

यहाँ यह बयान कर देना भी ज़रूरी है कि जैसी दावत गाँधीजी को दी गई थी वैसी ही दावत मुस्लिम लीग, ख़ाकसार और जमीअतुल उलमा के लीडरों को भी दी गई थी, मगर वे हज़रात नहीं आए और गाँधीजी ने दावत क़बूल कर ली।

इस घटना के अगले ही दिन हमें यह मालूम करके हैरत हुई कि मुस्लिम लीग के असरवाले हल्क़ों में गाँधीजी के इजतिमा में आने पर सख़्त नाराज़गी का इज़हार शुरू हो गया। कहा जाने लगा कि हमें तो पहले ही से शक था कि ये लोग छिपे हुए कांग्रेसी हैं। कुछ जगहों पर जमाअत इस्लामी और उसके कारकुनों को खुलेआम गालियाँ दी जाने लगीं। एक "मुजाहिद इस्लाम" ने तो अपने अख़लाक़ का ऐसा मुज़ाहिरा (प्रदर्शन) किया जिसे देखकर बहुत अफ़सोस हुआ कि मौजूदा क़ौमपरस्ती की तहरीक ने मुसलमानों के अख़लाक़ का किस बुरी तरह दिवाला निकाल दिया है। इन साहब से इजतिमा के इन्तिज़ामात के सिलसिले में कुछ समान बिना किराया के लिया गया था। ये सामान लेते वक़्त हमारे मुंतज़मीन ने बार-बार उनसे कहा था कि आप इसका किराया ले लें मगर उन्होंने किराया लेने से साफ़ इनकार कर दिया था। लेकिन इजतिमा के बाद जब सामान वापस पहुँचाने गए तो उन्होंने ऐसी सख़्त मिज़ाजी के साथ किराया माँगा कि मानो किराए का मुतालबा उनकी तरफ़ से था और हम उसको देने से बचना चाहते थे। किराया तो ख़ैर उनके हाथ पर फ़ौरन रख दिया, मगर यह अन्दाज़ा हो गया कि जब क़ौमपरस्ती लोगों का दीन बन जाती है तो कैसी-कैसी गिरी हुई बद-

अख़लाक़ियाँ उनके लिए असल अख़लाक़ बन जाती हैं।

दूसरी तरफ़ हिन्दू क़ौमपरस्तों को यह बहुत बुरा लगा कि उनका सबसे बड़ा लीडर मुसलमानों की एक जमाअत के जलसे में इस तरह गया कि न तो उसका स्वागत हुआ, न उसे स्टेज पर जगह दी गई और न उससे कोई तक़रीर कराई गई। इसलिए उन्होंने कुछ दूसरे तरीक़ों से दिल की जलन को निकालने की कोशिश की।

दूसरे ही दिन पटना के कांग्रेसी अख़बार सर्च लाइट (Search Light) ने अपने सण्डे एडीशन (Sunday Edition) 27 अप्रैल, 1947 ई0 में इस वाक़िआ को इस तरह छापा कि मानो जमाअत इस्लामी भी उन देशभक्त मुसलमान जमाअतों में से एक है जो लीग के विरोध में कांग्रेस की साथी है और यह इजतिमा इस मक़सद से आयोजित किया गया था कि लोगों के सामने मुस्लिम लीग की मुख़ालिफ़त और उसके नज़रिये (दृष्टिकोण) की खिल्ली उड़ाई जाए। हम इस जसारत (दुस्साहस) पर हैरान हैं कि एक तक़रीर जो कुछ ही घण्टे पहले शहर के हज़ारों आदमियों के सामने की गई थी उसकी इतनी ग़लत और तक़रीर के बयान के उलट रिपोर्ट कैसे बे-धड़क तरीक़े से छाप दी गई। हमें इसपर ग़ुस्सा और शिकायत के बजाय हक़ीक़त में दिली अफ़सोस है कि हमारे देश में नेशनलिज़्म (Nationalism) ने सहाफ़ती अख़लाक़ कितना गिरा कर रख दिया है। न्यूज़ एजेंसीज़ (News Agencies) किस तरह बिना झिझक ग़लत रिपोर्टें दे देती हैं और अख़बार में किस ग़ैर-ज़िम्मेदारी के साथ उनको बेधड़क छाप देते हैं। 'सर्च लाइट' ने अपने ख़ास नामानिगार (संवाददाता) के हवाले से जो रिपोर्ट छापी वह इस तरह है—

> "मुस्लिम लीग का अलग होने का मुतालबा इस्लाम के ख़िलाफ़ है। मुसलमानों के जलसे में मौलाना 'इलाही' (इस्लाही) की तक़रीर।
>
> महात्मा ने "जमीअत इस्लामी" (जमाअत इस्लामी) के जलसे में शामिल होने की वजह से प्रार्थना की तक़रीर छोड़ दी।
>
> पटना 26 अप्रैल, 1947 ई०। पटना में अपने मौजूदा क़याम के बीच महात्मा गाँधी के लिए यह पहला मौक़ा था कि उन्होंने शाम की प्रार्थना के जलसे में कोई तक़रीर न की। प्रार्थना ख़त्म होने के तुरन्त बाद वे मुसलमानों के एक जलसे में शरीक होने के लिए चले गए।
>
> मुसलमानों का यह जलसा 'जमीअत इस्लामी' (जमाअत इस्लामी) के

एहतिमाम के तहत सुल्तानगंज में आयोजित हुआ और इसमें बड़ी तादाद में मुसलमान शरीक हुए।

गाँधीजी को ख़ास तौर पर मौलाना शफ़ी दाऊदी ने शरीक होने की दावत दी थी। जलसे के असल मुक़र्रिर (वक्ता) मौलाना 'अहमद इलाही' (अमीन अहसन इस्लाही) नायब सदर कुल हिन्द 'जमीअत इस्लामी' थे।

मौलाना 'इलाही' ने कहा कि मुसलमानों में से कुछ ज़िद्दी और झगड़ालू क़िस्म के लोग नाम इस्लाम का लेते हैं मगर पोज़ीशन उन्होंने ऐसी ले रखी है जो इस्लाम के ख़िलाफ़ है और उसके उसूलों से मेल नहीं खाती।

दो क़ौमों के नज़रिये (दृष्टिकोण) ने हिन्दुस्तान के मुसलमानों को एक क़ौमी जत्थे की सदारत में मुनज़्ज़म (संगठित) कर दिया है, लेकिन वे इस्लाम के हीरो और उसे ख़तरों से बचाने के ख़ाहिशमन्द भी बनते हैं। इस्लाम ख़ुदा की बन्दगी में दाख़िल होने का नाम है। वह सभी इनसानों को भाई-भाई बन जाने की शिक्षा देता है, और इस तरह से क़ौमियतों की जड़ काट देता है।

मौलाना 'इलाही' ने कहा कि उनका यह दोरुख़ापन देश की मौजूदा सूरते हाल का ज़िम्मेदार है और नवाखाली, बिहार और पंजाब के नाख़ुशगवार वाक़िआत मुसलमानों के इस ग़ैर-इस्लामी लड़ाई की मानसिकता और उसपर उनके अड़े रहने का नतीजा हैं। मौलाना 'इलाही' ने अपनी तक़रीर जारी रखते हुए कहा कि इस रविश के झगड़ालूपन से हटकर मुतालबे जो पेश किए जा रहे हैं वे भी ग़ैर-इस्लामी हैं क्योंकि यह बिल्कुल ही सियासी हुक़ूक़ (राजनैतिक अधिकारों) से संबंधित हैं और इनमें ख़ुदा की ख़ालिस बन्दगी और इनसानों की ख़िदमत के हक़ों के मुतालबे शामिल नहीं हैं। हालाँकि इस्लाम की रूह यही दो चीज़ें हैं।

तक़रीर के बाद मुसलमान लीडर महात्मा जी के पास आए और उनकी राय जानने के लिए उनके आस-पास बैठ गए। गाँधीजी ने मौलाना 'इलाही' से कहा कि उन्हें मौलाना की तक़रीर सुनकर बहुत ख़ुशी हुई।

चूँकि गाँधीजी को जिसका ज़िक्र ऊपर किया जा चुका है जलसे में शामिल होना था इसलिए उन्होंने प्रार्थना में तक़रीर न की और प्रार्थना के बाद लोगों को बताया कि वे आज तक़रीर नहीं करेंगे क्योंकि उन्हें मुसलमानों के एक जलसे में शामिल होने के लिए फ़ौरन जाना है।''

मौलाना की असल तक़रीर जो ऊपर लिखी जा चुकी है उसका मुक़ाबला इस अख़बारी रिपोर्ट से करके देखा जाए तो अन्दाज़ा हो सकता है कि बात को तोड़-मरोड़कर क्या से क्या बना दिया गया है। रिपोर्टर ने अपनी विरोधी जमाअत के ख़िलाफ़ Matter जमा करने की जल्दी में न सिर्फ़ जमाअत और तक़रीर करनेवाले के नामों की तहक़ीक़ की तरफ़ भी ध्यान नहीं दिया, बल्कि इसकी भी परवाह नहीं की कि जो लोग रात ही असल तक़रीर सुन चुके हैं वे इससे क्या असर लेंगे। असल में यह हिन्दुस्तानी लोगों की बड़ी बदक़िस्मती है और यह उनकी अख़लाक़ी और राजनैतिक गिरावट की खुली दलील है कि ऐसे अख़बार, न्यूज़ एजेंसियाँ और नामा निगार (News Reporter) न सिर्फ़ उनमें पनप रहे हैं बल्कि उन्हें मक़बूलियत का दर्जा हासिल है।

प्रेस की सहाफ़ती (पत्रकारिता सम्बन्धी) बद-अख़लाक़ी यहीं ख़त्म नहीं हुई, बल्कि एसोसिएटेड प्रेस आफ़ इण्डिया (Associated Press of India) ने इसी से मिलती-जुलती रिपोर्ट दूसरे अख़बारों को भी भिजवा दी और यह झूठी रिपोर्ट हिन्दुस्तान के सभी कांग्रेसी और लीगी अख़बारों में छपी। जमाअत की तरफ़ से उसी वक़्त एक मुख़्तसर तरदीदी (खण्डन करनेवाला) बयान मौलाना की तक़रीर के सही ख़ुलासे (सारांश) के साथ 'सर्च लाइट', 'लीडर', 'स्टेट्समैन', 'अल-हिलाल', सदा-ए-आम' (पटना), 'क़ौमी आवाज़' और 'ग़रीब की दुनिया' को भेज दिया गया। इनमें से 'सर्च लाइट' ने सिर्फ़ खण्डन मगर मुख़्तसर लफ़्ज़ों में, 'अल-हिलाल' ने खण्डन और तक़रीर का ख़ुलासा और 'ग़रीब की दुनिया' ने खण्डन, तक़रीर का ख़ुलासा और ग़लत रिपोर्ट छप जाने पर खेद प्रकट किया। बाक़ी अख़बारों ने जहाँ तक हमें मालूम है इनमें से कोई चीज़ भी नहीं छापी।

इसके बाद मुस्लिम लीगी अख़बारों ने इसी झूठी रिपोर्ट पर भरोसा करते हुए जमाअत इस्लामी के ख़िलाफ़ लिखना शुरू कर दिया। संक्षेप में, उनके एक अख़बार 'नवा-ए-वक़्त' (लाहौर) ने जिसे लीग के क्षेत्रों में बड़ी इज़्ज़त से देखा जाता है, एक लम्बा नोट अपने 30 अप्रैल, 1947 के अंक में "मौलाना मौदूदी की ख़िदमते बा-बरकत" के उनवान (शीर्षक) से लिखा और उसमें बयान किया कि—

> "मौलाना अबुल आला मौदूदी की जमाअत इस्लामी के एक जलसे में तक़रीर करते हुए मौलाना अमीन अहसन इस्लाही ने फ़रमाया कि मौजूदा मुसीबतों की वजह यह है कि मुसलमान इस्लाम और नेशनलिज़्म (Na-

tionalism) को गड्ड-मड्ड कर रहे हैं जिसका नतीजा नवाखाली, पंजाब और बिहार के अफ़सोसनाक वाक़िआत के रूप में ज़ाहिर हुआ।

मिस्टर गाँधी भी मुंतज़िमीन की ख़ास दावत पर इस जलसे में शरीक हुए।

मौलाना मौदूदी जिन ख़्यालात की मुसलमानों में तबलीग़ कर रहे हैं वे हमें एक मुद्दत से मालूम हैं। हम जानते हैं कि उनकी राय में हिन्दुस्तान के मुसलमान सही मानो में मुसलमान ही नहीं हैं, इसलिए उनकी कोई तहरीक और कोई जमाअत मौलाना की हमदर्दी की हक़दार नहीं। मौलाना के ख़्यालात से यह मालूम होता है कि अगर ये लोग फिर से मुसलमान बनें तो मौलाना की मदद के हक़दार ठहरेंगे, नहीं तो आज के हालात में मौलाना को उनसे कोई हमदर्दी नहीं, न वे उनसे कोई वास्ता रखना चाहते हैं। शायद यह नसीहत मौलाना अपने मुरीदों को भी फ़रमाते हैं।

हमें यह भी मालूम था कि मौलाना मुस्लिम लीग की तहरीक से भी कोई हमदर्दी नहीं रखते और पाकिस्तान को एक नेश्नलिस्ट तहरीक (Nationalist Movement) कहते हुए अपनी ताईद (समर्थन) का हक़दार नहीं समझते।

हमें यह भी मालूम था कि अगरचे मौलाना ख़ुद काफ़ी एहतियात रखते हैं और जहाँ मुस्लिम लीग पर ग़ैर-हमदर्दाना नुक़्ताचीनी (आलोचना) करते हैं वहाँ वे कांग्रेस को भी अच्छा नहीं समझते, मगर उनकी जमाअत का तर्जुमान अख़बार किसी न किसी रंग में लीग की बुराई और मिस्टर गाँधी और कांग्रेस की तारीफ़ ज़रूर करता है। लेकिन हमारा ख़्याल था कि मौलाना से उलझने की कोई ज़रूरत नहीं, वे अपनी समझ के मुताबिक़ एक नेक काम में लगे हैं, ख़ुदा उन्हें कामयाब करे। हम गुनाहगार और सिर्फ़ कलिमा पढ़नेवाले मुसलमानों से जो कुछ हो रहा है वह हम करते रहें और ख़ुदा से दुआ करें कि वह हमें इससे ज़्यादा तौफ़ीक़ दे। मगर इस्लाही साहब की यह तक़रीर आम मुसलमानों के लिए बहुत तकलीफ़देह साबित हुई। यह तो सुना था कि मौलाना मौदूदी भी अब सियासत के मैदान में क़ायदाना शान के साथ उतरनेवाले हैं, लेकिन क्या यह ज़रूरी था कि जमाअत इस्लामी के पहले आम जलसे ही में मिस्टर गाँधी को बुलाकर कहीं और नहीं बल्कि ख़ास बिहार में ही फ़साद और फ़ितने की सारी ज़िम्मेदारी मुसलमानों के सिर थोप दी जाए कि चूँकि वे इस्लाम और नेशनलिज़्म को गड्ड-मड्ड कर रहे हैं (यानी पाकिस्तान की नेश्नलिस्ट

तहरीक को इस्लामी तहरीक समझते हैं) इसलिए उनकी ग़लत ख़्याली का नतीजा नवाखाली, बिहार और पंजाब के अफ़सोसनाक वाक़िआत के रूप में ज़ाहिर हुआ।

इस वक़्त जबकि मुसलमानों की दिली तमन्ना यह है कि मौलाना आज़ाद, ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ, मौलाना हुसैन अहमद मदनी, अल्लामा मशरिक़ी भी हिन्दुस्तान में (इस्लाम न सही कि उसका हिफ़ाज़त करनेवाला अल्लाह है) सिर्फ़ नाम के लिए और कलिमा पढ़नेवाले ही सही बहरहाल मुसलमानों की हिफ़ाज़त के लिए मुसलमानों के मुत्तहिद महाज़ को मज़बूत बनाएँ। क्या मौलाना मौदूदी से यह अदब के साथ की जानेवाली गुज़ारिश गुस्ताख़ी तो न समझी जाएगी कि वे इस नाज़ुक मौक़े पर मुसलमानों में फूट पैदा करने से बचें तो उनपर एहसान करेंगे।''

इस नोट के जवाब में जमाअत इस्लामी की तरफ़ से नीचे लिखा ख़त और उसके साथ मौलाना अहसन साहब की तक़रीर का ख़ुलासा भी नत्थी करके 'नवा-ए-वक़्त' को भेज दिया गया। उनसे दरख़ास्त की गई कि इस ख़त और ख़ुलासे को अपने अख़बार में प्रकाशित कर दें।

दारुल इस्लाम
3 मई, 1947 ई०
मुकर्रमी: अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाह

'नवा-ए-वक़्त' 30 अप्रैल, 1947 के Editorial Note में 'मौलाना मौदूदी की ख़िदमते बा-बरकत में'' शीर्षक से जो कुछ आपने लिखा है वह सरासर कांग्रेसी प्रेस की ग़लत रिपोर्ट पर आधारित है। इन न्यूज़ एजेंसियों ने ग़लत बयानी और ग़ैर-ज़िम्मेदारी को अपनी आदत बना लिया है और आपको इसका रोज़मर्रा का तजुर्बा है, फिर भी आपने उनकी रिपोर्ट को हर्फ़-ब-हर्फ़ सही समझकर उसपर एक नोट लिख डाला। इस ख़त के साथ आपको असल तक़रीर का ख़ुलासा भेजा जा रहा है। इसको अपने अख़बार में छाप दें, इसपर जो राय देना चाहें दे सकते हैं।

इजतिमा में गाँधीजी को कोई ख़ास दावत नहीं दी गई थी, बल्कि जैसा कि हमारा क़ायदा है हम अपने इजतिमा में एक हिस्सा आम ख़िताब का रखते हैं जिसमें अपनी दावत बिना मज़हब-मिल्लत के भेद-भाव के सबके सामने पेश करते हैं। इसमें हम अलग-अलग तरह के ख़्याल रखनेवालों और अलग-अलग

जमाअतों के लोगों को आने की दावत देते हैं। यही कुछ हमने 'इजतिमा पटना' के आम ख़िताब के सिलसिले में किया था। हमारी तरफ़ से लीग, ख़ाकसार, जमीअतुल उलमा और कांग्रेस सबके ज़िम्मेदार लोगों को आने की दावत दी गई थी और इस सिलसिले में गाँधीजी को भी दावतनामा भेजा गया था। मुमकिन है गाँधीजी को किसी ऐसे साहब ने भी ख़ासतौर से कहा हो जो हमारी दावत से दिलचस्पी रखते हों, मगर हमारी जमाअत के किसी कारकुन ने दावत देने में किसी के साथ कोई ख़ास बर्ताव नहीं किया। अब यह और बात है कि गाँधीजी ने हमारे इजतिमा में आकर हमारी बातें सुनने की तकलीफ़ बरदाश्त की और दूसरों ने न की।

गाँधीजी की इस शिर्कत और मौलाना अमीन अहसन साहब इस्लाही की तक़रीर के ग़लत इक़तिबास (उद्धरण) से एसोसिएटेड प्रेस ने जो असर डालना चाहा है वह यह है कि जमाअत इस्लामी भी उन नेशनलिस्ट मुसलमान जमाअतों की सूची में शामिल है जो लीग की मुख़ालिफ़त में कांग्रेस की साथी हैं। लेकिन न हम इस सूची में अपने आपको शामिल कराने के लिए तैयार हैं और न इसको बरदाश्त कर सकते हैं कि ऐसी ग़लत पोज़ीशन को हमसे जोड़ दिया जाए। लीग से अगर हमें कोई इख़तिलाफ़ है तो इस वजह से है कि हम उसको शत प्रतिशत इस्लाम की तरफ़ खींचना चाहते हैं, न कि इस वजह से कि वह हिन्दुस्तानी नेश्नलिज़्म में कांग्रेस का साथ क्यों नहीं देती।

ख़ाकसार
तुफ़ैल मुहम्मद
क़ैय्यिम जमाअत इस्लामी

मगर मौलाना इस्लाही साहब की तक़रीर के ख़ुलासे (सारांश) को 'नवा-ए-वक़्त' ने प्रकाशित नहीं किया और इस ख़त को भी 7 मई के अंक में इस तरह और ऐसी जगह पर छापा कि उन्हीं लोगों की नज़र इसपर पड़ सकती थी जो अख़बार को शुरू से आख़िर तक इशतिहारों समेत पढ़ डालते हैं। और ख़त के उस जुमले को भी निकाल दिया गया जिसमें यह दरख़ास्त की गई थी कि तहरीक के ख़ुलासे को अख़बार में छाप दें और अगर इसपर कोई टिप्पणी करना चाहें तो कर सकते हैं। रही अपनी ग़लत नोट पर माफ़ी माँगने की बात तो आजकल के "मुजाहिदीने मिल्लत" से इस अख़लाक़ की उम्मीद ही नहीं की जा सकती।

—●—